मई, 2024

I.S.S.N. 2457-0494

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन

विधायी विभाग

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

संपादक-मंडल

डा. राजीव मणि,
सचिव, विधायी विभाग

श्री अश्वनी,
संयुक्त सचिव और विधायी परामर्शी,
विधायी विभाग, (विभागाध्यक्ष) वि.सा.प्र.

डा. अनुराग दीप, एसोसिएट प्रोफेसर,
भारतीय विधि संस्थान

डा. आर्येन्दु द्विवेदी,
प्राचार्य, मां वैष्णों देवी ला कालेज
फैजाबाद रोड, चिनहट, लखनऊ, उ.प्र.

श्री कुलदीप चौहान,
चेयरमैन, एस.आर.सी. ला कालेज
129, सेक्टर-1, मंगल पाण्डेय नगर,
मेरठ, उ.प्र.

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय,
सेवानिवृत्त प्रधान संपादक,
वि.सा.प्र.

श्री दयाल चन्द ग्रोवर,
सेवानिवृत्त उप-संपादक,
वि.सा.प्र.

श्री अविनाश शुक्ला,
सेवानिवृत्त प्रधान संपादक

श्री पुण्डरीक शर्मा,
संपादक

उप-संपादक : सर्वश्री महीपाल सिंह, जसवन्त सिंह, जाह्नवी शेखर शर्मा और अमर्त्य हेम विप्र पाण्डेय

परामर्शदाता : सर्वश्री कमला कान्त, असलम खान और अविनाश शुक्ला

ISSN 2457-0494

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ` 195/-

वार्षिक : ` 2,100/-

© **2024 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय**

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा.................................. द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0494

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

मई, 2024 अंक - 5

संपादक

पुंडरीक शर्मा

[2024] 2 उम. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन

विधायी विभाग

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

Online selling of law Patrikas/Books is available on Website → https://bharatkosh.gov.in/product/product

---

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001. दूरभाष **:** 011-23385259, 23387589, फैक्स **:** 011-23387589, ई-मेल **:** am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका प्रतिमाह आपके अवलोकनार्थ उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित प्रतिवेद्य निर्णय, जो न्यायाधीशों, अधिवक्ताओं, विधि छात्रों और अकादमीशियनों के लिए महत्वपूर्ण होते हैं, का प्रकाशन करता है । आप लोगों से प्राप्त सुझावों के आधार पर हमको अपनी पत्रिका की गुणवत्ता सुधारने और अपने कार्य को और अधिक निखारने की शक्ति प्राप्त होती है । कृपया अपने अमूल्य सुझावों से हमें अवगत कराते रहें और हमारा मार्गदर्शन करते रहें ।

फिरौती आदि के लिए व्यपहरण के किसी मामले में किन परिस्थितियों के अधीन अभियुक्त/दोषसिद्ध व्यक्ति को दिए गए दंडादेश को न्यूनीकृत किया जा सकता है । इसी प्रश्न पर विचार करते हुए माननीय उच्चतम न्यायालय ने **नीरज शर्मा** बनाम **छत्तीसगढ़ राज्य** [2024] 2 उम. नि. प. 51 वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि वर्तमान मामले में अभियुक्तों को व्यपहरण, हत्या के प्रयत्न और लूट के अपराध के साथ-साथ फिरौती के लिए व्यपहरण के लिए भी आजीवन कारावास से दंडादिष्ट किया गया है । किन्तु, दंड संहिता की धारा 364-क के अधीन अपराध को सिद्ध करने के लिए केवल व्यपहरण या अपहरण का कृत्य ही नहीं अपितु उसके पश्चात् फिरौती की मांग और इसके साथ उस व्यक्ति के जीवन के खतरे को भी अभियोजन पक्ष द्वारा संदेह के परे साबित किया जाना चाहिए ।

आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरण और सदोष परिरोध के किसी मामले में अपराध को साबित करने हेतु किन-किन कारणों को स्थापित करना अनिवार्य है ? इसी प्रश्न पर विचार करते हुए माननीय उच्चतम न्यायालय ने **एम. विजयकुमार** बनाम **तमिलनाडु राज्य** [2024] 2 उम. नि. प. 110 वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरण के अपराध को सिद्ध करने के लिए अभियुक्त की आपराधिक मन:स्थिति (मेंस रिया) पर विचार किया जाना चाहिए और

ऐसा सक्रिय या प्रत्यक्ष कृत्य द्‌वारा किया गया होना चाहिए जिसके परिणामस्वरूप विपदग्रस्त को कोई विकल्प न देखते हुए आत्महत्या करनी पड़ी हो और जहां अभियोजन पक्ष के साक्ष्य से आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरित करने के लिए अभियुक्त की आपराधिक मन:स्थिति होने का कोई तत्व प्रकट न होता हो और अभियोजन पक्ष द्‌वारा अवलंब लिए गए साक्षियों की परीक्षा तक न कराई गई हो और अभियुक्त को धारा 342 और 365 के अधीन अपराध के लिए पहले ही दोषमुक्त कर दिया गया हो, वहां अपराध को सिद्‌ध करने के अभियोजन पक्ष के भार को अभियुक्त पर स्थानांतरित करने के लिए साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 का प्रयोग नहीं किया जा सकता ।

इस अंक में नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 को भी ज्ञानार्थ प्रकाशित किया जा रहा है । इस संपूर्ण अंक का परिशीलन करने के पश्चात् आपकी बहुमूल्य प्रतिक्रियाएं ईप्सित हैं ।

पुंडरीक शर्मा
संपादक

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

मई, 2024

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
अश्विनी कुमार यादव **बनाम** छत्तीसगढ़ राज्य (देखिए – पृष्ठ संख्या 51)	
एम. विजयकुमार **बनाम** तमिलनाडु राज्य	110
केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो **बनाम** कपिल वधावन और एक अन्य	82
ठाकुर उमेदसिंह नथूसिंह **बनाम** गुजरात राज्य	127
नीरज शर्मा **बनाम** छत्तीसगढ़ राज्य	51
मो. सिद्दीक (मृत) द्वारा विधिक प्रतिनिधि **बनाम** महंत सुरेश दास और अन्य	1141
शाहिद अली **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य	153

संसद् के अधिनियम

नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	1 – 29

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2)

– धारा 167(2) और धारा 173 – व्यतिक्रम जमानत (डिफाल्ट बेल) – हकदारी – प्रत्यर्थी-अभियुक्तों सहित अन्य अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता के अधीन दंडनीय विभिन्न अपराधों और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन अपराध के संबंध में केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत किया जाना – अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप पत्र फाइल किया जाना – विशेष न्यायालय द्वारा अभिकथित अपराधों का संज्ञान लिया जाना और अन्य अभियुक्तों सहित प्रत्यर्थी-अभियुक्तों के विरुद्ध पेशी वारंट जारी किया जाना – केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा फाइल की गई अंतिम रिपोर्ट/आरोप पत्र अपूर्ण होने और कानूनी अवधि के भीतर फाइल न किए जाने के आधार पर प्रत्यर्थी-अभियुक्तों द्वारा व्यतिक्रम जमानत के लिए आवेदन किया जाना – विशेष न्यायालय द्वारा आवेदन मंजूर किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा विशेष न्यायालय के आदेश को कायम रखा जाना – औचित्य – अपराधी को धारा 167 की उपधारा (2) से संलग्न परंतुक का फायदा केवल तब उपलब्ध होगा जब कानूनी अवधि के भीतर आरोप पत्र फाइल न किया हो और उसके विरुद्ध अन्वेषण लंबित हो किंतु जब एक बार आरोप पत्र फाइल कर दिया जाता है तो यह अधिकार समाप्त हो जाता है और आरोप पत्र के साथ प्रस्तुत की गई सामग्री से अपराध के कारित होने के बारे में न्यायालय का समाधान हो जाने और अभिकथित अपराध का संज्ञान ले लेने पर यह अतात्विक है कि अन्य अभियुक्तों

पृष्ठ संख्या

के विरुद्ध आगे अन्वेषण लंबित है या नहीं और आरोप पत्र फाइल करने के समय पर कुछ दस्तावेजों के उपलब्ध न होने से न तो आरोप पत्र दूषित हो जाएगा और न ही ऐसे अपूर्ण आरोप पत्र के आधार पर अभियुक्त व्यतिक्रम जमानत का हकदार हो जाएगा इसलिए प्रत्यर्थी-अभियुक्तों के विरूद्ध आरोप पत्र विहित समय-सीमा के भीतर फाइल कर दिए जाने और विशेष न्यायालय द्वारा अभिकथित अपराधों के संबंध में संज्ञान ले लिए जाने पर अन्य अभियुक्तों के विरूद्ध अन्वेषण लंबित रहने के आधार पर प्रत्यर्थी-अभियुक्तों को व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ा जाना न्यायोचित नहीं कहा जा सकता और निचले न्यायालयों के आदेशों को अपास्त करना उचित होगा ।

केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो बनाम **कपिल वधावन और एक अन्य** 82

– धारा 167(2) और धारा 173 – व्यतिक्रम जमानत (डिफाल्ट बेल) – हकदारी – व्यतिक्रम जमानत का अधिकार न केवल एक कानूनी अधिकार है बल्कि ऐसा अधिकार है जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 से प्राप्त है और यह एक अजेय अधिकार है, तो भी यह चालान या आरोप पत्र फाइल करने से पूर्व ही प्रवर्तनीय है और यदि इसका फायदा नहीं उठाया गया है तो चालान फाइल होने पर यह बना या प्रवर्तनीय नहीं रहता है तथा जब एक बार चालान फाइल कर दिया गया है, तो जमानत देने के प्रश्न पर चालान फाइल करने के पश्चात् अभियुक्त को जमानत देने से संबंधित उपबंधों

पृष्ठ संख्या

के अधीन मामले के गुणागुण के संदर्भ में ही विचार और इसका विनिश्चय किया जाना होगा ।

केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो बनाम **कपिल वधावन और एक अन्य** 82

– धारा 357 – प्रतिकर का आदेश – किसी अपराध के शिकार व्यक्ति को मात्र एक अभियोजन साक्षी नहीं समझा जा सकता और न्यायालय ऐसे व्यक्ति को उस अपराध के कारण पहुंची किसी हानि/क्षति के लिए अभियुक्त से वसूल की गई जुर्माने की रकम में से प्रतिकर के रूप में देने का आदेश करने के लिए सशक्त है और जहां ऐसी स्थिति हो कि सिद्धदोष व्यक्ति जुर्माने की रकम को वहन करने के लिए समर्थ न हो वहां अपराध के शिकार व्यक्ति के विरुद्ध किए गए अपराध से उसकी संरक्षा करने का उत्तरदायित्व राज्य का होने के कारण राज्य की निधियों से राज्य विपदग्रस्त को ऐसे प्रतिकर का संदाय करने के लिए दायी है और विपदग्रस्त की गंभीर स्थिति को ध्यान में रखते हुए उसे एक लाख रुपए के प्रतिकर की बजाय पांच लाख रुपए प्रतिकर के रूप में संदाय करने का आदेश देना उचित होगा ।

नीरज शर्मा बनाम **छत्तीसगढ़ राज्य** 51

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45)

– धारा 302, 304 भाग 1 और 304 भाग 2 [सपठित आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 25/27] – हत्या – दोषसिद्धि – अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा एक

पृष्ठ संख्या

विवाह समारोह के दौरान देसी पिस्तौल से छत की ओर निशाना करके हर्षोल्लास में गोली चलाया जाना – गोली मृतक की गर्दन में जा लगने के कारण उसकी घटनास्थल पर ही मृत्यु हो जाना – अभियुक्त को हत्या के अपराध के लिए धारा 302 और इसके साथ-साथ आयुध अधिनियम की धारा 25/27 के अधीन दोषसिद्ध और आजीवन कारावास से दंडादिष्ट किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किया जाना – संधार्यता – अभिलेख पर ऐसा कोई साक्ष्य न होने जिससे यह पता चलता हो कि अभियुक्त ने विवाह समारोह में सम्मिलित होकर हर्षोल्लास में गोली एकत्रित जनसमूह को निशाना बनाकर चलाई थी या मृतक और अभियुक्त की बीच कोई पूर्व दुश्मनी थी या अभियुक्त का मृतक की मृत्यु कारित करने का कोई आशय था, किंतु उस पर यह ज्ञान होने का अभ्यारोपण किया जा सकता है कि ऐसे कृत्य से मृत्यु हो जाना संभाव्य है, इसलिए मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उसकी धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि को धारा 304 भाग 2 के अधीन दंडनीय अपराध में संपरिवर्तित करना किंतु आयुध अधिनियम के अधीन दोषसिद्धि को कायम रखना उचित होगा ।

शाहिद अली बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** 153

– धारा 302/34, 392, 396 और 397 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 25, 26 और 27] – हत्या, हत्या सहित डकैती और लूट – अभियुक्तों द्वारा अभिकथित रूप से मृतक की जीप भाड़े पर लिया जाना और उसके पश्चात् उसकी हत्या करके जीप को लूट लिया जाना – पारिस्थितिक साक्ष्य – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को धारा 392 के

पृष्ठ संख्या

अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना और धारा 302/34 तथा धारा 396 और 397 के अधीन दंडनीय अपराध से दोषमुक्त किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्तों की दोषमुक्ति को उलटा जाना और उन्हें हत्या और हत्या सहित डकैती के अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाना – संधार्यता – अभियुक्तों के विरुद्ध आरोपों को सिद्ध करने के लिए कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य न होने, अभियोजन का संपूर्ण पक्षकथन पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित होने और अभियुक्तों के विरुद्ध हत्या के आरोप को सिद्ध करने के लिए परिस्थितियों की श्रृंखला का गठन करने हेतु विश्वसनीय, ठोस और भरोसेमंद साक्ष्य प्रस्तुत करने में पूरी तरह असफल रहने, अभियुक्तों की गिरफ्तारी एक अभियुक्त द्वारा पुलिस आफिसर की अभिरक्षा में किए गए प्रकटन कथन के आधार पर होने के कारण साक्ष्य में ग्राह्य न होने, पुलिस द्वारा की गई बरामदगियां संदेहास्पद होने, अभियुक्तों की दोषमुक्ति को दोषसिद्धि में संपरिवर्तित करते हुए उच्च न्यायालय का निर्णय अटकलबाजी और अनुमानों पर आधारित होने तथा अभियुक्तों को धारा 392 के अधीन लूट के अपराध के लिए दोषसिद्ध करते हुए विचारण न्यायालय का निर्णय भी इसी प्रकार के अग्राह्य और अविश्वसनीय साक्ष्य पर आधारित होने के कारण उन्हें दोषमुक्त करना उचित होगा ।

ठाकुर उमेदसिंह नथूसिंह बनाम **गुजरात राज्य** 127

– धारा 306, 342 और 365 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106] – आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरण और सदोष परिरोध – दोषसिद्धि –

पृष्ठ संख्या

मृतक द्वारा अभिकथित रूप से अपीलार्थी से कुछ रकम उधार लिया जाना और उसका प्रतिसंदाय करने में असफल रहने पर अपीलार्थी और अन्य सह-अभियुक्तों द्वारा उसका व्यपहरण किया जाना और सदोष परिरोध में रखा जाना – मृतक द्वारा यह प्रताड़ना सहन न करने के कारण आत्महत्या कर लिया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा सह-अभियुक्तों को दोषमुक्त किया जाना किंतु अपीलार्थी को धारा 306, 342 और 365 के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया जाना – अपील में उच्च न्यायालय द्वारा अपीलार्थी को धारा 342 और 365 के अधीन दंडनीय अपराधों से दोषमुक्त किया जाना किंतु धारा 306 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाना – संधार्यता – आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरण के अपराध को सिद्ध करने के लिए अभियुक्त की आपराधिक मन:स्थिति (मेंस रिया) पर विचार किया जाना चाहिए और ऐसा सक्रिय या प्रत्यक्ष कृत्य द्वारा किया गया होना चाहिए जिसके परिणामस्वरूप विपदग्रस्त ने कोई विकल्प न देखते हुए आत्महत्या करनी पड़ी हो और जहां अभियोजन पक्ष के साक्ष्य से आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरित करने के लिए अभियुक्त की आपराधिक मन:स्थिति होने का कोई तत्व प्रकट न होता हो और अभियोजन पक्ष द्वारा अवलंब लिए गए साक्षियों की परीक्षा तक न कराई गई हो और अभियुक्त को धारा 342 और 365 के अधीन अपराध के लिए पहले ही दोषमुक्त कर दिया गया हो, वहां अपराध को सिद्ध करने के अभियोजन पक्ष के भार को अभियुक्त पर स्थानांतरित करने के लिए साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 का प्रयोग नहीं किया जा सकता, इसलिए विपदग्रस्त

पृष्ठ संख्या

को आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरित करने की बात को सिद्ध करने में पूरी तरह असफल रहने के कारण अभियुक्त की धारा 306 के अधीन दोषसिद्धि को कायम नहीं रखा जा सकता और उसे दोषमुक्त करना उचित होगा ।

एम. विजयकुमार बनाम **तमिलनाडु राज्य** 110

– धारा 307/120-ख, 364, 364-क, 392 और 397 – फिरौती आदि के लिए व्यपहरण – अभियुक्तों द्वारा विपदग्रस्त का व्यपहरण किया जाना और उसकी मृत्यु कारित करने का प्रयत्न और उससे लूट किया जाना – अभियुक्तों को व्यपहरण, हत्या के प्रयत्न और लूट के अपराध के साथ-साथ फिरौती के लिए व्यपहरण के लिए भी आजीवन कारावास से दंडादिष्ट किया जाना – संधार्यता – धारा 364-क के अधीन अपराध को सिद्ध करने के लिए केवल व्यपहरण या अपहरण का कृत्य ही नहीं अपितु उसके पश्चात् फिरौती की मांग और इसके साथ उस व्यक्ति के जीवन के खतरे को भी अभियोजन पक्ष को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करना चाहिए और जहां अभियोजन पक्ष द्वारा विपदग्रस्त के व्यपहरण, लूट और हत्या के प्रयत्न के अपराध को तो युक्तियुक्ति संदेह के परे साबित किया गया हो, किंतु फिरौती की मांग को साबित करने के लिए कतई कोई साक्ष्य न हो, वहां धारा 364-क के अधीन दोषसिद्धि को अपास्त करते हुए उसे धारा 364 में संपरिवर्तित करके दस वर्ष के कारावास से दंडादिष्ट करना उचित होगा ।

नीरज शर्मा बनाम **छत्तीसगढ़ राज्य** 51

[2024] 2 उम. नि. प. 51

नीरज शर्मा

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य

[2019 की दांडिक अपील सं. 1420]

तथा

अश्विनी कुमार यादव

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य

[2024 की दांडिक अपील सं. 36]

3 जनवरी, 2024

न्यायमूर्ति सुधांशु धूलिया और न्यायमूर्ति सतीश चंद्र शर्मा

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 307/120-ख, 364, 364-क, 392 और 397 – फिरौती आदि के लिए व्यपहरण – अभियुक्तों द्वारा विपदग्रस्त का व्यपहरण किया जाना और उसकी मृत्यु कारित करने का प्रयत्न और उससे लूट किया जाना – अभियुक्तों को व्यपहरण, हत्या के प्रयत्न और लूट के अपराध के साथ-साथ फिरौती के लिए व्यपहरण के लिए भी आजीवन कारावास से दंडादिष्ट किया जाना – संधार्यता – धारा 364-क के अधीन अपराध को सिद्ध करने के लिए केवल व्यपहरण या अपहरण का कृत्य ही नहीं अपितु उसके पश्चात् फिरौती की मांग और इसके साथ उस व्यक्ति के जीवन के खतरे को भी अभियोजन पक्ष को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करना चाहिए और जहां अभियोजन पक्ष द्वारा विपदग्रस्त के व्यपहरण, लूट और हत्या के प्रयत्न के अपराध को तो युक्तियुक्ति संदेह के परे साबित किया गया

हो, किंतु फिरौती की मांग को साबित करने के लिए कतई कोई साक्ष्य न हो, वहां धारा 364-क के अधीन दोषसिद्धि को अपास्त करते हुए उसे धारा 364 में संपरिवर्तित करके दस वर्ष के कारावास से दंडादिष्ट करना उचित होगा ।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 357 – प्रतिकर का आदेश – किसी अपराध के शिकार व्यक्ति को मात्र एक अभियोजन साक्षी नहीं समझा जा सकता और न्यायालय ऐसे व्यक्ति को उस अपराध के कारण पहुंची किसी हानि/क्षति के लिए अभियुक्त से वसूल की गई जुर्माने की रकम में से प्रतिकर के रूप में देने का आदेश करने के लिए सशक्त है और जहां ऐसी स्थिति हो कि सिद्धदोष व्यक्ति जुर्माने की रकम को वहन करने के लिए समर्थ न हो वहां अपराध के शिकार व्यक्ति के विरुद्ध किए गए अपराध से उसकी संरक्षा करने का उत्तरदायित्व राज्य का होने के कारण राज्य की निधियों से राज्य विपदग्रस्त को ऐसे प्रतिकर का संदाय करने के लिए दायी है और विपदग्रस्त की गंभीर स्थिति को ध्यान में रखते हुए उसे एक लाख रुपए के प्रतिकर की बजाय पांच लाख रुपए प्रतिकर के रूप में संदाय करने का आदेश देना उचित होगा ।

इन अपीलों के तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थियों ने एक 12वीं कक्षा के विद्यार्थी अरिजीत शर्मा (अभि. सा. 6) का व्यपहरण किया था । व्यपहरण अभिकथित रूप से फिरौती के लिए किया गया था और अभियुक्तों द्वारा विपदग्रस्त की हत्या करने के लिए भी एक कायरतापूर्ण प्रयत्न किया गया था, यद्यपि विपदग्रस्त चमत्कारिक रूप से बच गया था किंतु गंभीर क्षतियां पहुंची थीं जिसके परिणामस्वरूप उसकी दाईं टांग काटनी पड़ी थी । शिकायतकर्ता/विपदग्रस्त सुसंगत समय पर प्रियदर्शनी नगर, दुर्ग में श्रीमती सीमा सिंह (अभि. सा. 7) के मकान में एक सशुल्क अतिथि (पेइंग गेस्ट) के रूप में रह रहा था । अभियुक्त नीरज शर्मा और शिकायतकर्ता एक-दूसरे को जानते थे और तारीख 2 जनवरी, 2013 को दोनों ने एक मोटरसाइकिल पर नेहरू नगर और युगंदर महाविद्यालय, राजनंदगांव जाने का विनिश्चय किया । दोनों अभियुक्तों

अर्थात् नीरज शर्मा और अश्वनी कुमार यादव द्वारा शिकायतकर्ता को उसके अतिथि-गृह से लिया और तीनों मोटरसाइकिल पर "डौंडीलोहारा" नामक स्थान के लिए निकले । रात्रि में लगभग 1.00 बजे जब शिकायतकर्ता पेशाब कर रहा था तब दोनों अभियुक्तों ने मोटरसाइकिल की कलच तार से उसकी गर्दन घोंट कर उसकी हत्या करने का प्रयत्न किया । परिणामस्वरूप, शिकायतकर्ता बेहोश होकर जमीन पर गिर गया और अपीलार्थियों ने यह सोचकर कि शिकायतकर्ता की मृत्यु हो गई है उसके शरीर पर पेट्रोल छिड़का और उसे आग लगा दी । अभियोजन पक्षकथन के अनुसार शरीर को आग लगा दी गई थी किंतु आग लगाने से पूर्व दोनों अभियुक्तों नीरज शर्मा और अश्वनी कुमार यादव द्वारा शिकायतकर्ता/विपदग्रस्त का मोबाइल फोन और 5,000/- रुपए (पांच हजार रुपए केवल) लूट लिए गए थे । तथापि, शिकायतकर्ता की मृत्यु नहीं हुई क्योंकि वह घटनास्थल से बच निकला और बाद में बचकर निकलकर जाते हुए रास्ते में अजनबी व्यक्तियों द्वारा उसे बचा लिया गया । पुलिस ने अपना अन्वेषण पूर्ण करने के पश्चात् तीनों अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 120ख, 364-क, 307, 392/397 और अनुकल्पतः धारा 394 के अधीन अपना आरोप पत्र फाइल किया । विचारण न्यायालय द्वारा सभी तीनों अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 364-क, 307, 120ख, 392, 397 और अनुकल्पतः धारा 394 के अधीन आरोप विरचित किए गए । अभियुक्त-अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 307/120ख, 364-क और 392/397 के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया और अन्य दंडादेशों के साथ-साथ भारतीय दंड संहिता की धारा 364-क के अधीन बड़े अपराध के लिए आजीवन कारावास का दंडादेश दिया गया जिसे उच्च न्यायालय द्वारा भी कायम रखा गया । अभियुक्तों द्वारा विशेष इजाजत लेकर उच्चतम न्यायालय में अपीलें फाइल की गईं । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलों को भागतः मंजूर करते हुए

अभिनिर्धारित – प्रस्तुत मामले में अभियोजन पक्ष द्वारा व्यपहरण और हत्या के प्रयत्न के मामले को भली-भांति सिद्ध किया गया है । इस न्यायालय के लिए अब जो अवधारण करना शेष रह जाता है वह यह है

कि क्या भारतीय दंड संहिता की धारा 364-क के अधीन अपराध बनता है या नहीं ? प्रस्तुत मामले में, धारा 364-क के अधीन मामले को सिद्ध करने के लिए अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किया गया साक्ष्य रवि कुमार द्विवेदी (तीसरा अभियुक्त जिसे विचारण न्यायालय द्वारा दोषमुक्त कर दिया गया था) द्वारा विपदग्रस्त के पिता को 12.00 बजे दोपहर में की गई एक फोन कॉल के रूप में है । यद्यपि अभियोजन पक्षकथन के अनुसार, यह नंबर इस अपील में दो अभियुक्तों में से एक अश्वनी कुमार यादव का पाया गया था किंतु साक्ष्य अधिनियम की धारा 165 के अधीन अपेक्षित अनुसार इस आशय का कोई साक्ष्य न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया है । शिकायतकर्ता द्वारा तारीख 21 मार्च, 2013 को पुलिस के समक्ष किए गए अनुपूरक कथन (उसका पहला कथन तारीख 3 जनवरी, 2013 का है) की थोड़ी ही सुसंगतता है क्योंकि अभि. सा. 6 ने अपनी मुख्य परीक्षा में कभी भी इस बारे में कुछ नहीं कहा था । प्रस्तुत मामले में, अभियोजन पक्ष जिस बात को सिद्ध करने में पूरी तरह असफल रहा है वह है फिरौती की मांग । अभियोजन पक्ष के अनुसार, शिकायतकर्ता के पिता अर्थात् प्रणीत शर्मा (अभि. सा. 5) को एक फोन कॉल प्राप्त हुई थी जिसमें फिरौती की मांग की गई थी । यह पता लगाया गया था कि यह फोन कॉल अभिकथित रूप से रवि कुमार द्विवेदी की थी किंतु फिरौती की मांग को सिद्ध करने के लिए न्यायालय के समक्ष अभिलेख पर कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया था । धारा 364-क के अधीन मामले को सिद्ध करने के लिए पहली शर्त अर्थात् व्यपहरण या अपहरण के साथ-साथ या तो दूसरी या तीसरी शर्त पूरी होनी चाहिए । उक्त उपबंध के अधीन अभियुक्त या तो मृत्यु या आजीवन कारावास से दंडित किए जाने योग्य है और अपराध की गंभीरता पर विचार करते हुए जुर्माने से भी दंडनीय है । प्रस्तुत मामले में, यदि तर्क के लिए यह मान लिया जाए कि धारा 364 के अधीन अपराध सिद्ध किया गया है, तो भी यह न्यायालय नहीं पाता कि यह अपराध धारा 364-क की परिधि के अधीन आएगा । तथापि, धारा 364 की परिधि के अधीन आने के लिए अपहरण से कुछ अधिक

किया जाना आवश्यक है, जो कि फिरौती की मांग है । हम नहीं पाते कि फिरौती की मांग की गई थी, जैसा कि अभियोजन पक्ष द्वारा अभिकथन किया गया है । अभियोजन पक्ष द्वारा इस बाबत कोई उपयुक्त साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है । शिकायतकर्ता (अभि. सा. 6) की मुख्य परीक्षा में फिरौती की मांग की बात नहीं आई है । वह अपहरण, हत्या के प्रयत्न, आदि की अपनी कहानी पर अडिग रहा है किंतु फिरौती की किसी मांग के बारे में कोई कानाफूसी नहीं है, यद्यपि पुलिस के समक्ष अपने अनुपूरक कथन (दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 के अधीन) में उसने तारीख 21 मार्च, 2013 को यह कहा था कि जब दोनों अभियुक्तों द्वारा उसका गला घोंटने का प्रयत्न करने के पश्चात् जब वह जमीन पर पड़ा हुआ था, तब उसने नीरज शर्मा को अश्वनी कुमार यादव को यह कहते हुए सुना था कि वे उन्हें अब उसके पिता से फिरौती की मांग करनी चाहिए । फिरौती की मांग के संबंध में न्यायालय में एकमात्र अभिसाक्ष्य प्रणीत शर्मा (अभि. सा. 5) जो शिकायतकर्ता का पिता है, प्रणीत शर्मा द्वारा दिए गए इस अस्पष्ट कथन के रूप में आया है तारीख 3 जनवरी, 2013 को जब वह अस्पताल में था तब रवि कुमार द्विवेदी नामक व्यक्ति ने फिरौती के रूप में आठ लाख रुपए की मांग की थी । रवि कुमार द्विवेदी, तीसरे अभियुक्त को विचारण न्यायालय द्वारा पहले ही दोषमुक्त कर दिया गया है । विचारण न्यायालय के समक्ष अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 364-क के अधीन दोषसिद्ध किए जाने के लिए कतई कोई साक्ष्य नहीं था । अपीलार्थियों की धारा 364-क के अधीन दोषसिद्धि सिद्ध नहीं होती है और इसलिए अपास्त किए जाने योग्य है । अत: भारतीय दंड संहिता की धारा 364-क के अधीन दोषसिद्धि और आजीवन कारावास के दंडादेश को अपास्त किया जाता है । फिर भी, इस न्यायालय ने यह पाया है कि अभि. सा. 6 का व्यपहरण किया गया था जिससे कि उसकी हत्या की जा सके । अत: यह न्यायालय धारा 364-क के अधीन निकाले गए निष्कर्षों को धारा 364 में संपरिवर्तित करता है । अपीलार्थियों को तद्द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 364-क की बजाय धारा 364 के अधीन दोषसिद्ध किया जाता है । विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों अभियोजन पक्ष

द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 364-क के अधीन प्रस्तुत किए गए साक्ष्य में खामी का पता लगाने में असफल रहे हैं । विचारण न्यायालय तथा अपील न्यायालय ने पूर्ण रूप से अभि. सा. 5 (प्रणीत शर्मा, विपदग्रस्त के पिता) और अभि. सा. 6 उसके पुत्र, विपदग्रस्त के साक्ष्य का अवलंब लिया है । जहां तक अभि. सा. 6 के साक्ष्य का संबंध है, उसने न्यायालय में अभियोजन साक्षी के रूप में फिरौती की किसी मांग का कोई उल्लेख नहीं किया है । तारीख 3 जनवरी, 2013 को कार्यपालक मजिस्ट्रेट को किए गए अपने पहले कथन में फिर से उसने किसी फिरौती का कोई वर्णन नहीं किया था । उसने फिरौती के बारे में वर्णन दो माह पश्चात् तारीख 21 मार्च, 2013 को पुलिस द्वारा अभिलिखित किए गए उसके अनुपूरक कथन में किया था । उच्च न्यायालय ने इस पर विश्वास किया और इसे एक "मृत्युकालिक कथन" कहा । तारीख 21 मार्च, 2013 को पुलिस को किए गए कथन को एक मृत्युकालिक कथन नहीं कहा जा सकता । शिकायतकर्ता/ विपदग्रस्त (अभि. सा. 6) द्वारा तारीख 3 जनवरी, 2013 को किया गया कथन पहले अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 10) को किया गया था । किंतु महत्वपूर्ण रूप से इसे मात्र इस कारण 'एक मृत्युकालिक कथन' नहीं कहा जा सकता कि अभि. सा. 6 की चमत्कारिक रूप से जान बच गई थी । इस कथन को एक मृत्युकालिक कथन के रूप में नहीं पढ़ा जा सकता क्योंकि इस कथन या घोषणा को करने वाला व्यक्ति अंततोगत्वा जीवित बच गया था । तारीख 21 मार्च, 2013 को अन्वेषण अधिकारी को किया गया यह अनुपूरक कथन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 के अधीन कथन से कुछ अधिक नहीं है । (पैरा 12, 13, 15, 16 और 17)

किसी अपराध के विपदग्रस्त को मात्र एक अभियोजन साक्षी के रूप में नहीं समझा जा सकता । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 357(1) न्यायालय को यह आदेश देने के लिए सशक्त करती है कि वसूल की गई जुर्माने की रकम उस व्यक्ति को प्रतिकर के रूप में दी जाए जिसे उस अपराध के कारण कोई हानि हुई है या क्षति कारित हुई है । इस मामले में विपदग्रस्त को 45-48 प्रतिशत दाह-क्षतियां पहुंची थीं और जब

उसकी आयु केवल 18 वर्ष थी, उसकी एक टांग चली गई थी । हो सकता है जब स्थिति की मांग हो कि विपदग्रस्त को प्रतिकर की एक पर्याप्त मात्रा संदत्त की जाए और दोषसिद्ध व्यक्ति उस भार को वहन करने के लिए वित्तीय रूप से उतना समर्थ न हो । अत: ऐसी स्थितियों के लिए, दंड प्रक्रिया संहिता में इस कारण से धारा 357क पुर:स्थापित की गई थी, जहां राज्य की निधियों से विपदग्रस्तों को प्रतिकर का संदाय किया जा सके क्योंकि उस अपराध से विपदग्रस्त की संरक्षा करना राज्य का उत्तरदायित्व था जो अपराध के शिकार व्यक्ति के विरुद्ध कारित किया गया था । प्रस्तुत मामले में, विपदग्रस्त अर्थात् अभि. सा. 6 को गंभीर क्षतियां पहुंची हैं इतना ही नहीं उसकी बायीं टांग को उसके घुटने के नीचे से काटना पड़ा था । परिणामत:, हम निदेश देते हैं कि छत्तीसगढ़ राज्य द्वारा विपदग्रस्त को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 357क के अधीन प्रतिकर के रूप में उच्च न्यायलय द्वारा निदेशित अनुसार एक लाख की बजाय 5,00,000/- रुपए (पांच लाख रुपए केवल) का संदाय किया जाए । यह आज से तीन माह की अवधि के भीतर किया जाएगा । (पैरा 19 और 20)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2023]	2023 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 355 : **बालू सुदाम खाल्दे** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	11
[2023]	(2023) 6 एस. सी. सी. 76 : **रवि धींगरा** बनाम **हरियाणा राज्य** ;	14
[2023]	2023 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1202 : **राजेश** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	14
[2021]	(2021) 9 एस. सी. सी. 59 : **शेख अहमद** बनाम **तेलंगाना राज्य** ;	14, 15
[2015]	(2015) 9 एस. सी. सी. 502 : **विक्रम सिंह** बनाम **भारत संघ** ;	12

[2010]	(2010) 8 एस. सी. सी. 233 : **एस. अरुल राजा** बनाम **तमिलनाडु राज्य** ;	17
[2004]	(2004) 10 एस. सी. सी. 117 : **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **वीर सिंह और अन्य** ;	17
[2002]	(2002) 10 एस. सी. सी. 56 : **श्रवण भादाजी भिरद और अन्य** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	17
[1997]	(1997) 10 एस. सी. सी. 570 : **सुनील कुमार और अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	17
[1996]	(1996) 6 एस. सी. सी. 241 : **जेंटेला विजयवर्धन राव और एक अन्य** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य ।**	17

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2019 की दांडिक अपील सं. 1420 (इसके साथ 2024 की दांडिक अपील सं. 36).

2015 की दांडिक अपील सं. 200 में छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर द्‌वारा तारीख 26 जून, 2018 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्‌ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री समीर श्रीवास्तव, (सुश्री) याशिका वार्ष्णेय, (श्रीमती) प्रियंका श्रीवास्तव, (श्रीमती) संगीता और शिवेन्द्र दीक्षित

प्रत्यर्थी की ओर से श्री सुमीर सोढ़ी और सुश्री भावना मपवाल

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति सुधांशु धूलिया ने दिया ।

न्या. धूलिया – इजाजत दी गई ।

2. ये दोनों अपीलें 2015 की दांडिक अपील सं. 200 में छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर द्‌वारा तारीख 26 जून, 2018 को पारित

किए गए उस एक ही निर्णय और आदेश से उद्भूत हुई हैं जिसके द्वारा वर्तमान अपीलार्थियों की दांडिक अपील खारिज कर दी गई और विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय और आदेश को कायम रखा गया । दोनों अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में 'भारतीय दंड संहिता') की धारा 307/120ख, 364-क और 392/397 के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया और अन्य दंडादेशों के साथ-साथ धारा 364-क के अधीन आजीवन कारावास का दंडादेश भी दिया गया । इस मामले में रवि कुमार द्विवेदी नामक तीसरे अभियुक्त को विचारण न्यायालय द्वारा दोषमुक्त कर दिया गया था ।

3. अभियोजन का पक्षकथन यह है कि अपीलार्थियों ने केपीएस विद्यालय, दुर्ग के एक 12वीं कक्षा के विद्यार्थी अरिजीत शर्मा (अभि. सा. 6) का व्यपहरण किया था । अभियोजन पक्ष के अनुसार, व्यपहरण फिरौती के लिए किया गया था और अभियुक्तों द्वारा विपदग्रस्त की हत्या करने के लिए भी एक कायरतापूर्ण प्रयत्न किया गया था, यद्यपि विपदग्रस्त चमत्कारिक रूप से बच गया था किंतु गंभीर क्षतियां पहुंची थीं जिसके परिणामस्वरूप उसकी दाईं टांग काटनी पड़ी थी । शिकायतकर्ता/ विपदग्रस्त (अभि. सा. 6) सुसंगत समय पर प्रियदर्शनी नगर, दुर्ग में श्रीमती सीमा सिंह (अभि. सा. 7) के मकान में एक सशुल्क अतिथि (पेइंग गेस्ट) के रूप में रह रहा था । अभियुक्त नीरज शर्मा और शिकायतकर्ता एक-दूसरे को जानते थे और तारीख 2 जनवरी, 2013 को दोनों ने एक मोटरसाइकिल पर नेहरू नगर और युगंदर महाविद्यालय, राजनंदगांव जाने का विनिश्चय किया । दोनों अभियुक्तों अर्थात् नीरज शर्मा और अश्वनी कुमार यादव द्वारा शिकायतकर्ता को उसके अतिथि-गृह से लिया और तीनों मोटरसाइकिल पर "डौंडीलोहारा" नामक स्थान के लिए निकले । रात्रि में लगभग 1.00 बजे जब शिकायतकर्ता पेशाब कर रहा था तब दोनों अभियुक्तों ने मोटरसाइकिल की कलच तार से उसकी गर्दन घोंट कर उसकी हत्या करने का प्रयत्न किया । परिणामस्वरूप, शिकायतकर्ता बेहोश होकर जमीन पर गिर गया और अपीलार्थियों ने यह सोचकर कि शिकायतकर्ता की मृत्यु हो गई है उसके शरीर पर पेट्रोल छिड़का और उसे आग लगा दी । अभियोजन पक्षकथन के अनुसार शरीर

को आग लगा दी गई थी किंतु आग लगाने से पूर्व दोनों अभियुक्तों नीरज शर्मा और अश्वनी कुमार यादव द्वारा शिकायतकर्ता/विपदग्रस्त का मोबाइल फोन और 5,000/- रुपए (पांच हजार रुपए केवल) लूट लिए गए थे ।

4. तथापि, शिकायतकर्ता की मृत्यु नहीं हुई क्योंकि वह घटनास्थल से बच निकला और बाद में बचकर निकलकर जाते हुए रास्ते में अजनबी व्यक्तियों द्वारा उसे बचा लिया गया जिन्होंने एक एंबुलेंस बुलाने में उसकी सहायता की और उसे डौंडीलोहारा अस्पताल ले जाया गया जहां से उसे राजनंदगांव और अंततोगत्वा सेक्टर-9 अस्पताल, भिलाई रेफर किया गया । जब वह डौंडीलोहारा अस्पताल में था, तब डाक्टर (अभि. सा. 4), जिसने शिकायतकर्ता का परीक्षण किया था, ने पुलिस को भी सूचित किया और इसलिए तारीख 3 जनवरी, 2013 को एक "देहाती नालिशी"[1] (प्रदर्श पी/12) अभिलिखित की गई । डाक्टर अभि. सा. 4 (जय कुमार चुनरकर), जिसने डौंडीलोहारा अस्पताल में शिकायतकर्ता/विपदग्रस्त का परीक्षण किया था, ने अपनी रिपोर्ट (प्रदर्श पी/09) में निम्नलिखित दाह क्षतियों का उल्लेख किया :–

> "क्षतिग्रस्त ने गहरे चाकलेट रंग का अंडरवियर पहना था, जो जला नहीं था और उसके संपूर्ण शरीर से त्वचा जलने की गंध आ रही थी और वह अर्द्ध-बेहोशी की अवस्था में था । वह बहुत ही बेचैन था और उसने जले हुए स्थानों पर जलन होने की शिकायत की थी ।
>
> क्षतिग्रस्त की दोनों टांगों के सामने और पीछे की ओर दाह-क्षतियां पाई गई थीं और उन स्थानों की त्वचा सतह से फूली हुई थी । उसके पेट के निचले भाग पर दाह-क्षतियां और बहुत-सारे जलन वाले फफोले थे और कमर पर भी दाह-क्षति थी तथा छाती के दाईं तरफ ऊपरी भाग पर दाह-क्षति थी और क्षतिग्रस्त की गर्दन के सामने के भाग पर एक लकीर जैसा बांधने का चिह्न था जो

---

[1] देहाती नालिशी कुछ जीरो प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के समान होती है ।

हल्के लाल रंग का था और इसकी लंबाई 12 से 14 सें. मी. थी और उसकी गर्दन के सामने के भाग पर खरोंच की क्षतियां पाई गई थीं जिनका आकार क्रमश: 3 × 2, 2 × 2 और 2 × 2 सें. मी. था । इस संबंध में उसने अपनी रिपोर्ट (प्रदर्श पी-9) प्रस्तुत की थी ।"

विपदग्रस्त के शरीर पर प्रथम डिग्री की दाह-क्षतियां थीं क्योंकि उसके शरीर का जला हुआ हिस्सा 45 प्रतिशत से 48 प्रतिशत था । विपदग्रस्त (अभि. सा. 6) का कथन तारीख 4 जनवरी, 2013 को 12.00 बजे एक नायब तहसीलदार के समक्ष अभिलिखित किया गया था । वे संपूर्ण परिस्थितियां जिनमें यह कथन अभिलिखित किया गया था, इसे एक महत्वपूर्ण साक्ष्य बनाती हैं । हमें यह भी स्मरण रखना होगा कि यह उस 18 वर्ष के लड़के द्वारा दिया गया कथन है जो एक ऐसी भयावह घटना से निकला ही था जिसमें उसकी जान लेने का एक कायरतापूर्ण प्रयत्न किया गया था । वह गंभीर रूप से क्षतिग्रस्त भी था और कार्यपालक मजिस्ट्रेट के समक्ष कथन करने से पूर्व स्पष्ट रूप से किसी से परामर्श नहीं किया गया था । इस कथन की सत्यता संदेहजनक नहीं होनी चाहिए । उसने कथन किया था कि कैसे उसे नीरज शर्मा और अश्वनी कुमार द्वारा एक मोटरसाइकिल पर ले जाया गया और कैसे उसे रास्ते में शराब पीने के लिए कहा गया और फिर रात्रि में 1.00 बजे कैसे दोनों अभियुक्तों ने पहले तो कलच तार से उसका गला घोंटने की कोशिश की और बाद में यह सोचकर उसके शरीर को आग लगा दी कि वह मर गया है । यहां यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि फिरौती की किसी मांग या बातचीत का यहां कोई वर्णन नहीं है ।

5. पुलिस ने अपना अन्वेषण पूर्ण करने के पश्चात् तीनों अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 120ख, 364-क, 307, 392/397 और अनुकल्पत: धारा 394 के अधीन अपना आरोप पत्र फाइल किया । चूंकि यह अपराध सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय था, इसलिए इसे सेशन न्यायालय को सुपुर्द किया गया जहां से यह प्रथम अपर सेशन न्यायाधीश, बालोद के पास गया जिसने अंततोगत्वा तारीख 15 अप्रैल, 2013 को सभी तीनों अभियुक्तों अर्थात् नीरज शर्मा, अश्वनी कुमार यादव और रवि कुमार द्विवेदी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की

धारा 364-क, 307, 120ख, 392, 397 और अनुकल्पत: धारा 394 के अधीन आरोप विरचित किए । अभियोजन पक्ष ने कुल 11 साक्षियों की परीक्षा की और न्यायालय के समक्ष कई प्रदर्श प्रस्तुत किए । अभियुक्तों ने दोषी न होने का अभिवाक् किया और विचारण का सामना किया । विचारण न्यायालय ने तारीख 3 जनवरी, 2015 को अपना निर्णय पारित किया जिसके द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 307/120ख, 364-क और 392/397 के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया और अन्य दंडादेशों के साथ-साथ भारतीय दंड संहिता की धारा 364-क के अधीन बड़े अपराध के लिए आजीवन कारावास का दंडादेश दिया गया जिसे उच्च न्यायालय द्वारा भी कायम रखा गया ।

6. विशेष इजाजत याचिका में तारीख 30 नवंबर, 2018 को सूचना जारी करते समय इस न्यायालय ने नीरज शर्मा के मामले में वास्तव में भारतीय दंड संहिता की धारा 120ख के साथ पठित धारा 307 के साथ-साथ धारा 397 के साथ पठित धारा 392 के अधीन उसकी दोषसिद्धि की पुष्टि करते हुए धारा 364-क के अधीन उसकी दोषसिद्धि के लिए सीमित सूचना जारी की । उक्त आदेश नीचे उद्धृत किया जाता है :–

> "हम भारतीय दंड संहिता की धारा 120(ख) के साथ पठित धारा 307 और भारतीय दंड संहिता की धारा 397 के साथ पठित धारा 392 के अधीन याची की दोषसिद्धि में हस्तक्षेप करने के लिए कोई उचित आधार नहीं पाते हैं । धारा 364-क के अधीन दोषसिद्धि के लिए सीमित सूचना जारी की जाए जिसका आठ सप्ताह के भीतर उत्तर दिया जाए ।"

फिर भी, इस न्यायालय द्वारा अश्वनी कुमार यादव के मामले में सूचना जारी करते समय, जो तारीख 2 अगस्त, 2021 को जारी की गई थी, इस प्रकार का कोई मत व्यक्त नहीं किया गया ।

जहां तक हत्या के प्रयत्न और लूट का संबंध है, हमारे मस्तिष्क में कोई संदेह नहीं है कि अभियोजन पक्ष अपने पक्षकथन को युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध करने में सफल रहा है । साथ ही साथ, हमें भारतीय

दंड संहिता की धारा 364-क के अधीन अभियुक्तों की दोषसिद्धि के बारे में संदेह है । वास्तव में, इस न्यायालय के मस्तिष्क में कम से कम नीरज शर्मा के मामले में तो संदेह था क्योंकि इस न्यायालय ने मामले में केवल धारा 364-क के लागू होने के बारे में सीमित सूचना जारी की थी ।

7. इस मामले में सबसे महत्वपूर्ण साक्षी स्वयं शिकायतकर्ता है । वह एक क्षतिग्रस्त साक्षी भी है । घटना में उसे पहुंची क्षतियों का मिलान अभियोजन के पक्षकथन से होता है । दोनों अभियुक्तों द्वारा विपदग्रस्त के शरीर को जलाकर व्ययन करने का प्रयत्न किया था । उसकी दोनों टांगों पर दाह-क्षतियां थीं । उसकी गर्दन पर बांधने का गहरा चिह्न भी महत्वपूर्ण है क्योंकि अभियोजन का यह पक्षकथन है कि दोनों अभियुक्तों ने कलच तार से उसका गला घोंटने की कोशिश की थी । यह कहना होगा कि विपदग्रस्त की हालत खतरनाक थी और उसने कार्यपालक मजिस्ट्रेट, बी. के. वर्मा जो नायब तहसीलदार और कार्यपालक मजिस्ट्रेट, दुर्ग थे, के समक्ष कथन किया था । उसने कहा था :–

> "सायंकाल में 6.30-7.00 बजे नीरज शर्मा और अश्वनी यादव मेरे पास आए और कहा कि युगंदर महाविद्यालय, राजनंदगांव चलते हैं । मैंने युगंदर महाविद्यालय नहीं देखा था इसलिए मैं महाविद्यालय देखने के लिए मोटरसाइकिल पर उनके साथ चला गया ।"

उसने यह भी कहा :–

> "3 जनवरी की रात्रि में 1.30 बजे बालोद की तरफ एक संयंत्र है, जिसका मैं नाम नहीं जानता, उसके निकट नीरज शर्मा और अश्वनी यादव ने पहले तो कलच तार से मेरा गला घोंटा, मेरी सांस रुक गई जिस पर उन्होंने सोचा कि मैं मर गया हूं, फिर पेट्रोल छिड़क कर आग लगा दी ।"

8. इसके अतिरिक्त, घटना की सत्यता को संतोष शुक्ला (अभि. सा. 1) के अभिसाक्ष्य द्वारा भी सिद्ध किया गया है, जो भिलाई संयंत्र में काम करने वाला वह पहला व्यक्ति था जिसने शिकायतकर्ता को जली

हुई हालत में देखा था और उससे पूछा था कि उसे किस कारण से क्षतियां पहुंची हैं और उसे यह बताया गया था कि उसके मित्रों द्‌वारा ये क्षतियां कारित की गई थीं और उनके द्‌वारा उसका धन भी लूट लिया गया था । शिकायतकर्ता का सबसे पहले चिकित्सीय परीक्षण अभि. सा. 4, डा. जयकुमार चुनरकर द्‌वारा डौंडीलोहारा अस्पताल में किया गया था । उसने उसके शरीर पर पहुंची क्षतियों को अभिलिखित किया था जिनको हमने पहले ही ऊपर निर्दिष्ट किया है । प्रणीत शर्मा (अभि. सा. 5) शिकायतकर्ता का पिता है जिसने कथन किया था कि तारीख 3 जनवरी, 2013 की मध्य रात्रि में अमन सिंह द्‌वारा उसे सूचित किया गया कि उसका पुत्र अरिजीत शर्मा ठीक नहीं है और उसके पुत्र को सेक्टर-9 अस्पताल, भिलाई में भर्ती किया गया है और जब वह अस्पताल पहुंचा, तो उसने अपने पुत्र को जली हुई हालत और गंभीर पीड़ा में देखा । उसके पुत्र ने उसे सूचित किया कि दोनों अपीलार्थियों ने उसे जान से मारने की कोशिश की थी । उसने यह भी कहा कि तारीख 3 जनवरी, 2013 को दोपहर 12.00 बजे उसे मोबाइल संख्यांक 7869590607 से एक फोन कॉल प्राप्त हुई जिसमें कॉल करने वाले ने उसके पुत्र अरिजीत शर्मा को छोड़ने के लिए आठ लाख रुपए की राशि की फिरौती के रूप में मांग की । जब उसने कहा कि उसका पुत्र तो अस्पताल में उसके साथ है और वह कॉल करने वाले के विरुद्‌ध शिकायत फाइल करेगा तो फोन काट दिया गया । तथापि, इस साक्षी (अभि. सा. 5), जो शिकायतकर्ता/ क्षतिग्रस्त का पिता है, के फिरौती की मांग करने के संबंध में कथन के इस भाग को किसी भी रीति में सिद्‌ध नहीं किया गया है ।

शिकायतकर्ता की स्वयं अभि. सा. 6 के रूप में परीक्षा की गई थी, जिसने अपनी मुख्य परीक्षा में कहा था कि वह भिलाई में सशुल्क अतिथि के रूप में रहता था और तारीख 2 जनवरी, 2013 को अभियुक्त नीरज शर्मा, जो उसका परिचित है, ने उसके मोबाइल फोन पर कॉल की और उसे नेहरू नगर, भिलाई आने के लिए कहा, जहां से उन्हें मोटरसाइकिल पर कहीं और जाना था । अपनी मकान मालकिन को सूचित करने के पश्चात् यह नेहरू नगर में नीरज शर्मा से मिलने के लिए गया । नीरज शर्मा कुछ मिनटों के पश्चात् एक मोटरसाइकिल पर

पहुंचा जिसके पीछे अश्वनी कुमार यादव बैठा हुआ था। तीनों इस मोटरसाइकिल पर युगंदर महाविद्यालय की ओर गए और रास्ते में उन्होंने शराब भी पी । रास्ते में वे नीरज शर्मा के भाई राहुल से भी मिले । पिछली मध्य रात्रि को उसने नीरज शर्मा को यान को रोकने के लिए अनुरोध किया क्योंकि वह पेशाब करना चाहता था और जब शिकायतकर्ता नीरज शर्मा से बात कर रहा था, तो अन्य अभियुक्त अश्वनी कुमार पीछे से आया और उसकी गर्दन के चारों ओर कलच की तार कस दी और फिर अश्वनी कुमार यादव और नीरज शर्मा दोनों ने कलच तार से उसका गल घोंटने का प्रयत्न किया । परिणामस्वरूप, वह अर्ध-बेहोश होकर नीचे गिर गया और दोनों हमलावरों ने उसे मृत समझकर फिर उस पर पेट्रोल छिड़क दिया । उसने नीरज शर्मा और अश्वनी कुमार को उनकी मोटरसाइकिल से पेट्रोल लाने के लिए कहते हुए भी सुना था । नीरज शर्मा ने उसके बटुए से पांच हजार रुपए और उसका सेल फोन भी निकाल लिया । इसके बाद उस पर पेट्रोल छिड़का गया और फिर उसे आग लगा दी गई । वह जैसे-तैसे बचा और निकटवर्ती भिलाई संयंत्र पहुंचा और उसने गार्ड को घटना के बारे में बताया तथा उसे अपने मकान मालिक का नंबर दिया और इसके बाद एंबुलेंस बुलाई गई और उसे अस्पताल भेजा गया ।

प्रतिरक्षा पक्ष के काउंसेल द्वारा इस साक्षी की विस्तार से प्रतिपरीक्षा की गई थी किंतु ऐसा कुछ निकलकर नहीं आया जिससे उसके कथनों पर कोई संदेह उत्पन्न होता हो ।

9. अभि. सा. 7 मकान मालकिन सीमा सिंह है, जहां शिकायतकर्ता एक सशुल्क अतिथि के रूप में रह रहा था और इस साक्षी ने भी अभियुक्तों के विरुद्ध साक्ष्य दिया । उसने कहा कि शिकायतकर्ता ने उसे यह सूचित किया था कि उसे तारीख 2 जनवरी, 2013 को अपने मित्रों के साथ एक अन्य स्थान की ओर जाना है जिसके लिए उसने उसकी अनुज्ञा चाही थी ।

पुलिस द्वारा अभियुक्तों में से एक अश्वनी कुमार यादव के मोबाइल फोन का पता लगाया गया था । पुलिस ने अपने अन्वेषण के

दौरान तारीख 3 जनवरी, 2013 को नीरज शर्मा और अश्वनी कुमार यादव को गिरफ्तार किया और उनकी हीरो होंडा मोटरसाइकिल और मोबाइल फोन बरामद किए ।

जहां तक व्यपहरण और हत्या के प्रयत्न का संबंध है, अभियोजन पक्ष के वृत्तांत पर संदेह करना मुश्किल है । अभियोजन पक्ष अपने पक्षकथन को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने में समर्थ रहा है । सबसे महत्वपूर्ण साक्षी यहां स्वयं शिकायतकर्ता है, जो 18 वर्ष का लड़का है और सुसंगत समय पर भिलाई के निकट एक महाविद्यालय में पढ़ रहा था, जिसने अपने मित्रों पर यह न जानते हुए भरोसा किया कि उसे उसके मित्रों द्वारा प्रवंचनापूर्वक ले जाया जा रहा है और जिन्होंने उसकी हत्या की योजना बनाई थी । अभि. सा. 6 एक क्षतिग्रस्त साक्षी भी है ।

10. पहला डाक्टर जिसने अभि. सा. 6 का परीक्षण किया था, वह डा. जयकुमार चुनरकर (अभि. सा. 4) था, जो बालोद स्थित जिला अस्पताल में कार्य करता था । उसने तारीख 3 जनवरी, 2013 को भौर में क्षतिग्रस्त शिकायतकर्ता का परीक्षण किया था । अभि. सा. 6 की क्षतियों और सामान्य हालत के बारे में उसका अवलोकन निम्नलिखित है :–

> "राय – रोगी के शरीर पर दाह-क्षतियां पाई गई थीं, जो डर्मेल पीड प्रकृति की दाह-क्षतियां थीं जिनसे प्रथम डिग्री की दाह-क्षतियां अभिव्यक्त होता है । जला हुआ भाग लगभग 45 से 48 प्रतिशत था । प्रदर्श पी-9 मेरे द्वारा दी गई परीक्षण रिपोर्ट है, जिसके ए से ए भाग पर मेरे हस्ताक्षर हैं ।
>
> उसी तारीख को थाना भारसाधक अधिकारी, डौंडीलोहारा से क्षतिग्रस्त अरिजीत शर्मा का कथन लेखबद्ध करने के लिए ज्ञापन प्राप्त होने पर मैंने यह राय व्यक्त की थी कि 'क्षतिग्रस्त अरिजीत शर्मा तारीख 3 जनवरी, 2013 को प्रात: 4.30 बजे कथन करने की हालत में नहीं है' ।"

क्षतिग्रस्त को फिर भिलाई अस्पताल रेफर किया गया जहां डा. उदय

(अभि. सा. 9) द्वारा उसका परीक्षण किया गया । उसका अवलोकन निम्नलिखित है :–

> "परीक्षण करने पर, मैंने पाया कि रोगी की दोनों टांगें ऊपर से लेकर नीचे तक गहराई तक जली हुई थीं और उदर तथा दोनों हाथों पर भी कुछ फफोले थे, जो 40 से 45 प्रतिशत तक जले हुए थे । उसकी गर्दन पर चिह्न था, जो अधिसंभाव्यत: कलच तार के दबाव के कारण हुए था । मेरे अस्पताल में लगभग 60 दिनों तक उसका उपचार चला, जिसमें दो बार उसकी शल्य-क्रिया की गई, पहली शल्य-क्रिया तारीख 15 जनवरी, 2013 को की गई थी, जिसके दौरान हमें बाध्य होकर घुटने से नीचे उसकी दाईं टांग काटनी पड़ी जो बहुत अधिक जल जाने के कारण सड़ गई थी ।
>
> दूसरी शल्य-क्रिया तारीख 12 फरवरी, 2013 को की गई थी जिसमें गहरी क्षति वाले स्थान पर अन्य स्थानों से त्वचा लेकर रोपण किया गया था । उसके पश्चात्, धीरे-धीरे रोगी की हालत में सुधार होने लगा और तारीख 4 मार्च, 2013 को उसे अस्पताल से छुट्टी दे दी गई । हमारे अस्पताल में भर्ती होने के संबंध में रोगी की पंजीकरण पत्रिका (बिस्तर के सिरे पर लगी टिकट) प्रदर्श पी-14 है जो 166 पृष्ठों की है जिसमें प्रत्येक पृष्ठ पर ए से ए भाग पर मेरे हस्ताक्षर हैं ।"

अन्य व्यक्ति जो क्षतिग्रस्त से उस समय मिला था जब वह बच गया था, वह अभि. सा. 1 अर्थात् संतोष शुक्ला था । अभि. सा. 1 का कथन निम्नलिखित है :–

> "मैं जनवरी, 2009 से गोदावरी स्टील संयंत्र गिधाली में सीनियर एग्जीक्यूटिव एच. आर. के पद पर तैनात हूं । यह इस वर्ष के जनवरी के पहले सप्ताह की बात है, उस समय मैं रात्रि शिफ्ट की ड्यूटी पर था । रात्रि में लगभग 2 से 3 बजे के बीच संयंत्र के गार्ड ने मुझे सूचित किया कि एक लड़का जली हुई हालत में संयंत्र के अंदर आया है और फिर कार्यालय से बाहर पहुंचने पर मैंने देखा कि लड़के की टांग, पीठ और हाथ आदि जले हुए थे और

उसने केवल अंडरवियर पहना हुआ था । मेरे द्वारा पूछताछ करने पर लड़के ने बताया कि 'मेरे मित्र मुझे जंगल में ले गए और मुझे जला दिया तथा मुझ से धन लूट लिया' । फिर मैंने डौंडीलोहारा के पुलिस थाने में फोन किया और संजीवनी 108 पर भी फोन किया । उसके पश्चात्, संजीवनी एंबुलेंस पहुंची और लड़के को उपचार के लिए डौंडीलोहारा अस्पताल ले जाया गया ।

पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी साहू घटना का अन्वेषण करने के लिए आए और घटना का नज़ारी नक्शा (प्रदर्श पी-01) तैयार किया, जिसके ए से ए भाग पर मेरे हस्ताक्षर हैं । इसी प्रकार, हलका पटवारी ने घटना का नज़ारी नक्शा (प्रदर्श पी-02) तैयार किया था, जिसके ए से ए भाग पर मेरे हस्ताक्षर हैं । पुलिस कार्मिक ने पैंट, जो जली हुई थी, जली हुई कमीज और पैंट की जली हुई चैन, डिस्पोजल गिलास, सिगरेट की डिब्बी आदि मेरे समक्ष अभिगृहीत किए और दो हथकड़ी लगे व्यक्ति भी थे । उपरोक्त वस्तुओं की उक्त अभिग्रहण कार्यवाही अभिग्रहण ज्ञापन (प्रदर्श पी-3) के अनुसार घटना के स्थान से अभियुक्त नीरज शर्मा, जो न्यायालय में मौजूद है, की मौजूदगी में की गई थी, जिसके ए से ए भाग पर मेरे हस्ताक्षर हैं । पुलिस कार्मिक ने जांच के पश्चात् मेरा कथन अभिलिखित किया था ।"

11. दांडिक विचारण में क्षतिग्रस्त साक्षी के महत्व को अतिश्योक्ति नहीं कहा जा सकता । जब तक बाध्यकारी परिस्थितियां न हों या ऐसे साक्षी पर संदेह करने के लिए प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा प्रस्तुत किया गया साक्ष्य न हो, दांडिक विचारण में इसे एक अत्यंत मूल्यवान साक्ष्य के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए । **बालू सुदाम खाल्दे** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने उन सिद्धांतों का सारांश दिया था जिन्हें उस समय ध्यान में रखा जाना चाहिए जब किसी क्षतिग्रस्त प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के साक्ष्य का मूल्यांकन किया जाए । इस न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया :–

---

[1] 2023 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 355.

"26. जब किसी क्षतिग्रस्त प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के साक्ष्य का मूल्यांकन किया जाए, तो न्यायालयों द्वारा प्रतिपादित निम्नलिखित विधिक सिद्धांतों को ध्यान में रखा जाना चाहिए –

(क) घटना के समय और स्थान पर क्षतिग्रस्त प्रत्यक्षदर्शी साक्षी की मौजूदगी पर तब तक संदेह नहीं किया जा सकता जब तक उसके अभिसाक्ष्य में तात्विक विरोधाभास न हों ।

(ख) जब तक साक्ष्य द्वारा यह अन्यथा सिद्ध नहीं किया जाता है, यह विश्वास किया जाना चाहिए कि क्षतिग्रस्त साक्षी वास्तविक अपराधियों को छोड़कर अभियुक्त को मिथ्या रूप से नहीं फंसाएगा ।

(ग) क्षतिग्रस्त साक्षी के साक्ष्य का अधिक साक्ष्यिक महत्व होता है और जब तक बाध्यकारी कारण विद्यमान न हों, उनके कथनों को आसानी से त्यक्त नहीं किया जाना चाहिए ।

(घ) क्षतिग्रस्त साक्षी के साक्ष्य पर स्वाभाविक आचरण की कुछ अतिरंजनाओं या छुट-पुट विरोधाभासों के कारण संदेह नहीं किया जा सकता ।

(ङ) यदि क्षतिग्रस्त साक्षी के साक्ष्य में कोई अतिशयोक्ति या अतात्विक अतिरंजना हो, तब क्षतिग्रस्त के साक्ष्य से ऐसे विरोधाभास, अतिशयोक्ति या अतिरंजना को त्यक्त कर दिया जाना चाहिए किंतु संपूर्ण साक्ष्य को नहीं ।

(च) अभियोजन पक्ष के वृत्तांत के व्यापक आधार पर विचार किया जाना चाहिए और ऐसी विसंगतियों को त्यक्त कर दिया जाना चाहिए जो प्रसामान्यत: समय बीतने के साथ यादाश्त की कमी के कारण उत्पन्न होती हैं ।"

12. प्रस्तुत मामले में अभियोजन पक्ष द्वारा व्यपहरण और हत्या के प्रयत्न के मामले को भली-भांति सिद्ध किया गया है । हमारे लिए

अब जो अवधारण करना शेष रह जाता है वह यह है कि क्या भारतीय दंड संहिता की धारा 364-क के अधीन अपराध बनता है या नहीं ?

यद्यपि व्यपहरण भारतीय दंड संहिता के अधीन तकनीकी रूप से पूर्णरूपेण एक अपराध न हो, किंतु यह तब दंडनीय अपराध बन जाता है जब यह एक अन्य कृत्य से संबद्ध हो । उदाहरण के लिए, हत्या करने के लिए व्यपहरण भारतीय दंड संहिता की धारा 364 के अधीन एक अपराध है । इसी प्रकार, व्यपहरण एक अपराध है यदि यह किसी व्यक्ति का गुप्त रीति से और सदोष परिरोध करने के आशय से किया जाता है (भारतीय दंड संहिता की धारा 365), या जब यह किसी स्त्री को विवाह आदि के करने को विवश करने के लिए किया जाता है (भारतीय दंड संहिता की धारा 366) । इसी प्रकार, धारा 364-क एक अपराध है जब फिरौती की मांग करके अपहरण या व्यपहरण किया जाता है और किसी व्यक्ति की मृत्यु या उपहति कारित की जाती है ; या किसी व्यक्ति को मृत्यु की धमकी दी जाती है या वास्तव में हत्या कारित की जाती है ।

भारतीय दंड संहिता की धारा 364-क को भारतीय दंड संहिता में संसद् के अधिनियम (1993 के अधिनियम सं. 42 द्वारा 22 मई, 1993 से) द्वारा अंत:स्थापित किया गया था । यह वह समय था जब फिरौती के प्रयोजनों के लिए अपहरण और व्यपहरण की घटनाएं जोरों पर थी और इसीलिए भारत के विधि आयोग ने वर्ष 1971 में अपनी 42वीं रिपोर्ट में भारतीय दंड संहिता में धारा 364-क के अंत:स्थापन की सिफारिश की थी, यद्यपि इसे अंततोगत्वा वर्ष 1993 में सम्मिलित किया गया था । यह धारा निम्नलिखित प्रकार से है :–

"**364-क. फिरौती, आदि के लिए व्यपहरण –** जो कोई इसलिए किसी व्यक्ति का व्यपहरण या अपहरण करेगा या ऐसे व्यपहरण या अपहरण के पश्चात् ऐसे व्यक्ति को निरोध में रखेगा और ऐसे व्यक्ति की मृत्यु या उसको उपहति कारित करने की धमकी देगा या अपने आचरण से ऐसी युक्तियुक्त आशंका पैदा करेगा कि ऐसे व्यक्ति की मृत्यु हो सकती है या उसको उपहति कारित की जा

सकती है या ऐसे व्यक्ति को उपहति या उसकी मृत्यु कारित करेगा जिससे कि सरकार या किसी विदेशी राज्य या अंतरराष्ट्रीय अंतर-सरकारी संगठन या किसी अन्य व्यक्ति को किसी कार्य को करने या करने से प्रविरत रहने के लिए या फिरौती देने के लिए विवश किया जाए, वह मृत्यु या आजीवन कारावास से दंडित किया जाएगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा ।"

विक्रम सिंह बनाम **भारत संघ**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया है :–

"53. प्रस्तुत मामले में उपरोक्त को लागू करते हुए हम पाते हैं कि आरंभ में भारतीय दंड संहिता में धारा 364-क को लाने की आवश्यकता फिरौती के लिए बढ़ती अपहरण और व्यपहरण की घटनाओं के कारण उद्भूत हुई थी । यह बात विधि आयोग द्वारा की गई सिफारिशों से स्पष्ट है, जिसके प्रति हमने इस निर्णय के पूर्ववर्ती भाग में निर्देश किया है । जब वे सिफारिशें सरकार के पास लंबित थीं, न केवल नागरिकों की रक्षा और सुरक्षा पर आतंकवाद का साया मंडराते हुए अपना सिर उठाने लगा अपितु देश की संप्रभुता और अखंडता को भी खतरा पैदा हुआ इसलिए ऐसे खतरे, जिससे किसी देश की अस्थिरता की संभावना हो जाए, की रोकथाम के लिए पर्याप्त उपाय करने की आवश्यकता हुई । आतंकवाद के साथ अंतरराष्ट्रीय आयामों पर विचार करते हुए विधि का पुन संशोधन करने की आवश्यकता उद्भूत हुई जिसके परिणामस्वरूप वर्ष 1994 में भारतीय दंड संहिता में धारा 364-क का संशोधन किया गया । न केवल सामान्य अपराधियों द्वारा धनीय अभिलाभ या आर्थिक अभिलाभ के लिए संगठित क्रियाकलाप के रूप में अपितु आतंकवादी संगठनों द्वारा फिरौती के लिए अपहरण और व्यपहरण की बढ़ती चुनौतियों के कारण भारतीय दंड संहिता में धारा 364-क और जो ऐसे क्रियाकलापों में लगे हों उनके लिए कठोर दंड के अंत:स्थापन की आवश्यकता महसूस हुई ।'

---

[1] (2015) 9 एस. सी. सी. 502.

जैसाकि **विक्रम सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में कहा गया था, यह स्पष्ट किए जाने की आवश्यकता है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 364-क के अंतर्गत मात्र सरकार या विदेशी राज्य के विरुद्ध आतंकवादी कृत्य ही नहीं आते हैं अपितु इसके अंतर्गत ऐसे मामले भी आते हैं जहां फिरौती की मांग केवल किसी आतंकवादी कृत्य के भाग के रूप में ही नहीं की जाती है अपितु प्राइवेट व्यक्ति के धनीय अभिलाभ के लिए भी की जाती है ।

13. प्रस्तुत मामले में, धारा 364-क के अधीन मामले को सिद्ध करने के लिए अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किया गया साक्ष्य रवि कुमार द्विवेदी (तीसरा अभियुक्त जिसे विचारण न्यायालय द्वारा दोषमुक्त कर दिया गया था) द्वारा विपदग्रस्त के पिता को 12.00 बजे दोपहर में की गई एक फोन कॉल के रूप में है । यद्यपि अभियोजन पक्षकथन के अनुसार, यह नंबर इस अपील में दो अभियुक्तों में से एक अश्वनी कुमार यादव का पाया गया था किंतु साक्ष्य अधिनियम की धारा 165 के अधीन अपेक्षित अनुसार इस आशय का कोई साक्ष्य न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया है ।

शिकायतकर्ता द्वारा तारीख 21 मार्च, 2013 को पुलिस के समक्ष किए गए अनुपूरक कथन (उसका पहला कथन तारीख 3 जनवरी, 2013 का है) की थोड़ी ही सुसंगतता है क्योंकि अभि. सा. 6 ने अपनी मुख्य परीक्षा में कभी भी इस बारे में कुछ नहीं कहा था ।

14. **शेख अहमद** बनाम **तेलंगाना राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि धारा 364-क के अधीन अपराध को सिद्ध करने के लिए तीन शर्तों को अवश्य पूरा किया जाना चाहिए :–

क) किसी व्यक्ति का व्यपहरण या अपहरण किया जाना चाहिए या ऐसे व्यपहरण या अपहरण के पश्चात् व्यक्ति को निरूद्ध रखा जाना चाहिए ;

---

[1] (2021) 9 एस. सी. सी. 59.

ख) ऐसे व्यक्ति की मृत्यु या उसको उपहति कारित करने की धमकी दी गई हो या अभियुक्त अपने आचरण से ऐसी युक्तियुक्त आशंका पैदा करे कि ऐसे व्यक्ति की मृत्यु हो सकती है या उसको उपहति कारित की जा सकती है ;

ग) या ऐसे व्यक्ति की मृत्यु या उसको उपहति कारित करे जिससे कि सरकार या किसी विदेशी राज्य या अंतर-सरकारी संगठन या किसी अन्य व्यक्ति को किसी कार्य को करने या करने से प्रविरत रहने के लिए या फिरौती देने के लिए विवश किया जाए ।

अभियोजन पक्ष को न्यायालय के समक्ष युक्तियुक्त संदेह के परे जिन आवश्यक संघटकों को साबित करना होगा, वे न केवल व्यपहरण या अपहरण का कृत्य है अपितु उसके पश्चात् फिरौती की मांग के साथ-साथ उस व्यक्ति के जीवन को खतरा भी होना चाहिए जिसे व्यपहृत या अपहृत किया गया है । **रवि धींगरा** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा इस बात को दोहराया गया था ।

प्रस्तुत मामले में, अभियोजन पक्ष जिस बात को सिद्ध करने में पूरी तरह असफल रहा है वह है फिरौती की मांग । अभियोजन पक्ष के अनुसार, शिकायतकर्ता के पिता अर्थात् प्रणीत शर्मा (अभि. सा. 5) को एक फोन कॉल प्राप्त हुई थी जिसमें फिरौती की मांग की गई थी । यह पता लगाया गया था कि यह फोन कॉल अभिकथित रूप से रवि कुमार द्विवेदी की थी किंतु फिरौती की मांग को सिद्ध करने के लिए न्यायालय के समक्ष अभिलेख पर कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया था जो कि **राजेश** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[2] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित की गई विधि को ध्यान में रखते हुए पूर्ण रूप से आवश्यक था ।

15. धारा 364-क के अधीन मामले को सिद्ध करने के लिए पहली शर्त अर्थात् व्यपहरण या अपहरण के साथ-साथ या तो दूसरी या तीसरी

---

[1] (2023) 6 एस. सी. सी. 76.

[2] 2023 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1202.

शर्त पूरी होनी चाहिए, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा **शेख अहमद** (उपर्युक्त) वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है । उक्त उपबंध के अधीन अभियुक्त या तो मृत्यु या आजीवन कारावास से दंडित किए जाने योग्य है और अपराध की गंभीरता पर विचार करते हुए जुर्माने से भी दंडनीय है । प्रस्तुत मामले में, यदि तर्क के लिए यह मान लिया जाए कि धारा 364 के अधीन अपराध सिद्ध किया गया है, तो हम नहीं पाते कि यह अपराध धारा 364-क की परिधि के अधीन आएगा ।

'अपहरण' को धारा 362 में परिभाषित किया गया है जो निम्नलिखित है :–

> "**362. अपहरण –** जो कोई किसी व्यक्ति को किसी स्थान से जाने के लिए बल द्वारा विवश करता है, या किन्हीं प्रवंचनापूर्ण उपायों द्वारा उत्प्रेरित करता है, वह उस व्यक्ति का अपहरण करता है, यह कहा जाता है ।"

जो अपराध सिद्ध किया गया है वह निश्चित रूप से धारा 364 के अधीन है, यह धारा निम्नलिखित प्रकार से है :–

> "**364. हत्या करने के लिए व्यपहरण या अपहरण –** जो कोई इसलिए किसी व्यक्ति का व्यपहरण या अपहरण करेगा कि ऐसे व्यक्ति की हत्या की जाए या उसको ऐसे व्ययनित किया जाए कि वह अपनी हत्या होने के खतरे में पड़ जाए, वह आजीवन कारावास से या कठिन कारावास से, जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा ।"

16. तथापि, धारा 364 की परिधि के अधीन आने के लिए अपहरण से कुछ अधिक किया जाना आवश्यक है, जो कि फिरौती की मांग है । हम नहीं पाते कि फिरौती की मांग की गई थी, जैसा कि अभियोजन पक्ष द्वारा अभिकथन किया गया है । अभियोजन पक्ष द्वारा इस बाबत कोई उपयुक्त साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है ।

शिकायतकर्ता (अभि. सा. 6) की मुख्य परीक्षा में फिरौती की मांग की बात नहीं आई है । वह अपहरण, हत्या के प्रयत्न, आदि की अपनी

कहानी पर अडिग रहा है किंतु फिरौती की किसी मांग के बारे में कोई कानाफूसी नहीं है, यद्यपि पुलिस के समक्ष अपने अनुपूरक कथन (दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 के अधीन) में उसने तारीख 21 मार्च, 2013 को यह कहा था कि जब दोनों अभियुक्तों द्वारा उसका गला घोंटने का प्रयत्न करने के पश्चात् जब वह जमीन पर पड़ा हुआ था, तब उसने नीरज शर्मा को अश्वनी कुमार यादव को यह कहते हुए सुना था कि वे उन्हें अब उसके पिता से फिरौती की मांग करनी चाहिए । फिरौती की मांग के संबंध में न्यायालय में एकमात्र अभिसाक्ष्य प्रणीत शर्मा (अभि. सा. 5) जो शिकायतकर्ता का पिता है, प्रणीत शर्मा द्वारा दिए गए इस अस्पष्ट कथन के रूप में आया है तारीख 3 जनवरी, 2013 को जब वह अस्पताल में था तब रवि कुमार द्विवेदी नामक व्यक्ति ने फिरौती के रूप में आठ लाख रुपए की मांग की थी । रवि कुमार द्विवेदी, तीसरे अभियुक्त को विचारण न्यायालय द्वारा पहले ही दोषमुक्त कर दिया गया है । विचारण न्यायालय के समक्ष अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 364-क के अधीन दोषसिद्ध किए जाने के लिए कतई कोई साक्ष्य नहीं था । अपीलार्थियों की धारा 364-क के अधीन दोषसिद्धि सिद्ध नहीं होती है और इसलिए अपास्त किए जाने योग्य है ।

17. अत: भारतीय दंड संहिता की धारा 364-क के अधीन दोषसिद्धि और आजीवन कारावास के दंडादेश को अपास्त किया जाता है । फिर भी, हम यह पाते हैं कि अभि. सा. 6 का व्यपहरण किया गया था जिससे कि उसकी हत्या की जा सके । अत: हम धारा 364-क के अधीन निकाले गए निष्कर्षों को धारा 364 में संपरिवर्तित करते हैं । अपीलार्थियों को तद्द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 364-क की बजाय धारा 364 के अधीन दोषसिद्ध किया जाता है ।

विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों अभियोजन पक्ष द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 364-क के अधीन प्रस्तुत किए गए साक्ष्य में खामी का पता लगाने में असफल रहे हैं । विचारण न्यायालय तथा अपील न्यायालय ने पूर्ण रूप से अभि. सा. 5 (प्रणीत शर्मा, विपदग्रस्त के पिता) और अभि. सा. 6 उसके पुत्र, विपदग्रस्त के साक्ष्य

का अवलंब लिया है । जहां तक अभि. सा. 6 के साक्ष्य का संबंध है, उसने न्यायालय में अभियोजन साक्षी के रूप में फिरौती की किसी मांग का कोई उल्लेख नहीं किया है । तारीख 3 जनवरी, 2013 को कार्यपालक मजिस्ट्रेट को किए गए अपने पहले कथन में फिर से उसने किसी फिरौती का कोई वर्णन नहीं किया था । उसने फिरौती के बारे में वर्णन दो माह पश्चात् तारीख 21 मार्च, 2013 को पुलिस द्वारा अभिलिखित किए गए उसके अनुपूरक कथन में किया था । उच्च न्यायालय ने इस पर विश्वास किया और इसे एक "मृत्युकालिक कथन" कहा । तारीख 21 मार्च, 2013 को पुलिस को किए गए कथन को एक मृत्युकालिक कथन नहीं कहा जा सकता । मृत्युकालिक कथन भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 32 के अधीन परिभाषित है, जिसे नीचे उद्धृत किया जाता है :–

> "32. **ये दशाएं जिनमें उस व्यक्ति द्वारा सुसंगत तथ्य का किया गया कथन सुसंगत है, जो मर गया है या मिल नहीं सकता, इत्यादि** – सुसंगत तथ्यों के लिखित या मौखिक कथन, जो ऐसे व्यक्ति द्वारा किए गए थे, जो मर गया है या मिल नहीं सकता है या जो साक्ष्य देने के लिए असमर्थ हो गया है या जिसकी हाजिरी इतने विलंब या व्यय के बिना उपाप्त नहीं की जा सकती, जितना मामले की परिस्थितियों में न्यायालय को अयुक्तियुक्त प्रतीत होता है, निम्नलिखित दशाओं में स्वयमेव सुसंगत है –
>
> > (1) **जबकि वह मृत्यु के कारा से संबंधित है** – जबकि वह कथन किसी व्यक्ति द्वारा अपनी मृत्यु के कारण के बारे में या उस संव्यवहार की किसी परिस्थिति के बारे में किया गया है जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, तब उन मामलों में, जिनमें उस व्यक्ति की मृत्यु का कारण प्रश्नगत हो ।
> >
> > ऐसे कथन सुसंगत हैं चाहे उस व्यक्ति को, जिसने उन्हें किया है, उस समय जब वे किए गए थे मृत्यु की प्रत्याशंका थी या नहीं और चाहे उस कार्यवाही की, जिसमें उस व्यक्ति की मृत्यु का कारण प्रश्नगत होता है, प्रकृति कैसी ही क्यों न हो ।

(2) **अथवा कारबार के अनुक्रम में किया गया है –** जबकि वह कथन ऐसे व्यक्ति द्वारा कारबार के मामूली अनुक्रम में किया गया था तथा विशेषतः जबकि वह, उसके द्वारा कारबार के मामूली अनुक्रम में या वृत्तिक कर्तव्य के निर्वहन में रखी जाने वाली पुस्तकों में उसके द्वारा की गई किसी प्रविष्टि या किए गए ज्ञापन के रूप में है, अथवा उसके द्वारा धन, माल, प्रतिभूतियों या किसी भी किस्म की संपत्ति की प्राप्ति की लिखित या हस्ताक्षरित अभिस्वीकृति है, अथवा वाणिज्य में उपयोग में आने वाली उसके द्वारा लिखित या हस्ताक्षरित किसी दस्तावेज के रूप में है अथवा किसी पत्र या अन्य दस्तावेज की तारीख के रूप में है, जो कि उसके द्वारा प्रायः दिनांकित, लिखित या हस्ताक्षरित की जाती थी ।

(3) **अथवा करने वाले के हित के विरुद्ध है –** जबकि वह कथन उसे करने वाले व्यक्ति के धन संबंधी या सांपत्तिक हित के विरुद्ध है या जबकि, यदि वह सत्य हो, तो उसके कारण उस पर दांडिक अभियोजन या नुकसानी का वाद लाया जा सकता है या लाया जा सकता था ।

(4) **अथवा लोक अधिकार या रूढ़ि के बारे में या साधारण हित के विषयों के बारे में कोई राय देता है –** जबकि उस कथन में उपयुक्त व्यक्ति की राय किसी ऐसे लोक अधिकार या रूढ़ि अथवा लोक या साधारण हित के विषय के अस्तित्व के बारे में है, जिसके अस्तित्व से, यदि वह अस्तित्व में होता तो उससे उस व्यक्ति का अवगत होना संभाव्य होता और जब कि ऐसा कथन ऐसे किसी अधिकार, रूढ़ि या बात के बारे में किसी संविवाद के उत्पन्न होने से पहले किया गया था ।

(5) **अथवा नातेदारी के अस्तित्व से संबंधित है –** जबकि वह कथन किन्हीं ऐसे व्यक्तियों के बीच रक्त, विवाह या दत्तकग्रहण पर आधारित किसी नातेदारी के अस्तित्व के संबंध में है, जिन व्यक्तियों की रक्त, विवाह या दत्तकग्रहण पर

आधारित नातेदारी के बारे में उस व्यक्ति के पास, जिसने वह कथन किया है, ज्ञान के विशेष साधन थे और जब कि वह कथन विवादग्रस्त प्रश्न के उठाए जाने से पूर्व किया गया था ।

(6) **अथवा कौटुम्बिक बातों से संबंधित विल या विलेख में किया गया है –** जबकि वह कथन मृत व्यक्तियों के बीच रक्त, विवाह या दत्तकग्रहण पर आधारित किसी नातेदारी के अस्तित्व के संबंध में और उस कुटुंब की बातों से, जिसका ऐसा मृत व्यक्ति अंग था, संबंधित किसी विल या विलेख में या किसी कुटुंब-वंशावली में या किसी समाधिप्रस्तर, कुटुंब-चित्र या अन्य चीज पर जिस पर ऐसे कथन प्राय: किए जाते हैं, किया गया है, और जब कि ऐसा कथन विवादग्रस्त प्रश्न के उठाए जाने से पूर्व किया गया था ।

(7) **अथवा धारा 13, खंड (क) में वर्णित संव्यवहार से संबंधित दस्तावेज में किया गया है –** जबकि वह कथन किसी ऐसे विलेख, विल या अन्य दस्तावेज में अंतर्विष्ट है, जो किसी ऐसे संव्यवहार से संबंधित है जैसा धारा 13, खंड (क) में वर्णित है ।

(8) **अथवा कई व्यक्तियों द्वारा किया गया है और प्रश्नगत बात से सुसंगत भावनाएं अभिव्यक्त करता है –** जब कि वह कथन कई व्यक्तियों द्वारा किया गया था और प्रश्नगत बात से सुसंगत उनकी भावनाओं या धारणों को अभिव्यक्त करता है ।”

शिकायतकर्ता/विपदग्रस्त (अभि. सा. 6) द्वारा तारीख 3 जनवरी, 2013 को किया गया कथन पहले अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 10) को किया गया था । किंतु महत्वपूर्ण रूप से इसे मात्र इस कारण ‘एक मृत्युकालिक कथन’ नहीं कहा जा सकता कि अभि. सा. 6 की चमत्कारिक रूप से जान बच गई थी । इस कथन को एक मृत्युकालिक कथन के रूप में नहीं पढ़ा जा सकता क्योंकि इस कथन या घोषणा को

करने वाला व्यक्ति अंततोगत्वा जीवित बच गया था । तारीख 21 मार्च, 2013 को अन्वेषण अधिकारी को किया गया यह अनुपूरक कथन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 के अधीन कथन से कुछ अधिक नहीं है । [**जेंटेला विजयवर्धन राव और एक अन्य** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[1] ; **सुनील कुमार और अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[2] ; **श्रवण भादाजी भिरद और अन्य** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[3] ; **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **वीर सिंह और अन्य**[4] और **एस. अरुल राजा** बनाम **तमिलनाडु राज्य**[5] वाले मामले देखें] ।

18. हमारी सुविचारित राय में, विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय दोनों इस मामले को, अन्य बातों के साथ-साथ, भारतीय दंड संहिता की धारा 364-क के अधीन मामले के रूप में अभिनिर्धारित करने में पूर्ण रूप से भ्रमित हुए हैं । अभियोजन पक्ष द्वारा इस पहलू पर प्रस्तुत किया गया कोई उपयुक्त साक्ष्य नहीं है । अतः इस पहलू पर इन न्यायालयों के निष्कर्षों को अपास्त किए जाने की आवश्यकता है । अत: हम वर्तमान अपीलों को इस सीमा तक भागत: मंजूर करते हैं कि विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 364-क के अधीन दोषसिद्धि के अभिलिखित किए गए निष्कर्षों को तद्द्वारा अपास्त किया जाता है । तथापि, हम यह पाते हैं कि अभियुक्तों ने भारतीय दंड संहिता की धारा 364 के अधीन अपराध किया था क्योंकि विपदग्रस्त अर्थात् अभि. सा. 6 की हत्या करने के लिए व्यपहरण का अपराध सिद्ध होता है । दूसरे शब्दों में, हम धारा 364-क के अधीन दोषसिद्धि के निष्कर्षों को भारतीय दंड संहिता की धारा 364 में संपरिवर्तित करते हैं और दोनों अभियुक्तों (वर्तमान अपीलार्थियों) को इस आधार पर दस वर्ष का कठोर कारावास भुगतने और प्रत्येक को 10,000/- रुपए के जुर्माने और जुर्माने का संदाय करने में व्यतिक्रम

---

[1] (1996) 6 एस. सी. सी. 241.

[2] (1997) 10 एस. सी. सी. 570.

[3] (2002) 10 एस. सी. सी. 56.

[4] (2004) 10 एस. सी. सी. 117.

[5] (2010) 8 एस. सी. सी. 233.

करने पर तीन माह के अतिरिक्त कारावास का दंडादेश देते हैं । शेष दोषसिद्धि और दंडादेश अर्थात् भारतीय दंड संहिता की धारा 120ख के साथ पठित धारा 307 के अधीन तथा भारतीय दंड संहिता की धारा 397 के साथ धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि और दंडादेश की तद्द्वारा अभिपुष्टि की जाती है । हम इस बात से भी अवगत हैं कि उच्च न्यायालय द्वारा दोनों अभियुक्तों पर दंडादेश के अतिरिक्त पचास हजार रुपए का जुर्माना अधिरोपित किया गया था । हम इसे कायम रखते हैं और निदेश देते हैं कि वर्तमान अपीलार्थियों से जुर्माना वसूल किया जाए और जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर प्रत्येक अपीलार्थी एक वर्ष का कारावास भुगतेगा । उपरोक्त जुर्माने को उसके पश्चात् विधि के अनुसार विपदग्रस्त को विप्रेषित किया जाएगा ।

19. किसी अपराध के विपदग्रस्त को मात्र एक अभियोजन साक्षी के रूप में नहीं समझा जा सकता । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 357(1) न्यायालय को यह आदेश देने के लिए सशक्त करती है कि वसूल की गई जुर्माने की रकम उस व्यक्ति को प्रतिकर के रूप में दी जाए जिसे उस अपराध के कारण कोई हानि हुई है या क्षति कारित हुई है । इस मामले में विपदग्रस्त को 45-48 प्रतिशत दाह-क्षतियां पहुंची थीं और जब उसकी आयु केवल 18 वर्ष थी, उसकी एक टांग चली गई थी । हो सकता है जब स्थिति की मांग हो कि विपदग्रस्त को प्रतिकर की एक पर्याप्त मात्रा संदत्त की जाए और दोषसिद्ध व्यक्ति उस भार को वहन करने के लिए वित्तीय रूप से उतना समर्थ न हो । अत: ऐसी स्थितियों के लिए, दंड प्रक्रिया संहिता में इस कारण से धारा 357क पुर:स्थापित की गई थी, जहां राज्य की निधियों से विपदग्रस्तों को प्रतिकर का संदाय किया जा सके क्योंकि उस अपराध से विपदग्रस्त की संरक्षा करना राज्य का उत्तरदायित्व था जो अपराध के शिकार व्यक्ति के विरुद्ध कारित किया गया था ।

20. प्रस्तुत मामले में, विपदग्रस्त अर्थात् अभि. सा. 6 को गंभीर क्षतियां पहुंची हैं इतना ही नहीं उसकी बाईं टांग को उसके घुटने के नीचे से काटना पड़ा था । परिणामत:, हम निदेश देते हैं कि छत्तीसगढ़ राज्य

द्वारा विपदग्रस्त को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 357क के अधीन प्रतिकर के रूप में उच्च न्यायालय द्वारा निदेशित अनुसार एक लाख की बजाय 5,00,000/- रुपए (पांच लाख रुपए केवल) का संदाय किया जाए । यह आज से तीन माह की अवधि के भीतर किया जाएगा ।

21. अश्वनी कुमार यादव को जुर्माने/प्रतिकर का संदाय करने पर छोड़ दिया जाएगा बशर्ते उसने अपना दस वर्ष का कारावास पूर्ण कर लिया हो और किसी अन्य मामले में आवश्यकता न हो । अपीलार्थी नीरज शर्मा के दंडादेश को निलंबित करने और उसे जमानत देने की सीमा तक इस न्यायालय के तारीख 17 सितंबर, 2019 के आदेश को तद्द्वारा बातिल किया जाता है । अपीलार्थी नीरज शर्मा के जमानत बंधपत्रों को रद्द किया जाता है और उसे अपना शेष दंडादेश पूरा करने के लिए आज से दो सप्ताह के भीतर अभ्यर्पण करने का निदेश दिया जाता है ।

इस निर्णय की एक प्रति विपदग्रस्त को भी भेजी जाएगी ।

अपीलें भागत: मंजूर की गईं ।

जस.

केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो

बनाम

कपिल वधावन और एक अन्य

[2024 की दांडिक अपील सं. 391]

24 जनवरी, 2024

न्यायमूर्ति बेला एम. त्रिवेदी और न्यायमूर्ति पंकज मिथल

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 167(2) और धारा 173 – व्यतिक्रम जमानत (डिफाल्ट बेल) – हकदारी – प्रत्यर्थी-अभियुक्तों सहित अन्य अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता के अधीन दंडनीय विभिन्न अपराधों और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन अपराध के संबंध में केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत किया जाना – अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप पत्र फाइल किया जाना – विशेष न्यायालय द्वारा अभिकथित अपराधों का संज्ञान लिया जाना और अन्य अभियुक्तों सहित प्रत्यर्थी-अभियुक्तों के विरुद्ध पेशी वारंट जारी किया जाना – केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा फाइल की गई अंतिम रिपोर्ट/आरोप पत्र अपूर्ण होने और कानूनी अवधि के भीतर फाइल न किए जाने के आधार पर प्रत्यर्थी-अभियुक्तों द्वारा व्यतिक्रम जमानत के लिए आवेदन किया जाना – विशेष न्यायालय द्वारा आवेदन मंजूर किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा विशेष न्यायालय के आदेश को कायम रखा जाना – औचित्य – अपराधी को धारा 167 की उपधारा (2) से संलग्न परंतुक का फायदा केवल तब उपलब्ध होगा जब कानूनी अवधि के भीतर आरोप पत्र फाइल न किया हो और उसके विरुद्ध अन्वेषण लंबित हो किंतु जब एक बार आरोप पत्र फाइल कर दिया जाता है तो यह अधिकार समाप्त हो जाता है और आरोप पत्र के साथ प्रस्तुत की गई सामग्री से अपराध के कारित होने के बारे में न्यायालय का समाधान हो जाने और अभिकथित अपराध का संज्ञान ले लेने पर यह अतात्विक है कि अन्य अभियुक्तों के विरुद्ध

आगे अन्वेषण लंबित है या नहीं और आरोप पत्र फाइल करने के समय पर कुछ दस्तावेजों के उपलब्ध न होने से न तो आरोप पत्र दूषित हो जाएगा और न ही ऐसे अपूर्ण आरोप पत्र के आधार पर अभियुक्त व्यतिक्रम जमानत का हकदार हो जाएगा इसलिए प्रत्यर्थी-अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप पत्र विहित समय-सीमा के भीतर फाइल कर दिए जाने और विशेष न्यायालय द्वारा अभिकथित अपराधों के संबंध में संज्ञान ले लिए जाने पर अन्य अभियुक्तों के विरूद्ध अन्वेषण लंबित रहने के आधार पर प्रत्यर्थी-अभियुक्तों को व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ा जाना न्यायोचित नहीं कहा जा सकता और निचले न्यायालयों के आदेशों को अपास्त करना उचित होगा ।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 – धारा 167(2) और धारा 173 – व्यतिक्रम जमानत (डिफाल्ट बेल) – हकदारी – व्यतिक्रम जमानत का अधिकार न केवल एक कानूनी अधिकार है बल्कि ऐसा अधिकार है जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 से प्राप्त है और यह एक अजेय अधिकार है, तो भी यह चालान या आरोप पत्र फाइल करने से पूर्व ही प्रवर्तनीय है और यदि इसका फायदा नहीं उठाया गया है तो चालान फाइल होने पर यह बना या प्रवर्तनीय नहीं रहता है तथा जब एक बार चालान फाइल कर दिया गया है, तो जमानत देने के प्रश्न पर चालान फाइल करने के पश्चात् अभियुक्त को जमानत देने से संबंधित उपबंधों के अधीन मामले के गुणागुण के संदर्भ में ही विचार और इसका विनिश्चय किया जाना होगा ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, नरीमन प्वाइंट, मुंबई के उप महाप्रबंधक श्री विपिन कुमार शुक्ला द्वारा दीवान हाउसिंग फाइनेंस कारपोरेशन लिमिटेड (डीएचएफएल) और 12 अन्य अभियुक्त व्यक्तियों/कंपनियों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 409, 420 और 477क के साथ पठित धारा 120ख और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(1)(घ) के साथ पठित धारा 13(2) के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दर्ज की गई शिकायत के आधार पर केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो, नई दिल्ली में तारीख 20 जून, 2022 को एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई थी । उक्त प्रथम

इत्तिला रिपोर्ट में, अन्य बातों के साथ-साथ, यह अभिकथन किया गया था कि डीएचएफएल के तत्कालीन अध्यक्ष और प्रबंध निदेशक श्री कपिल वधावन ने 12 अन्य अभियुक्त व्यक्तियों के साथ मिलकर यूनियन बैंक ऑफ इंडिया के नेतृत्व वाले 17 बैंकों के संघ के साथ छल करने के लिए एक आपराधिक षड्यंत्र रचा और उक्त आपराधिक षड्यंत्र के अनुसरण में उक्त अभियुक्त व्यक्तियों/ईकाइयों ने संघ के बैंकों को लगभग 42,000/- करोड़ रुपए के भारी-भरकम ऋण मंजूर करने के लिए उत्प्रेरित किया और उसके पश्चात् उन्होंने डीएचएफएल की लेखा बहियों का मिथ्याकरण करके उक्त निधियों के एक महत्वपूर्ण भाग को निकाल लिया और दुर्विनियोग किया तथा जानबूझकर तथा बेइमानी से उक्त संघ के बैंकों के विधिसम्मत शोध्यों का भुगतान करने में व्यतिक्रम किया और तद्द्वारा इस संघ के ऋणदाताओं को 34,000/- करोड़ रुपए की सदोष हानि कारित की । अन्वेषण करने के पश्चात् केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 सहित 75 व्यक्तियों/इकाइयों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन आरोप पत्र फाइल किया गया । प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 ने विशेष न्यायालय के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन इस आधार पर कानूनी जमानत की ईप्सा करते हुए आवेदन फाइल किया कि केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा फाइल किया गया आरोप पत्र अपूर्ण था । विशेष न्यायालय ने सभी 75 अभियुक्तों के विरुद्ध अभिकथित अपराधों का संज्ञान लिया और प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 (अभियुक्त-1 और अभियुक्त-2) के साथ-साथ अन्य अभियुक्तों के विरुद्ध भी वारंट/समन जारी किए । इसके पश्चात्, विशेष न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए कि अन्वेषण अपूर्ण था और आरोप पत्र टुकड़ों में फाइल किया गया था और यह भी अभिनिर्धारित किया कि प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 (अभियुक्त-1 और अभियुक्त-2) दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन कानूनी जमानत के हकदार हैं । अपीलार्थी-केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने विशेष न्यायालय द्वारा पारित किए गए उक्त आदेश से व्यथित होकर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439(2) के साथ पठित धारा 482 के अधीन उच्च न्यायालय के समक्ष एक आवेदन फाइल किया । उच्च न्यायालय ने उक्त आवेदन को खारिज कर दिया और विशेष न्यायालय द्वारा को

पारित किए गए आदेश को कायम रखा । केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए

अभिनिर्धारित – दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 की उपधारा (2) में संलग्न परंतुक का फायदा अपराधी को तभी उपलब्ध होगा जब आरोप पत्र फाइल नहीं किया गया हो और उसके विरुद्ध अन्वेषण लंबित रखा गया हो । तथापि, जब एक बार आरोप पत्र फाइल कर दिया जाता है, तो उक्त अधिकार समाप्त हो जाता है । यह ध्यान देने योग्य है कि धारा 173 की उपधारा (8) के निबंधनों के अनुसार आगे अन्वेषण करने के लिए प्रार्थना करने का अन्वेषण अधिकारी का अधिकार केवल इसलिए नहीं छिन जाता है क्योंकि अभियुक्त के विरुद्ध इसकी उपधारा (2) के अधीन आरोप पत्र फाइल कर दिया गया है । यद्यपि, आमतौर पर अभियोजन पक्ष द्वारा अवलंब लिए गए सभी दस्तावेजों को आरोप पत्र के साथ संलग्न किया जाना चाहिए, तो भी कुछ कारणों से यदि सभी दस्तावेज आरोप पत्र के साथ फाइल नहीं किए जाते हैं, तो उस कारण से आरोप पत्र स्वयमेव अविधिमान्य या दूषित नहीं हो जाएगा । यह भी सुस्थिर है कि न्यायालय अपराध का संज्ञान लेता है, अपराधी का नहीं । जब एक बार आरोप पत्र के साथ प्रस्तुत सामग्री से अपराध के कारित हो जाने के बारे में न्यायालय का समाधान हो जाता है और अभियुक्त द्वारा अभिकथित रूप से किए गए अपराध का संज्ञान ले लेता है, तो यह अतात्विक है कि धारा 173(8) के अधीन आगे का अन्वेषण लंबित है या नहीं । अन्य अभियुक्तों के संबंध में आगे का अन्वेषण लंबित रहने या आरोप पत्र फाइल करने के समय पर प्रस्तुत करने वाले कुछ दस्तावेजों के उपलब्ध न होने से न तो आरोप पत्र दूषित हो जाएगा और न ही इससे अभियुक्त इस आधार पर कानूनी जमानत का दावा करने का हकदार हो जाएगा कि आरोप पत्र एक अपूर्ण आरोप पत्र था या आरोप पत्र दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(2) के निबंधनों के अनुसार फाइल नहीं किया गया था । उपर्युक्त विधिक स्थिति को देखते हुए इस न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करने में कोई संकोच नहीं है कि प्रत्यर्थी-अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप पत्र विहित समय-सीमा के भीतर

फाइल किया गया है और उनके द्वारा अभिकथित रूप से कारित किए गए अपराधों का विशेष न्यायालय द्वारा संज्ञान लिया गया है, इसलिए प्रत्यर्थी धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत का इस आधार पर दावा नहीं कर सकते थे कि अन्य अभियुक्तों के संबंध में अन्वेषण लंबित था । विशेष न्यायालय तथा उच्च न्यायालय दोनों ने इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित और स्थिर की गई विधिक स्थिति की अवहेलना करके विधि की गंभीर गलती की है । इसलिए आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने योग्य हैं और तद्नुसार अपास्त किए जाते हैं । (पैरा 23 और 25)

इस सुस्थिर विधिक स्थिति से कोई असहमति नहीं हो सकती कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत का अधिकार न केवल एक कानूनी अधिकार है बल्कि ऐसा अधिकार है जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 से प्राप्त है । यह एक अजेय अधिकार है, तो भी यह चालान या आरोप पत्र फाइल करने से पूर्व ही प्रवर्तनीय है और यदि इसका फायदा नहीं उठाया गया है तो चालान फाइल होने पर यह बना नहीं रहता है या प्रवर्तनीय नहीं रहता है । जब एक बार चालान फाइल कर दिया गया है, तो जमानत देने के प्रश्न पर चालान फाइल करने के पश्चात् अभियुक्त को जमानत देने से संबंधित उपबंधों के अधीन मामले के गुणागुण के संदर्भ में ही विचार और इसका विनिश्चय किया जाना चाहिए । (पैरा 15)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2022]	2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 153 : **गंभीर धोखाधड़ी अन्वेषण कार्यालय** बनाम **राहुल मोदी और अन्य** ;	17
[2021]	(2021) 2 एस. सी. सी. 485 : **एम. रविन्द्रन** बनाम **आसूचना अधिकारी, राजस्व आसूचना निदेशालय** ;	10
[2017]	(2017) 15 एस. सी. सी. 67 : **राकेश कुमार पॉल** बनाम **असम राज्य** ;	11

[2013]	(2013) 3 एस. सी. सी. 77 : **सुरेश कुमार भीकमचंद जैन** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और एक अन्य** ;	11, 16, 17
[2007]	(2007) 8 एस. सी. सी. 770 : **दिनेश डालमिया** बनाम **केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो** ;	10, 11, 24
[1994]	(1994) 5 एस. सी. सी. 410 : **संजय दत्त** बनाम **राज्य मार्फत केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो, बंबई (II)** ;	15
[1991]	(1991) 3 एस. सी. सी. 655 : **के. वीरास्वामी** बनाम **भारत संघ और अन्य ।**	21

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2024 की दांडिक अपील सं. 391.

2022 के दांडिक प्रकीर्ण मामला सं. 6544 में दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली द्वारा तारीख 30 मई, 2023 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से — सर्वश्री एस. वी. राजू, अपर महा सालिसिटर, मुकेश कुमार मरोड़िया, जोहेब हुसैन, अन्नाम वेंकटेश और अक्षय नयन

प्रत्यर्थियों की ओर से — सर्वश्री मुकुल रोहतगी, अमित देसाई, ज्येष्ठ अधिवक्तागण, महेश अग्रवाल, अंकुर सैगल, रोहन दक्षिणी, (सुश्री) पूजा, (सुश्री) कामाक्षी सहगल, (सुश्री) काजल दलाल, अर्चित जैन, राजेश कुमार और ई. सी. अग्रवाल

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति बेला एम. त्रिवेदी ने दिया ।

न्या. त्रिवेदी – इजाजत दी गई ।

2. अपीलार्थी-केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने 2022 के दांडिक प्रकीर्ण मामला सं. 6544 में दिल्ली उच्च न्यायालय द्‌वारा तारीख 30 मई, 2023 को पारित किए गए आक्षेपित निर्णय को चुनौती दी है जिसमें विशेष न्यायाधीश (भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम), सीबीआई-08, नई दिल्ली (जिसे इसमें इसके पश्चात् विशेष न्यायालय कहा गया है) द्‌वारा तारीख 3 दिसंबर, 2022 को पारित किए गए उस आदेश को कायम रखा गया है जिसके द्‌वारा प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत (डिफाल्ट बेल) दी गई है ।

3. संक्षेप में वे तथ्य जिनसे वर्तमान अपील उद्‌भूत हुई है यह है कि यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, नरीमन प्वाइंट, मुंबई के उप महाप्रबंधक श्री विपिन कुमार शुक्ला द्‌वारा दीवान हाउसिंग फाइनेंस कारपोरेशन लिमिटेड (डीएचएफएल) और 12 अन्य अभियुक्त व्यक्तियों/कंपनियों के विरुद्‌ध भारतीय दंड संहिता की धारा 409, 420 और 477क के साथ पठित धारा 120ख और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (जिसे इसमें इसके पश्चात् भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम कहा गया है) की धारा 13(1)(घ) के साथ पठित धारा 13(2) के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दर्ज की गई शिकायत के आधार पर केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो, एसी-VI/एसआईटी, नई दिल्ली में तारीख 20 जून, 2022 को एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. आरसी 2242022ए0001 रजिस्ट्रीकृत की गई थी । उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में, अन्य बातों के साथ-साथ, यह अभिकथन किया गया था कि डीएचएफएल, श्री कपिल वधावन, तत्कालीन अध्यक्ष और प्रबंध निदेशक, डीएचएफएल ने 12 अन्य अभियुक्त व्यक्तियों के साथ मिलकर यूनियन बैंक ऑफ इंडिया के नेतृत्व वाले 17 बैंकों के संघ के साथ छल करने के लिए एक आपराधिक षड्‌यंत्र रचा और उक्त आपराधिक षड्‌यंत्र के अनुसरण में उक्त अभियुक्त व्यक्तियों/ईकाइयों ने संघ के बैंकों को लगभग 42,000/- करोड़ रुपए के भारी-भरकम ऋण मंजूर करने के लिए उत्प्रेरित किया और उसके पश्चात् उन्होंने डीएचएफएल की लेखा बहियों का मिथ्याकरण करके उक्त निधियों के एक महत्वपूर्ण भाग को निकाल लिया और दुर्विनियोग किया तथा जानबूझकर तथा बेइमानी से उक्त संघ के बैंकों के विधिसम्मत शोध्यों

का भुगतान करने में व्यतिक्रम किया और तद्द्वारा जनवरी, 2010 से दिसंबर, 2019 की अवधि के दौरान इस संघ के ऋणदाताओं को 34,000/- करोड़ रुपए की सदोष हानि कारित की ।

4. प्रत्यर्थी सं. 1-कपिल वधावन और प्रत्यर्थी सं. 2-धीरज वधावन को अपीलार्थी-केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के संबंध में तारीख 19 जुलाई, 2022 को गिरफ्तार किया गया और तारीख 30 जुलाई, 2022 को न्यायिक अभिरक्षा में भेज दिया ।

5. अन्वेषण करने के पश्चात् केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा तारीख 15 अक्तूबर, 2022 को प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 सहित 75 व्यक्तियों/ इकाइयों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 206, 409, 411, 420, 424, 465, 468 और 477क के साथ पठित धारा 120ख तथा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(1)(घ) के साथ पठित धारा 13(2) के अधीन आरोप पत्र फाइल किया गया ।

6. प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 ने तारीख 29 अक्तूबर, 2022 को विशेष न्यायालय के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन इस आधार पर कानूनी जमानत की ईप्सा करते हुए आवेदन फाइल किया कि केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा फाइल किया गया आरोप पत्र अपूर्ण था और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन उपबंधित कानूनी अवधि के भीतर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(2) के अधीन यथा परिभाषित कोई अंतिम रिपोर्ट फाइल नहीं की गई थी, या अनुकल्पत: यह ईप्सा की गई कि न्यायालय को अधिकारिता न होने की बात को ध्यान में रखते हुए उनको न्यायिक अभिरक्षा से छोड़ा जाए क्योंकि वर्ष 2018 में यथा संशोधित भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 17क के अधीन कोई अनुमोदन नहीं था ।

7. विशेष न्यायालय ने तारीख 26 नवंबर, 2022 के आदेश द्वारा अभिनिर्धारित किया कि विशेष न्यायालय को मामले पर विचार करने की अधिकारिता है और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 17क के अधीन वर्जन मामले के तथ्यों को लागू नहीं होता । विशेष न्यायालय ने तारीख 26 नवंबर, 2022 के एक अलग आदेश द्वारा सभी 75

अभियुक्तों के विरुद्ध अभिकथित अपराधों का संज्ञान लिया और वर्तमान प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 (अभियुक्त-1 और अभियुक्त-2) के साथ-साथ अभियुक्त सं. 7 के विरुद्ध भी पेशी वारंट जारी किए । विशेष न्यायालय ने अन्य अभियुक्तों के विरुद्ध भी वारंट/समन जारी किए ।

8. इसके पश्चात्, विशेष न्यायालय ने तारीख 3 दिसंबर, 2022 के आदेश द्वारा यह अभिनिर्धारित करते हुए कि अन्वेषण अपूर्ण है और आरोप पत्र टुकड़ों में फाइल किया गया है, यह अभिनिर्धारित किया कि प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 (अभियुक्त-1 और अभियुक्त-2) दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन कानूनी जमानत के हकदार हैं ।

9. अपीलार्थी-केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने विशेष न्यायालय द्वारा तारीख 3 दिसंबर, 2022 को पारित किए गए उक्त आदेश से व्यथित होकर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439(2) के साथ पठित धारा 482 के अधीन उच्च न्यायालय के समक्ष एक आवेदन, 2022 का दांडिक प्रकीर्ण मामला सं. 6544, फाइल किया । उच्च न्यायालय ने तारीख 30 मई, 2023 के आक्षेपित आदेश द्वारा उक्त आवेदन को खारिज कर दिया और विशेष न्यायालय द्वारा तारीख 3 दिसंबर, 2022 को पारित किए गए आदेश को कायम रखा ।

दलीलें

10. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् अपर महासालिसिटर श्री एस. वी. राजू ने जोरदार रूप से यह दलील दी कि अपीलार्थी-केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा वर्तमान प्रत्यर्थियों सहित 75 अभियुक्तों के संबंध में अन्वेषण पूर्ण होने पर आरोप पत्र फाइल किया गया था जिसमें यह कहा गया था कि कुछ अन्य अभियुक्तों के संबंध में आगे अन्वेषण लंबित है, जिसका अर्थ यह नहीं है कि प्रत्यर्थियों के विरुद्ध अपूर्ण आरोप पत्र फाइल किया गया था । विद्वान् अपर महासालिसिटर ने दलील दी कि केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के अधीन फाइल की गई रिपोर्ट पूर्ण थी जिसमें विधि द्वारा अपेक्षित संपूर्ण ब्यौरा अंतर्विष्ट था । प्रस्तुत मामले में, निचले न्यायालयों द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन कानूनी जमानत विशेष न्यायालय

द्वारा प्रत्यर्थियों के विरुद्ध अभिकथित अपराधों का संज्ञान लेने के पश्चात् प्रदान की गई है जो संहिता की कानूनी स्कीम के विरुद्ध है । उनके अनुसार, केवल तभी जब आरोप पत्र फाइल नहीं किया जाता है और अन्वेषण लंबित रहता है, संहिता की धारा 167 की उपधारा (2) में संलग्न परंतुक का फायदा अपराधी को उपलब्ध होगा, तथापि, जब एक बार आरोप पत्र फाइल कर दिया जाता है, तो अभियुक्त का उक्त अधिकार समाप्त हो जाता है और ऐसा अधिकार केवल इसलिए पुनर्जीवित नहीं हो जाता है कि संहिता की धारा 173(8) के अर्थांतर्गत आगे और अन्वेषण लंबित है । श्री एस. वी. राजू ने अपनी दलीलों को पुष्ट करने के लिए **दिनेश डालमिया** बनाम **केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो**[1] वाले मामले में के विनिश्चय का जोरदार अवलंब लिया । उन्होंने **एम. रविन्द्रन** बनाम **आसूचना अधिकारी, राजस्व आसूचना निदेशालय**[2] वाले मामले में के निर्णय का भी यह दलील देने के लिए अवलंब लिया कि जहां अभियुक्त उस समय व्यतिक्रम जमानत के लिए आवेदन करने में असफल रहता है जब उसका अधिकार प्रोद्भूत होता है और बाद में मजिस्ट्रेट के समक्ष आरोप पत्र प्रस्तुत कर दिया जाता है, समय के विस्तार की ईप्सा करते हुए अतिरिक्त शिकायत या रिपोर्ट प्रस्तुत की जाती है, तो व्यतिक्रम जमानत का अधिकार समाप्त हो जाएगा ।

11. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री मुकुल रोहतगी ने दलील दी कि संज्ञान ले लेने के मुद्दे का व्यतिक्रम जमानत से कोई लेना-देना नहीं है क्योंकि धारा 167(2) के अधीन अधिकार तब एक कानूनी अधिकार हो जाता है जब आरोप पत्र विहित समय-सीमा के भीतर फाइल नहीं किया जाता है और यदि फाइल किया भी जाता है तो एक पूर्ण आरोप पत्र फाइल नहीं किया जाता है । उनके अनुसार, निचले न्यायालयों ने निष्कर्ष निकाला है कि यह एक अपूर्ण आरोप पत्र था जो केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा फाइल किया गया था, जो प्रत्यर्थियों को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत का फायदा पाने का हकदार बनाता है । श्री मुकुल

---

[1] (2007) 8 एस. सी. सी. 770.

[2] (2021) 2 एस. सी. सी. 485.

रोहतगी ने **सुरेश कुमार भीकमचंद जैन** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और एक अन्य**[1] वाले मामले में के विनिश्चय का अपनी इस दलील को पुष्ट करने के लिए अवलंब लिया कि संज्ञान लेने की बात यह अवधारण करने के लिए सुसंगत आधार नहीं है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत के प्रयोजनार्थ अन्वेषण पूर्ण है या नहीं । **राकेश कुमार पॉल** बनाम **असम राज्य**[2] वाले मामले में के विनिश्चय का भी यह दलील देने के लिए अवलंब लिया गया कि यदि आरोप पत्र फाइल नहीं किया जाता है और व्यतिक्रम जमानत के लिए अधिकार अजेयता की स्थिति में पहुंच गया है तो अभियोजन पक्ष द्वारा इसे किसी बहाने से विफल नहीं किया जा सकता । श्री रोहतगी ने विद्वान् अपर महासालिसिटर श्री एस. वी. राजू द्वारा अवलंब लिए गए **डालमिया** वाले (उपर्युक्त) मामले को यह दलील देते हुए प्रभेदित करना चाहा कि उक्त मामले में अभियुक्त फरार था और आरोप पत्र पहले ही फाइल किया जा चुका था, जबकि प्रस्तुत मामले में फाइल किए गए आरोप पत्र को अपूर्ण अभिनिर्धारित किया गया है । उनके अनुसार, दो न्यायालयों द्वारा अभिलिखित समवर्ती निष्कर्षों में, जब तक अनुचित न हों, हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए भले ही विधि की कोई त्रुटि हो । उन्होंने यह भी दलील दी कि जब एक बार जमानत प्रदान कर दी गई है और उच्च न्यायालय द्वारा पारित ऐसे आदेश के क्रियान्वयन पर रोक लगाने वाला अंतरिम आदेश उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित नहीं किया गया है, तो ऐसी कार्यवाही जमानत रद्द करने का रूप ले लेती है जिसके लिए मानदंड पूरी तरह से भिन्न हैं ।

12. प्रत्यर्थी सं. 2 की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री अमित देसाई ने प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री मुकुल रोहतगी द्वारा दी गई दलीलों को अपनाया और यह भी दलील दी कि आरोप पत्र फाइल करना प्रत्यर्थियों को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन दिए गए अजेय अधिकार को विफल करने के लिए एक दाव-पेंच या चाल थी ।

---

[1] (2013) 3 एस. सी. सी. 77.

[2] (2017) 15 एस. सी. सी. 67.

विश्लेषण

13. इस अपील में हमारे विचार के लिए मुख्य प्रश्न यह है कि क्या प्रत्यर्थी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 की उपधारा (2) के परंतुक के अधीन प्रदत्त कानूनी अधिकार के फायदे के लिए इस आधार पर हकदार थे कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में नामित कुछ अभियुक्तों के संबंध में अन्वेषण लंबित था, यद्यपि प्रत्यर्थियों के साथ-साथ अन्य अभियुक्तों के विरुद्ध धारा 173 की उपधारा (2) के अधीन रिपोर्ट (आरोप पत्र) विहित समय-सीमा के भीतर फाइल की गई थी और यद्यपि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत की ईप्सा करते हुए प्रत्यर्थियों के आवेदन पर विचार करने से पूर्व विशेष न्यायालय द्वारा अपराध का संज्ञान ले लिया गया था ?

14. पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों द्वारा दी गई दलीलों का बेहतर मूल्यांकन करने के लिए धारा 167 और धारा 173 के सुसंगत भागों को नीचे उद्धृत किया जाता है :–

> "**167. जब चौबीस घंटे के अंदर अन्वेषण पूरा न किया जा सके तब प्रक्रिया –**
>
> 1. ....
>
> 2. वह मजिस्ट्रेट, जिसके पास अभियुक्त व्यक्ति इस धारा के अधीन भेजा जाता है, चाहे उस मामले के विचारण की उसे अधिकारिता हो या न हो, अभियुक्त का ऐसी अभिरक्षा में, जैसी वह मजिस्ट्रेट ठीक समझे, इतनी अवधि के लिए, जो कुल मिलाकर पंद्रह दिन से अधिक नहीं होगी, निरुद्ध किया जाना समय-समय पर प्राधिकृत कर सकता है तथा यदि उसे मामले के विचारण की या विचारण के लिए सुपुर्द करने की अधिकारिता नहीं है और अधिक निरुद्ध रखना उसके विचार में अनावश्यक है तो वह अभियुक्त को ऐसे मजिस्ट्रेट के पास, जिसे ऐसी अधिकारिता है, भिजवाने के लिए आदेश दे सकता है :
>
> परंतु –

(क) मजिस्ट्रेट अभियुक्त व्यक्ति का पुलिस अभिरक्षा से अन्यथा निरोध पंद्रह दिन की अवधि से आगे के लिए उस दशा में प्राधिकृत कर सकता है, जिसमें उसका समाधान हो जाता है कि ऐसा करने के लिए पर्याप्त आधार हैं किंतु कोई भी मजिस्ट्रेट अभियुक्त व्यक्ति को इस पैरा के अधीन अभिरक्षा में निरोध, –

(i) कुल मिलाकर नब्बे दिन से अधिक की अवधि के लिए प्राधिकृत नहीं करेगा जहां अन्वेषण ऐसे अपराध के संबंध में है जो मृत्यु, आजीवन कारावास या दस वर्ष से अन्यून की अवधि के लिए कारावास से दंडनीय है ;

(ii) कुल मिलाकर साठ दिन से अधिक की अवधि के लिए प्राधिकृत नहीं करेगा जहां अन्वेषण किसी अन्य अपराध के संबंध में है, और यथास्थिति, नब्बे दिन या साठ दिन की उक्त अवधि की समाप्ति पर यदि अभियुक्त व्यक्ति जमानत देने के लिए तैयार है और दे देता है तो उसे जमानत पर छोड़ दिया जाएगा और यह समझा जाएगा कि इस उपधारा के अधीन जमानत पर छोड़ा गया प्रत्येक व्यक्ति अध्याय 33 के प्रयोजनों के लिए उस अध्याय के उपबंधों के अधीन छोड़ा गया है ;

(ख) ....

(ग) ....

173. अन्वेषण के समाप्त हो जाने पर पुलिस अधिकारी की रिपोर्ट –

(1) इस अध्याय के अधीन किया जाने वाला प्रत्येक अन्वेषण अनावश्यक विलंब के बिना पूरा किया जाएगा ।

(1क) धारा 376, 376क, 376कख, 376ख, 376ग, 376घ, 376घक, 376घख या धारा 376ङ के अधीन अपराध के संबंध में

अन्वेषण उस तारीख से आरंभ होगा, जिसको पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी द्वारा इत्तिला अभिलिखित की गई थी ।

(2) (i) जैसे ही वह पूरा होता है, वैसे ही पुलिस थाने का भारसाधक अधिकारी पुलिस रिपोर्ट पर उस अपराध का संज्ञान करने के लिए सशक्त मजिस्ट्रेट को राज्य सरकार द्वारा विहित प्ररूप में एक रिपोर्ट भेजेगा, जिसमें निम्नलिखित बातें कथित होंगी :–

(क) पक्षकारों के नाम ;

(ख) इत्तिला का स्वरूप ;

(ग) मामले की परिस्थितियों से परिचित प्रतीत होने वाले व्यक्तियों के नाम ;

(घ) क्या कोई अपराध किया गया प्रतीत होता है और यदि किया गया प्रतीत होता है, तो किसके द्वारा ;

(ड.) क्या अभियुक्त को गिरफ्तार कर लिया गया है ;

(च) क्या वह अपने बंधपत्र पर छोड़ दिया गया है और यदि छोड़ दिया गया है तो वह बंधपत्र प्रतिभुओं सहित है या प्रतिभुओं रहित ;

(छ) क्या वह धारा 170 के अधीन अभिरक्षा में भेजा जा चुका है ।

(ज) जहां अन्वेषण भारतीय दंड संहिता,1860 (1860 का 45) की धारा 376, 376क, 376कख, 376ख, 376ग, 376घ, 376घक, 376घख या धारा 376ङ के अधीन किसी अपराध के संबंध में है, वहां क्या स्त्री की चिकित्सा परीक्षा की रिपोर्ट संलग्न की गई है ।

(ii) वह अधिकारी अपने द्वारा की गई कार्यवाही की संसूचना उस व्यक्ति को, यदि कोई हो, जिसने अपराध किए जाने के संबंध में सर्वप्रथम इत्तिला दी उस रीति से देगा, जो राज्य सरकार द्वारा विहित की जाए ।

(3) ....

(4) .... ।”

15. इस सुस्थिर विधिक स्थिति से कोई असहमति नहीं हो सकती कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत का अधिकार न केवल एक कानूनी अधिकार है बल्कि ऐसा अधिकार है जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 से प्राप्त है । यह एक अजेय अधिकार है, तो भी यह चालान या आरोप पत्र फाइल करने से पूर्व ही प्रवर्तनीय है और यदि इसका फायदा नहीं उठाया गया है तो चालान फाइल होने पर यह बना नहीं रहता है या प्रवर्तनीय नहीं रहता है । जब एक बार चालान फाइल कर दिया गया है, तो जमानत देने के प्रश्न पर चालान फाइल करने के पश्चात् अभियुक्त को जमानत देने से संबंधित उपबंधों के अधीन मामले के गुणागुण के संदर्भ में ही विचार और इसका विनिश्चय किया जाना चाहिए । **संजय दत्त** बनाम **राज्य मार्फत केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो, बंबई (II)**[1] वाले मामले में संविधान न्यायपीठ ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के साथ पठित आतंकवादी और विध्वंसकारी क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम, 1987 की धारा 20(4)(खक) के उपबंधों पर विचार करते हुए अति महत्वपूर्ण रूप से यह अभिनिर्धारित किया कि :–

> “48. हमें इस बाबत कोई संदेह नहीं कि धारा 20(4)(खक) के फलस्वरूप जमानत पर छोड़े जाने के अभियुक्त के अजेय अधिकार की प्रकृति से संबंधित हमारे समक्ष अवस्थिति इस विनिश्चय में उपदर्शित सिद्धांत के सही पठन पर आधारित है । <u>ऐसी स्थिति में अभियुक्त को प्रोदभूत अजेय अधिकार चालान फाइल किए जाने से पूर्व ही प्रवर्तनीय हैं और यदि इससे पहले लाभ नहीं उठाया गया है तो यह चालान फाइल किए जाने पर बना नहीं रहता है अथवा लागू नहीं रहता है ।</u> एक बार चालान फाइल किए जाने पर जमानत मंजूर किए जाने के प्रश्न पर विचार और इसका विनिश्चय चालान फाइल किए जाने के पश्चात् अभियुक्त को जमानत मंजूर किए

[1] (1994) 5 एस. सी. सी. 410.

जाने से संबंधित उपबंधों के अधीन मामले के गुणागुण के प्रति निर्देश करते हुए किया जाना चाहिए । चालान फाइल किए जाने के उपरांत अभियुक्त की अभिरक्षा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 द्वारा शासित न होकर विभिन्न उपबंधों द्वारा शासित होती है । यदि अभियुक्त को वह अधिकार प्रोद्भूत हुआ था किंतु इसे चालान फाइल किए जाने तक लागू नहीं किया गया, तो इसे इसके पश्चात् लागू किए जाने का कोई प्रश्न ही नहीं है क्योंकि यह चालान फाइल किए जाते ही निर्वापित हो जाता है क्योंकि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 लागू नहीं रहती है । खंड न्यायपीठ ने यह भी उपदर्शित किया कि यदि अभियुक्त को जमानत पर छोड़े जाने के लिए आवेदन किया जाता है और धारा 20(4)(खख) के परंतुक के अनुसार अन्वेषण पूरा करने के लिए समय के विस्तारण की भी प्रार्थना की जाती है, तो इन दोनों पर एक साथ विचार किया जाना चाहिए । यह स्पष्ट है कि ऐसे किसी मामले में उस समय तक किसी प्रकार की जमानत मंजूर नहीं की जा सकती है जब तक कि अवधि के विस्तारण की प्रार्थना नामंजूर नहीं कर दी जाती । संक्षेप में, ऐसी स्थिति में जमानत का मंजूर किया जाना समय विस्तारण की प्रार्थना, यदि ऐसी प्रार्थना की जाती है, के नामंजूर किए जाने के भी अध्यधीन है । यदि अभियुक्त, यथास्थिति, 180 दिन की अवधि या विस्तारित अवधि की समाप्ति पर इस उपबंध के अधीन जमानत के लिए आवेदन करता है, तो उसे तत्काल जमानत पर छोड़ दिया जाएगा । इस प्रकार जमानत पर छोड़े गए अभियुक्त को गिरफ्तार करके दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों के अनुसार अभिरक्षा के सुपुर्द किया जा सकता है । संविधान न्यायपीठ के विनिश्चयों से यह स्थिर है कि प्रतिप्रेषण के विधिमान्य आदेश के अभाव में या अभियुक्त के निरोध के आधार पर बंदी नियम के घोषित किए जाने की तारीख को अभिरक्षा या निरोध किसी विधिमान्य आदेश पर आधारित है । निरंजन सिंह नाथवान **बनाम** पंजाब राज्य {(1952) 1 एस. सी. सी. 118 = [1952] एस. सी. आर 395 = ए. आई. आर. 1952 एस. सी. 106 =1952 क्रिमिनल ला जर्नल

456}, रामनारायण सिंह **बनाम** दिल्ली राज्य और अन्य {[1953] एस. सी. आर. 652 = ए. आई. आर. 1953 एस. सी. 270 = 1953 क्रिमिनल ला जर्नल 1113} और ए. के. गोपालन **बनाम** भारत सरकार [(1966) 2 एस. सी. सी. 427 = ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 816 = 1966 क्रिमिनल ला जर्नल 602] वाले मामले दृष्टव्य हैं ।"

16. **सुरेश कुमार भीकमचंद जैन** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और एक अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में अभियुक्त-अपीलार्थी ने धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत की इस आधार पर ईप्सा की थी कि यद्यपि आरोप पत्र अनुबंधित समय के भीतर फाइल किया गया था किंतु अभियुक्त का अभियोजन करने के लिए मंजूरी के अभाव में न्यायालय द्वारा संज्ञान नहीं लिया गया था । न्यायालय ने अभियुक्त के दावे को निरस्त करते हुए यह अभिनिर्धारित किया :–

"17. हमारे मत में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 के अधीन कहीं भी मंजूरी देने की परिकल्पना नहीं की गई है । उक्त धारा में जो परिकल्पना की गई है वह विभिन्न प्रकार के मामलों के संबंध में अनुबंधित अवधि के भीतर अन्वेषण पूर्ण करने और अन्वेषण प्राधिकारियों द्वारा ऐसा करने में असफल रहने पर अभियुक्त को जमानत पर छोड़े जाने के अधिकार की परिकल्पना है । अन्वेषण के प्रक्रम के दौरान पहले अभियुक्त के प्रतिप्रेषण से संबंधित उपबंधों और उसके पश्चात् संज्ञान लेने के बाद के उपबंधों की स्कीम से यह उपदर्शित होता है कि विधान मंडल का आशय कतिपय अपराधों का अन्वेषण साठ दिनों के भीतर पूरा करने का था और मृत्यु दंड, आजीवन कारावास या दस वर्ष से अन्यून अवधि के कारावास से दंडनीय अपराधों का अन्वेषण नब्बे दिनों के भीतर पूरा करने का था । यदि अन्वेषण प्राधिकारियों द्वारा अन्वेषण पूरा नहीं किया जाता है, तो अभियुक्त को जमानत दिए जाने का एक अजेय अधिकार अर्जित हो जाता है, यदि वह जमानत देने की पेशकश करता है । तद्नुसार, यदि 61वें या 91वें दिन कोई अभियुक्त आरोप पत्र फाइल न होने की स्थिति में जमानत पर

छोड़े जाने के लिए आवेदन करता है, तो न्यायालय के पास अभियुक्त को जमानत पर छोड़े जाने के अलावा कोई विकल्प नहीं है । उक्त उपबंध पर विभिन्न मामलों में विचार किया गया है और उसका निर्वचन किया गया है, जैसे कि पहले इसमें निर्दिष्ट किए गए हैं । नटबर परिदा वाले मामले [(1975) 2 एस. सी. सी. 220 = 1975 एस. सी. सी. (क्रि.) 484] और संजय दत्त [(1994) 5 एस. सी. सी. 410 = 1994 एस. सी. सी. (क्रि.) 1433] वाले दोनों मामले ऐसे थे जहां आरोप पत्र दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) में अनुबंधित अवधि के भीतर फाइल नहीं किया गया था और आरोप पत्र फाइल करने से पूर्व जमानत के लिए आवेदन करने पर इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि यदि आरोप पत्र फाइल करने से पूर्व ऐसा आवेदन किया गया था तो अभियुक्त को जमानत देने का अजेय अधिकार प्राप्त है, किंतु आरोप पत्र फाइल हो जाने के बाद ऐसा अधिकार समाप्त हो जाता है और अभियुक्त गुणागुण के आधार पर नियमित जमानत के लिए प्रार्थना करने का हकदार होगा ।

18. इनमें से कोई भी मामला इस स्थिति से अलग नहीं है कि एक बार जब अनुबंधित समय के भीतर आरोप पत्र फाइल कर दिया जाता है, तो व्यतिक्रम जमानत या कानूनी जमानत देने का प्रश्न ही नहीं उठता । <u>जैसाकि इसमें ऊपर उपदर्शित किया है, हमारे मत में, इस मामले में आरोप पत्र फाइल करना धारा 167(2)(क)(ii) के उपबंधों का पर्याप्त अनुपालन है । संज्ञान लिया गया है या नहीं, यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 के संबंध में तात्विक नहीं है ।</u> यदि आरोप पत्र फाइल नहीं किया गया होता तो याची को जो अधिकार प्रोद्भूत हो सकते थे, वे इस मामले के तथ्यों को लागू नहीं होते । केवल इस कारण कि अभियुक्त का अभियोजन करने के लिए और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 309 के प्रक्रम से आगे बढ़ने के लिए मंजूरी अभिप्राप्त नहीं की गई थी, यह नहीं कहा जा सकता कि अभियुक्त दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 में परिकल्पित कानूनी जमानत देने का हकदार है । <u>दंड प्रक्रिया संहिता</u>

की धारा की स्कीम ऐसी है कि एक बार अन्वेषण का प्रक्रम पूर्ण हो जाने के पश्चात् न्यायालय अगले प्रक्रम में आगे बढ़ती है, जो संज्ञान लेने और विचारण करने का प्रक्रम है । अभियुक्त को किसी न्यायालय की अभिरक्षा में रहना पड़ता है । अन्वेषण की अवधि के दौरान अभियुक्त उस मजिस्ट्रेट की अभिरक्षा में होता है जिसके समक्ष उसे पहली बार पेश किया जाता है । उस प्रक्रम के दौरान, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन मजिस्ट्रेट को 10 वर्ष से कम दंडनीय अपराधों के मामलों में अभियुक्त को एक बार में 15 दिनों के लिए और अधिकतम 60 दिनों की अवधि तक तथा जहां अपराध 10 वर्ष से ऊपर या यहां तक कि मृत्यु दंडादेश से दंडनीय हैं वहां 90 दिनों के लिए पुलिस अभिरक्षा और/या न्यायिक अभिरक्षा में भेजने का प्राधिकार विहित है । यदि अन्वेषण प्राधिकारी अनुबंधित अवधि के भीतर आरोप पत्र फाइल करने में असफल रहता है, तो अभियुक्त कानूनी जमानत पर छोडे जाने का हकदार है । ऐसी स्थिति में, अभियुक्त उतने समय तक मजिस्ट्रेट की अभिरक्षा में रहता है जब तक कि अपराध का विचारण करने वाले न्यायालय द्वारा संज्ञान नहीं लिया जाता है और तब उक्त न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 309 के निबंधनों के अनुसार विचारण के दौरान प्रतिप्रेषण के प्रयोजनों के लिए अभियुक्त की अभिरक्षा को ग्रहण करता है । ये दोनों प्रक्रम अलग-अलग हैं, किंतु एक दूसरे के बाद आता है जिससे कि न्यायालय के साथ अभियुक्त की अभिरक्षा की निरंतरता बनी रहे ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

17. पुनः, **गंभीर धोखाधड़ी अन्वेषण कार्यालय** बनाम **राहुल मोदी और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने **सुरेश कुमार भीकमचंद जैन** (उपर्युक्त) वाले मामले का अनुसरण करते हुए यह मत व्यक्त किया :–

"11. **भीकमचंद जैन** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय से यह स्पष्ट है कि आरोप पत्र फाइल कर देने से दंड

[1] 2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 153.

प्रक्रिया संहिता की धारा 167 के उपबंधों का पर्याप्त अनुपालन हो जाता है और अभियुक्त धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत पर छोड़े जाने के लिए इस आधार पर मांग नहीं कर सकता कि संज्ञान 60 दिन के पर्यवसान से पूर्व नहीं लिया गया है । अभियुक्त तब तक मजिस्ट्रेट की अभिरक्षा में रहता है जब तक कि अपराध का विचारण करने वाले न्यायालय द्वारा संज्ञान नहीं लिया जाता है, जो संज्ञान लेने के पश्चात् प्रतिप्रेषण के प्रयोजन के लिए अभियुक्त की अभिरक्षा ग्रहण करता है । उच्च न्यायालय का यह निष्कर्ष कि अभियुक्त को धारा 167 के अधीन 60 दिनों की अवधि के परे प्रतिप्रेषण पर नहीं रखा जा सकता और आगे प्रतिप्रेषण केवल संज्ञान लेने के बाद के प्रक्रम में ही हो सकता है, भीकमचंद जैन (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय को ध्यान में रखते हुए सही नहीं है ।'

18. वर्तमान मामले में, जैसाकि अभिलेख से प्रकट होता है, प्रत्यर्थियों (अभियुक्त-1 और अभियुक्त-2) को प्रश्नगत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के संबंध में तारीख 19 जुलाई, 2022 को गिरफ्तार किया गया था और केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा प्रत्यर्थियों के साथ-साथ अन्य 73 अभियुक्तों के विरुद्ध धारा 173(2) के अधीन लगभग 900 पृष्ठों की रिपोर्ट (आरोप पत्र) तारीख 15 अक्तूबर, 2022 को फाइल की गई थी । उक्त रिपोर्ट में पैरा सं. 66 में यह कहा गया था कि :–

"66. प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में नामित शेष अभियुक्त व्यक्तियों अर्थात् श्री सुधाकर शेत्री, मैसर्स एमरीलिस रियलटर्स और मैसर्स गुलमर्ग रियलटर्स, शेष मानद लेखाकारों (सीए) (जिन्होंने ई-डीएचएफएल और छद्म (शेल) कंपनियों के तुलन-पत्रों की संपरीक्षा की थी और जिन्होंने प्रवर्तकों की सहायता की थी), छद्म कंपनियों और अन्य वधावन समूह की कंपनियों के माध्यम से अपवर्तन (डाइवर्ट) की गई निधियों के अंतिम हिताधिकारियों/अंतिम उपयोक्ताओं, डीएचएफएल के पदधारियों, डीएचएफएल के शेयरों की अंदरखाने से शेयर ट्रेडिंग करने वालों, बैंक के पदधारियों, एनएचबी पदधारियों की भूमिका अभिनिश्चित करने और अन्य संबंधित मुद्दों

के संबंध में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(8) के अधीन आगे का अन्वेषण जारी है ।

अतिरिक्त साक्षियों और अतिरिक्त दस्तावेजों की सूची आवश्यकतानुसार फाइल की जाएगी ।

अत: विनम्रतापूर्वक प्रार्थना की जाती है कि उपर्युक्त अभियुक्तों को समन किया जाए और विधि के उपबंधों के अनुसार उनका विचारण किया जाए ।"

19. इसके पश्चात् विशेष न्यायालय ने तारीख 26 नवंबर, 2022 के आदेश के अनुसार अभिकथित अपराधों का संज्ञान लिया । यह प्रतीत होता है कि इससे पहले विशेष न्यायालय ने प्रत्यर्थियों (अभियुक्तों) द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन कानूनी जमानत की ईप्सा करते हुए आवेदन को खारिज कर दिया था, तथापि, उस समय विवाद्यक यह था कि क्या प्रत्यर्थियों के विरुद्ध अपराधों के संबंध में अन्वेषण अभिकरण द्वारा आरोप पत्र फाइल न करने के कारण आज्ञापक जमानत देने के लिए साठ या नब्बे दिन की अवधि लागू होती है या नहीं, और विशेष न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि प्रत्यर्थियों के मामले में नब्बे दिन की अवधि लागू होती है जिसमें केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा आरोप पत्र फाइल किया जा सकता था । इसके पश्चात् प्रत्यर्थियों ने विशेष न्यायालय द्वारा अपराधों का संज्ञान लिए जाने के पश्चात् धारा 167(2) के अधीन एक अन्य आवेदन इस आधार पर फाइल किया कि उनके विरुद्ध फाइल किया गया आरोप पत्र एक अपूर्ण आरोप पत्र था ।

20. इस अपील में प्रत्यर्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा उठाए गए विवाद का मुख्य बिंदु यह है कि अपीलार्थी-केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा आरोप पत्र के पैरा 66 में उल्लिखित अनुसार अन्य प्रत्यर्थियों के संबंध में अन्वेषण को खुला रखा गया है इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के संघटकों का अनुपालन किया गया है और इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि धारा 173 के अधीन रिपोर्ट/आरोप पत्र एक पूर्ण आरोप पत्र है । यह बात

अतात्विक है कि न्यायालय द्वारा संज्ञान लिया गया है या नहीं । उनके अनुसार, प्रत्यर्थियों और अन्य के विरुद्ध फाइल किया गया आरोप पत्र प्रत्यर्थियों को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन प्रदत्त अजेय अधिकार को विफल करने के लिए एक दाव-पेंच या चाल थी ।

21. हमारी राय में, **के. वीरास्वामी** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] वाले मामले में संविधान न्यायपीठ ने धारा 173(2) की व्याप्ति को उपयुक्त रूप से स्पष्ट किया है :–

> "76. आरोप पत्र कुछ और नहीं अपितु दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(2) के अधीन पुलिस अधिकारी की अंतिम रिपोर्ट है । धारा 173(2) में उपबंधित है कि अन्वेषण पूर्ण होने पर संज्ञेय अपराध का अन्वेषण करने वाला पुलिस अधिकारी एक रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा । रिपोर्ट राज्य सरकार द्वारा विहित किए गए प्ररूप में होनी चाहिए और उसमें (क) पक्षकारों के नाम ; (ख) सूचना की प्रकृति ; (ग) उन व्यक्तियों के नाम जो मामले की परिस्थितियों से परिचित प्रतीत होते हैं ; (घ) क्या कोई अपराध किया गया प्रतीत होता है और यदि हां, तो किसके द्वारा ; (ङ) क्या अभियुक्त को गिरफ्तार किया गया है ; (च) क्या उसे उसके बंधपत्र पर छोड़ दिया गया था और यदि हां, तो प्रतिभुओं के साथ या प्रतिभुओं के बिना ; और (छ) क्या उसे धारा 170 के अधीन अभिरक्षा में भेजा गया है । जैसाकि इस न्यायालय द्वारा सत्य नारायण मुसदी **बनाम** बिहार राज्य [(1980) 3 एस. सी. सी. 152, 157 = 1980 एस. सी. सी. (क्रि.) 660] वाले मामले में मत व्यक्त किया गया है कि <u>धारा 173(2) के अधीन रिपोर्ट की कानूनी अपेक्षा का अनुपालन हो जाएगा यदि इस धारा में विहित विभिन्न ब्यौरों को रिपोर्ट में सम्मिलित किया गया है । यह रिपोर्ट मजिस्ट्रेट को एक सूचना होती है कि एक संज्ञेय अपराध का अन्वेषण करने के उपरांत अन्वेषण अधिकारी न्यायालय द्वारा अपराध की जांच करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य जुटाने में समर्थ रहा है और आवश्यक जानकारी</u>

[1] (1991) 3 एस. सी. सी. 655.

न्यायालय को भेजी जा रही है । वास्तव में, धारा 173(2) के अधीन रिपोर्ट तात्पर्यित रूप से अन्वेषण अधिकारी की यह राय होती है कि वह न्यायालय द्‌वारा अभियुक्त के विचारण के लिए पर्याप्त सामग्री जुटाने में समर्थ रहा है । रिपोर्ट तभी पूर्ण मानी जाएगी यदि उसके साथ धारा 175(5) द्‌वारा यथा अपेक्षित सभी दस्तावेज और साक्षियों के कथन हों । अन्वेषण अधिकारी की रिपोर्ट में कुछ और अधिक बताने की आवश्यकता नहीं है । यह भी आवश्यक है कि अपराध का पूरा ब्यौरा अवश्य बताया जाए । अपराध के ब्यौरे को बाद के प्रक्रम पर अर्थात् मामले के विचारण के दौरान स्वीकार्य साक्ष्य प्रस्तुत करके अभियुक्त को दोषी सिद्‌ध करने के लिए साबित किया जाना आवश्यक है ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

22. उपरोक्त स्थिर विधिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए कोई संदेह नहीं रह जाता है कि धारा 173(2) के अधीन रिपोर्ट की कानूनी अपेक्षा का अनुपालन हो जाएगा यदि इस धारा में विहित विभिन्न ब्यौरों को रिपोर्ट में सम्मिलित किया गया है । धारा 173 के अधीन रिपोर्ट न्यायालय को यह एक सूचना होती है कि संज्ञेय अपराध का अन्वेषण करने के उपरांत अन्वेषण अधिकारी न्यायालय द्‌वारा अपराध की जांच करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य जुटाने में समर्थ रहा है और आवश्यक जानकारी न्यायालय को भेजी जा रही है । रिपोर्ट पूर्ण है यदि उसके साथ धारा 175(5) द्‌वारा यथा अपेक्षित सभी दस्तावेज और साक्षियों के कथन हैं । जैसाकि पूर्वोक्त मामले में निश्चित किया गया है, यह आवश्यक नहीं है कि अपराध के सभी ब्यौरों का अवश्य उल्लेख किया जाए ।

23. संहिता की धारा 167 की उपधारा (2) में संलग्न परंतुक का फायदा अपराधी को तभी उपलब्ध होगा जब आरोप पत्र फाइल नहीं किया गया हो और उसके विरुद्‌ध अन्वेषण लंबित रखा गया हो । तथापि, जब एक बार आरोप पत्र फाइल कर दिया जाता है, तो उक्त अधिकार समाप्त हो जाता है । यह ध्यान देने योग्य है कि धारा 173 की उपधारा (8) के निबंधनों के अनुसार आगे अन्वेषण करने के लिए प्रार्थना करने का

अन्वेषण अधिकारी का अधिकार केवल इसलिए नहीं छिन जाता है क्योंकि अभियुक्त के विरुद्ध इसकी उपधारा (2) के अधीन आरोप पत्र फाइल कर दिया गया है । यद्यपि, आमतौर पर अभियोजन पक्ष द्वारा अवलंब लिए गए सभी दस्तावेजों को आरोप पत्र के साथ संलग्न किया जाना चाहिए, तो भी कुछ कारणों से यदि सभी दस्तावेज आरोप पत्र के साथ फाइल नहीं किए जाते हैं, तो उस कारण से आरोप पत्र स्वयमेव अविधिमान्य या दूषित नहीं हो जाएगा । यह भी सुस्थिर है कि न्यायालय अपराध का संज्ञान लेता है, अपराधी का नहीं । जब एक बार आरोप पत्र के साथ प्रस्तुत सामग्री से अपराध के कारित हो जाने के बारे में न्यायालय का समाधान हो जाता है और अभियुक्त द्वारा अभिकथित रूप से किए गए अपराध का संज्ञान ले लेता है, तो यह अतात्विक है कि धारा 173(8) के अधीन आगे का अन्वेषण लंबित है या नहीं । अन्य अभियुक्तों के संबंध में आगे का अन्वेषण लंबित रहने या आरोप पत्र फाइल करने के समय पर प्रस्तुत करने वाले कुछ दस्तावेजों के उपलब्ध न होने से न तो आरोप पत्र दूषित हो जाएगा और न ही इससे अभियुक्त इस आधार पर कानूनी जमानत का दावा करने का हकदार हो जाएगा कि आरोप पत्र एक अपूर्ण आरोप पत्र था या आरोप पत्र दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(2) के निबंधनों के अनुसार फाइल नहीं किया गया था ।

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

24. **दिनेश डालमिया** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(8) के मुकाबले धारा 167(2) की व्याप्ति को विस्तृत रूप से स्पष्ट किया है । इस अपील के प्रयोजनार्थ सुसंगत पैराओं को इसमें नीचे उद्धृत किया जाता है :–

> "19. आरोप पत्र संहिता की धारा 173 की उपधारा (2) के अर्थान्तर्गत एक अंतिम रिपोर्ट होती है । यह इसलिए फाइल की जाती है जिससे कि संबंधित न्यायालय यह विचार कर सके कि उस पर अपराध का संज्ञान लिया जाए या नहीं । रिपोर्ट आमतौर पर इसके लिए विहित किए गए प्ररूप में फाइल की जाती है । पुलिस रिपोर्ट प्रस्तुत करने की आवश्यकताओं में से एक यह है कि क्या

कोई अपराध किया गया प्रतीत होता है और यदि किया गया है, तो किसके द्वारा किया गया है । कुछ मामलों में, अभियुक्त को गिरफ्तार न किया गया हो, हो सकता है उसके विरुद्ध अन्वेषण पूरा न हुआ हो । इस विनिश्चय पर पहुंचने के लिए पर्याप्त सामग्री न हो कि फरार अभियुक्त भी एक ऐसा व्यक्ति है जिसके द्वारा अपराध किया गया प्रतीत होता है । यदि अन्वेषण अधिकारी को ऐसे अभियुक्त के विरुद्ध भी पर्याप्त साक्ष्य मिलता है जो फरार था, तो हमारी राय में, विधि यह अपेक्षा नहीं करती है कि अभियुक्त की गिरफ्तारी हो जाने तक आरोप पत्र फाइल न किया जाए ।

20. निर्विवाद रूप से, धारा 173 की उपधारा (8) के निबंधनों के अनुसार आगे का अन्वेषण करने के लिए प्रार्थना करने की अन्वेषण अधिकारी की शक्ति केवल इसलिए नहीं छिन जाती है क्योंकि इसकी उपधारा (2) के अधीन आरोप पत्र फाइल नहीं किया गया है । मजिस्ट्रेट द्वारा अपराध का संज्ञान लेने का आदेश किए जाने पर भी आगे का अन्वेषण अनुज्ञेय है ।

21. ....

22. यह सही है कि मामूली तौर पर आरोप पत्र के साथ सभी दस्तावेज होते हैं । किंतु इस मामले में कुछ दस्तावेज फाइल नहीं किए जा सके थे जो केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो के कब्जे में नहीं थे और जो जीईक्यूडी के पास थे । जैसाकि इसमें पहले उपदर्शित किया गया है, उक्त दस्तावेज तारीख 20 जनवरी, 2006 को फाइल किए गए बताए गए हैं जबकि अपीलार्थी को तारीख 12 फरवरी, 2006 को गिरफ्तार किया गया था । अपीलार्थी की यह दलील नहीं है कि आरोप पत्र के साथ ऐसे दस्तावेजों को फाइल न करने से उस पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है । भले ही सभी दस्तावेज फाइल नहीं किए गए थे, इस कारण से आरोप पत्र का फाइल किया जाना विधि की दृष्टि में स्वयमेव दूषित नहीं हो जाता है । आरोप पत्र पर कार्रवाई की गई है क्योंकि उसके आधार पर संज्ञान लेने का आदेश पारित किया गया था । अपीलार्थी ने अपराध का संज्ञान लेने वाले

उक्त आदेश को प्रश्नगत नहीं किया है । उक्त आरोप पत्र की वैधता भी प्रश्नगत नहीं है ।

23. से 27. ....

28. अब यह बात सुस्थिर है कि <u>न्यायालय अपराध का संज्ञान लेता है, अपराधी का नहीं</u> । अनिल सरन **बनाम** बिहार राज्य [(1995) 6 एस. सी. सी. 142 = 1995 एस. सी. सी. (क्रि.) 1051] और पापुलर मुथैया **बनाम** राज्य [(2006) 7 एस. सी. सी. 296 = (2006) 3 एस. सी. सी. (क्रि.) 245 वाले मामले देखें] ।

29. किसी अभियुक्त को या तो संहिता की धारा 167 की उपधारा (2) या इसकी धारा 309 की उपधारा (2) के निबंधनों के अनुसार प्रतिप्रेषण पर भेजने की न्यायालय की शक्ति विचारण के प्रक्रमों पर निर्भर करेगी । संहिता की धारा 167 की उपधारा (2) उस मामले में लागू होगी जहां संज्ञान नहीं लिया गया है, जबकि संहिता की धारा 309 की उपधारा (2) केवल संज्ञान लिए जाने के पश्चात् ही लागू होगी ।

30. यदि श्री रोहतगी की दलील को स्वीकार किया जाए, तो मजिस्ट्रेट को न केवल आरोप पत्र को अवैध घोषित करना चाहिए था, बल्कि उसे संज्ञान लेने के अपने आदेश को भी वापस ले लेना चाहिए था । आमतौर पर, वह ऐसा नहीं कर सकते थे । [अदालत प्रसाद **बनाम** रूपलाल जिंदल (2004) 7 एस. सी. सी. 338 = 2004 एस. सी. सी. (क्रि.) 1927, सुब्रमण्यम सेथुरमन **बनाम** महाराष्ट्र राज्य (2004) 13 एस. सी. सी. 324 = 2005 एस. सी. सी. (क्रि.) 242 = 2004 (7) स्केल 733 और एवरेस्ट एडवराटाइजिंग (प्रा.) लि. **बनाम** राज्य, राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र दिल्ली सरकार (2007) 5 एस. सी. सी. 54 = (2007) 2 एस. सी. सी. (क्रि.) 444 = जेटी (2007) 5 एस. सी. 529 वाले मामले देखें] । यह भी सुस्थिर है कि यदि कोई काम प्रत्यक्ष रूप से नहीं किया जा सकता, तो उसे अप्रत्यक्ष रूप से किया जाना अनुज्ञात नहीं किया जा सकता । यदि संज्ञान लेने का आदेश विद्यमान है, तो केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो

द्वारा अन्वेषण को खुला मानने के आचरण या धारा 167 की उपधारा (2) के अधीन अभियुक्तों को पुलिस अभिरक्षा या न्यायिक अभिरक्षा में भेजने के लिए आवेदन फाइल करने, जिसमें कहा गया है कि आगे का अन्वेषण लंबित है, की बात पर ध्यान दिए बिना इसका कोई महत्व नहीं रह जाएगा यदि न्यायालय द्वारा ऐसे आदेश प्रभावी और सारभूत रूप से संहिता की धारा 309 की उपधारा (2) के अधीन अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए पारित किए जा रहे थे ।

31 से 37. ....

38. कानून के निर्वचन का यह सुस्थिर सिद्धांत है कि इसे संपूर्ण रूप में पढ़ा जाना चाहिए । कानून का निर्माण इस रीति में किया जाना चाहिए जिससे उसके सभी उपबंधों को प्रभावी किया जा सके । संसद् द्वारा दो प्रक्रमों पर अभियुक्त के प्रतिप्रेषण को अनुध्यात किया गया है ; संज्ञान लेने से पहले और संज्ञान लेने के बाद । यहां तक कि एक ही मामले में, अन्वेषण अधिकारी द्वारा संहिता की धारा 173 के निबंधनों के अनुसार फाइल किए गए आरोप पत्र की प्रकृति पर निर्भर करते हुए यहां तक कि जब अन्वेषण लंबित है उस व्यक्ति के विरुद्ध भी संज्ञान लिया जा सकता है जिसके विरुद्ध अपराध का सिद्ध होना बताया गया है और जिसके विरुद्ध ऐसा अपराध सिद्ध नहीं किया गया है । जब तक संहिता की धारा 173 की उपधारा (2) के अर्थान्तर्गत आरोप पत्र फाइल नहीं किया जाता है, तब तक अन्वेषण लंबित रहता है । तथापि, यह बात अन्वेषण अधिकारी को, जैसाकि इसमें पहले उल्लेख किया गया है, संहिता की धारा 173 की उपधारा (8) के निबंधनों के अनुसार पुलिस रिपोर्ट फाइल करने के बावजूद आगे का अन्वेषण करने से नहीं रोकती है ।

39. कानूनी स्कीम किसी अन्वेषण के संबंध में धारा 173 की उपधारा (2) के अधीन अंतिम प्रपत्र फाइल कर देने और इसकी उपधारा (8) के अधीन अनुध्यात आगे का अन्वेषण करने के कारण

निष्कर्ष पर पहुंचने की नहीं है, जबकि केवल तभी जब आरोप पत्र फाइल नहीं किया जाता है और अन्वेषण लंबित रखा जाता है, संहिता की धारा 167 की उपधारा (2) में संलग्न परंतुक का फायदा अपराधी को उपलब्ध होगा, तथापि, एक बार आरोप पत्र फाइल होने के पश्चात् उक्त अधिकार समाप्त हो जाता है । ऐसा अधिकार केवल इसलिए पुनर्जीवित नहीं हो जाता है क्योंकि संहिता की धारा 173 की उपधारा (8) के अर्थान्तर्गत आगे का अन्वेषण लंबित रहता है ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

25. उपर्युक्त विधिक स्थिति को देखते हुए, हमें यह अभिनिर्धारित करने में कोई संकोच नहीं है कि प्रत्यर्थी-अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप पत्र विहित समय-सीमा के भीतर फाइल किया गया है और उनके द्वारा अभिकथित रूप से कारित किए गए अपराधों का विशेष न्यायालय द्वारा संज्ञान लिया गया है, इसलिए प्रत्यर्थी धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत का इस आधार पर दावा नहीं कर सकते थे कि अन्य अभियुक्तों के संबंध में अन्वेषण लंबित था । विशेष न्यायालय तथा उच्च न्यायालय दोनों ने इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित और स्थिर की गई विधिक स्थिति की अवहेलना करके विधि की गंभीर गलती की है । इसलिए आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने योग्य हैं और तद्नुसार अपास्त किए जाते हैं ।

26. इस मामले में प्रत्यर्थी-अभियुक्तों को अभिरक्षा में लिया जाएगा, यदि उन्हें आक्षेपित आदेशों के अनुसरण में व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ा गया है । तथापि, यह स्पष्ट किया जाता है कि इस निर्णय में की गई मताभिव्यक्तियां विशेष न्यायालय या उच्च न्यायालय को अन्य कार्यवाहियों का, यदि कोई उनके समक्ष लंबित है, गुणागुण के आधार पर विनिश्चय करते हुए प्रभावित नहीं करेंगी ।

27. तद्नुसार यह अपील मंजूर की जाती है ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

एम. विजयकुमार

बनाम

तमिलनाडु राज्य

[2024 की दांडिक अपील सं. 1078]

21 फरवरी, 2024

न्यायमूर्ति सी. टी. रविकुमार और न्यायमूर्ति राजेश बिंदल

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 306, 342 और 365 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106] – आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरण और सदोष परिरोध – दोषसिद्धि – मृतक द्वारा अभिकथित रूप से अपीलार्थी से कुछ रकम उधार लिया जाना और उसका प्रतिसंदाय करने में असफल रहने पर अपीलार्थी और अन्य सह-अभियुक्तों द्वारा उसका व्यपहरण किया जाना और सदोष परिरोध में रखा जाना – मृतक द्वारा यह प्रताड़ना सहन न करने के कारण आत्महत्या कर लिया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा सह-अभियुक्तों को दोषमुक्त किया जाना किंतु अपीलार्थी को धारा 306, 342 और 365 के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया जाना – अपील में उच्च न्यायालय द्वारा अपीलार्थी को धारा 342 और 365 के अधीन दंडनीय अपराधों से दोषमुक्त किया जाना किंतु धारा 306 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाना – संधार्यता – आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरण के अपराध को सिद्ध करने के लिए अभियुक्त की आपराधिक मन:स्थिति (मेंस रिया) पर विचार किया जाना चाहिए और ऐसा सक्रिय या प्रत्यक्ष कृत्य द्वाएरा किया गया होना चाहिए जिसके परिणामस्वरूप विपदग्रस्त को कोई विकल्प न देखते हुए आत्महत्या करनी पड़ी हो और जहां अभियोजन पक्ष के साक्ष्य से आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरित करने के लिए अभियुक्त की आपराधिक मन:स्थिति होने का कोई तत्व प्रकट न होता हो और अभियोजन पक्ष द्वारा अवलंब लिए गए साक्षियों की परीक्षा तक न कराई गई हो और अभियुक्त को धारा 342 और 365 के अधीन अपराध के लिए पहले ही दोषमुक्त कर दिया गया हो, वहां अपराध को

सिद्ध करने के अभियोजन पक्ष के भार को अभियुक्त पर स्थानांतरित करने के लिए साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 का प्रयोग नहीं किया जा सकता, इसलिए विपदग्रस्त को आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरित करने की बात को सिद्ध करने में पूरी तरह असफल रहने के कारण अभियुक्त की धारा 306 के अधीन दोषसिद्धि को कायम नहीं रखा जा सकता और उसे दोषमुक्त करना उचित होगा ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि मृतक ने अभियुक्त-3 के होटल में आपूर्तिकर्ता (सप्लायर) के रूप में कार्य करते हुए अपीलार्थी, जो अभियुक्त-3 का पुत्र है, से 2,000/- रुपए की रकम उधार ली थी । अपीलार्थी ने मृतक के अनुरोध पर इस रकम की व्यवस्था एक वित्तीय कंपनी के किशोर नामक व्यक्ति से ऋण के रूप में लेकर की थी । मृतक उधार ली गई रकम का प्रतिसंदाय करने में असफल रहा और फिर वित्तीय कंपनी द्वारा अपीलार्थी को प्रतिसंदाय के लिए परेशान करना आरंभ किया गया । इस बात से क्रोधित होकर अपीलार्थी ने उधार ली गई रकम के प्रतिसंदाय की मांग करते हुए अभियुक्त-2 के साथ मृतक का व्यपहरण किया और उसे अभियुक्त-2 की दुकान में लाया और वहां से उसे अभि. सा. 3 की दर्जी की दुकान में लेकर आया और उसका सदोष परिरोध किया । इस यातना को सहन न कर सकने के कारण मृतक ने उक्त दर्जी की दुकान में फांसी लगाकर आत्महत्या कर ली । अपीलार्थी का उसके पिता (अभियुक्त-3) सहित चार अन्य व्यक्तियों के साथ विचारण किया गया । अपीलार्थी और अभियुक्त-2 का भारतीय दंड संहिता की धारा 306, 342 और 345 के अधीन अपराधों के लिए विचारण किया गया जबकि अन्य को केवल भारतीय दंड संहिता की धारा 342 और 306 के अधीन अपराधों के लिए आरोपित किया गया । विचारण के पश्चात् अपीलार्थी को उन सभी अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया जिनके लिए उसका विचारण किया गया था और उसके सभी सह-अभियुक्तों को सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया । अपीलार्थी की अपील में उच्च न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दोषसिद्धि की पुष्टि की और उसे अन्य दो अपराधों के लिए दोषमुक्त कर दिया गया । अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा व्यथित होकर

उच्चतम न्यायालय में अपील की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए

अभिनिर्धारित – किसी व्यक्ति को भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दोषसिद्ध किया जा सकता है या नहीं या क्या इसके अधीन दोषसिद्धि संधार्य की जा सकती है या नहीं, इस पर विचार करते समय विपदग्रस्त को आत्महत्या के लिए मजबूर करने की अभियुक्त/दोषसिद्ध व्यक्ति की आपराधिक मन:स्थिति पर विचार किया जाना चाहिए । यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि इसके लिए एक सक्रिय कार्य या प्रत्यक्ष कार्य का होना आवश्यक है जिसके कारण अभियुक्त ने कोई विकल्प न देखते हुए आत्महत्या की ; और दूसरे शब्दों में, मृतक को ऐसी स्थिति में धकेलने के आशय से वह कार्य अवश्य इस स्तर का होना चाहिए कि वह आत्महत्या कर ले । भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दंडनीय अपराध की मुख्य बात आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरित करना है । दुष्प्रेरण से किसी व्यक्ति को उकसाने या अपराध करने के लिए आरंभ में उस व्यक्ति की सहायता करने की एक मानसिक प्रक्रिया अधिरोपित होती है । प्रस्तुत मामले में प्रश्न यह है कि क्या अपीलार्थी ने मृतक सेंथिल कुमार को आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरित किया था । अभियोजन साक्षियों अर्थात् अभि. सा. 1 और अभि. सा. 3 के साक्ष्य से अपीलार्थी की आपराधिक मन:स्थिति का तत्व विद्यमान होना प्रकट नहीं होता है । उनके मौखिक परिसाक्ष्यों में ऐसा कुछ नहीं है जिससे यह सुझाव मिलता हो कि अपीलार्थी ने मृतक सेंथिल कुमार को आत्महत्या करने के लिए उकसाया था । इस संदर्भ में, यह उल्लेखनीय है कि विपदग्रस्त ने अभि. सा. 3 संपत कुमार की दर्जी की दुकान के अंदर आत्महत्या की थी । उसका यह कहना है कि तारीख 6 दिसंबर, 2002 को लगभग 6.30 बजे अपराह्न में उसने अपनी दुकान पर ताला लगाया और दुकान की चाबी अभियुक्त-3, अपीलार्थी के पिता को दे दी । संपत कुमार ने यह भी अभिसाक्ष्य दिया कि उसे अपनी दर्जी की दुकान के अंदर सेंथिल कुमार द्वारा आत्महत्या करने के बारे में अगले दिन सवेरे लगभग 9.00 बजे पता चला था । यद्यपि अभियोजन का यह पक्षकथन रहा है कि अलेग्जेंडर नामक व्यक्ति ने अपीलार्थी को विपदग्रस्त को ले जाते हुए और उक्त दुकान में उसे सदोष परिरुद्ध करते हुए देखा था,

किंतु अभियोजन पक्ष द्वारा उक्त अलेग्जेंडर की परीक्षा नहीं की गई थी । जो भी स्थिति हो, तथ्य यह है कि अपीलार्थी को पहले ही भारतीय दंड संहिता की धारा 342 और 365 के अधीन अपराध के लिए दोषमुक्त कर दिया गया है । यह भी उल्लेखनीय है कि यद्यपि अभियुक्त-3, मुथु (अपीलार्थी का पिता) वह व्यक्ति था जिसको अभि. सा. 3 ने कथित रूप से अपनी दुकान की चाबी सौंपी थी, किंतु विचारण न्यायालय द्वारा उसे दोषमुक्त कर दिया गया था और उसकी दोषमुक्ति के विरुद्ध कोई अपील फाइल नहीं की गई थी । आक्षेपित निर्णय से यह प्रकट होता है कि अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 342 और 365 के अधीन अपराधों के लिए दोषमुक्त करने के पश्चात् भी उच्च न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन उसकी दोषसिद्धि की यह अभिनिर्धारित करते हुए पुष्टि की थी कि अपीलार्थी साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के निबंधनों के अनुसार यह स्पष्टीकरण देने में असफल रहा था कि कैसे मृतक सेंथिल कुमार आत्महत्या करने के लिए अभि. सा. 3 की दर्जी की दुकान में प्रविष्ट हुआ था । समझ नहीं आता कि प्रस्तुत मामले में ऊपर वर्णित तथ्यों को देखते हुए कैसे अपीलार्थी के विरुद्ध साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 को लागू किया जा सकता है । यह धारा उस साधारण नियम का अपवाद है जो धारा 101 के अधीन अधिकथित है जिसमें किसी तथ्य को साबित करने का भार उस पक्षकार पर डाला गया है जो सारभूत रूप से विवाद्यक के पक्ष में मजबूत और ठोस साक्ष्य प्रस्तुत करके उसे साबित करने की कोशिश करता है । धारा 106 का आशय किसी व्यक्ति को उस कर्तव्य या भार से मुक्त करने का नहीं है । इसके विपरीत, इसमें कहा गया है कि जब किसी तथ्य को, जो किसी व्यक्ति के विशेषत: जानकारी में है, या तो सकारात्मक रूप से या नकारात्मक रूप से साबित किया जाना है, तब उस तथ्य को साबित करने का भार उस पर है । दांडिक मामलों में इस धारा का उपयोजन वहां लागू होता है जहां अभियुक्त की प्रतिरक्षा किसी ऐसे तथ्य को साबित करने पर निर्भर करती है जो विशेषत: उसकी जानकारी में है न कि किसी और की । संक्षेप में, धारा 106 का प्रयोग अपराध को सिद्ध करने के अभियोजन पक्ष के भार को अभियुक्त पर स्थानांतरित करने के लिए नहीं किया जा सकता । यह केवल तब किया जा सकता है जब अभियोजन पक्ष साक्ष्य प्रस्तुत करे और उसे विश्वास हो कि इसके आधार

पर दोषसिद्धि हो जाएगी या जिससे एक प्रथमदृष्ट्या मामला बनता हो, तब ऐसे तथ्य (तथ्यों) को साबित करने का भार अभियुक्त पर स्थानांतरित करने का प्रश्न उद्भूत होगा । यथा उपरोक्त विधि की प्रतिपादना को ध्यान में रखते हुए और अपीलार्थी पर भार को स्थानांतरित करने के लिए धारा 106 को लागू करने के लिए कुछ न होने के कारण उच्च न्यायालय ने प्रस्तुत मामले में साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 को लागू करके गलती की थी । अत: इस न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करने में कोई संकोच नहीं है कि अभिलेख पर के साक्ष्य को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थी के विरुद्ध इसे लागू करने के लिए कतई कोई आधार नहीं है । इस चर्चा का निष्कर्ष यह है कि अभियोजन पक्ष यह सिद्ध करने में पूरी तरह से असफल रहा है कि इस अपील में अपीलार्थी ने विपदग्रस्त को आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरित किया था । अपीलार्थी की भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दोषसिद्धि को कायम नहीं रखा जा सकता । (पैरा 8, 17-22)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2011]	(2011) 3 एस. सी. सी. 626 : **एम. मोहन** बनाम **राज्य मार्फत पुलिस उप अधीक्षक** ;	6
[2010]	(2010) 8 एस. सी. सी. 628 : **मदन मोहन सिंह** बनाम **गुजरात राज्य** ;	6, 7, 8, 12
[2009]	(2009) 16 एस. सी. सी. 605 : **चित्रेश कुमार चोपड़ा** बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली)** ;	6
[1996]	ए. आई. आर. 1996 एस. सी. 1100 : **प्रवर्तन निदेशक** बनाम **एम.सी.टी.एम. कार्पोरेशन प्रा. लि. और अन्य** ;	16
[1974]	ए. आई. आर. 1974 एस. सी. 778 : **सावल दास** बनाम **बिहार राज्य** ।	18

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2024 की दांडिक अपील सं. 1078.

2011 की दांडिक अपील सं. 667 में मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 25 जनवरी, 2019 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री जी. शिवबालमुरुगन, सेल्वराज महेन्द्रन, सी. अधिकेसवन, एस. बी. कमलनाथन, पी. वी. हरिकृष्ण, सुनील सिंह रावत और कार्तिक संदल

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री डी. कुमानन, (श्रीमती) दीपा एस., शेख एफ. कालिया और विशाल त्यागी

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति सी. टी. रविकुमार ने दिया ।

न्या. रविकुमार – इजाजत दी गई ।

1. यह अपील 2011 की दांडिक अपील सं. 667 में मद्रास उच्च न्यायालय (संक्षेप में "उच्च न्यायालय") द्वारा तारीख 25 जनवरी, 2019 को पारित किए गए उस निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है जिसमें अपीलार्थी की भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में भारतीय दंड संहिता) की धारा 342 और 365 के अधीन दोषसिद्धि को उलट दिया गया था और उसे उनसे दोषमुक्त कर दिया गया था, किंतु भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्धि की पुष्टि की गई थी । उक्त दोषसिद्धि के लिए अधिरोपित दंडादेश को सात वर्ष के कठोर कारावास से कम करके तीन वर्ष का कठोर कारावास कर दिया गया था ।

2. वस्तुतः, अपीलार्थी का उसके पिता मुथु (अभियुक्त-3) सहित चार अन्य के साथ विचारण किया गया था । अपीलार्थी और रविचंद्रन (अभियुक्त-2) का भारतीय दंड संहिता की धारा 306, 342 और 345 के अधीन अपराधों के लिए विचारण किया गया था जबकि अन्य को केवल भारतीय दंड संहिता की धारा 342 और 306 के अधीन अपराधों के लिए आरोपित किया गया था । विचारण के पश्चात् अपीलार्थी को उन सभी अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया था जिनके लिए उसका विचारण

किया गया था और साथ ही साथ उसके सभी सह-अभियुक्तों को सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया था । जैसाकि इसमें ऊपर उल्लेख किया गया है, अपीलार्थी की अपील में उच्च न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दोषसिद्धि की पुष्टि की और उसे केवल अन्य दो अपराधों के लिए दोषमुक्त किया गया था । इसलिए यह अपील की गई है ।

3. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल के साथ-साथ तमिलनाडु राज्य की ओर से विद्वान् स्थायी काउंसेल को भी सुना ।

4. दलीलों और अभिलेख पर के उस साक्ष्य पर विचार करने से पूर्व जिसके परिणामस्वरूप अंततोगत्वा अपीलार्थी की भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दोषसिद्धि की पुष्टि की गई थी, भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के कतिपय सुसंगत पहलुओं पर कतिपय सुसंगत विनिश्चयों के प्रति निर्देश करके विचार किया जाना चाहिए । इस स्थिति के संबंध में कोई संदेह नहीं किया जा सकता कि भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन आरोप को सिद्ध करने के लिए अभियोजन पक्ष यह सिद्ध करने के लिए आबद्धकर है कि –

(क) अपराध के शिकार व्यक्ति ने आत्महत्या की थी ;

(ख) अभियुक्त ने आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरित किया था ;

(ग) इस दुष्प्रेरण को भारतीय दंड संहिता की धारा 107 के अधीन संघटक लागू होते हैं ।

5. भारतीय दंड संहिता की धारा 107 में दुष्प्रेरण के अपराध को परिभाषित किया गया है और इसका गठन निम्नलिखित में से किसी के द्वारा होता है –

(क) अपराध कारित करने के लिए उकसाना ; या

(ख) इसे कारित करने के षड्यंत्र में सम्मिलित होना ; या

(ग) किसी व्यक्ति की इसे कारित करने के लिए साशय सहायता करना ।

6. अब, भारतीय दंड संहिता की धारा 107 की व्याप्ति और परिधि तथा भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के साथ इसके परस्पर-संबंध तथा **एम. मोहन** बनाम **राज्य मार्फत पुलिस उप अधीक्षक**[1] और **मदन मोहन सिंह** बनाम **गुजरात राज्य**[2] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय को ध्यान में रखते हुए हम इस मामले पर विचार करने के लिए अग्रसर होंगे । **चित्रेश कुमार चोपड़ा** बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली)**[3] वाले मामले में एक पूर्ववर्ती विनिश्चय को निर्दिष्ट करने के पश्चात् **एम. मोहन** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने 'दुष्प्रेरण' शब्द का विश्लेषण किया और पैरा 44 और 45 में यह अभिनिर्धारित किया :–

> "44. दुष्प्रेरण में किसी व्यक्ति को किसी बात के किए जाने के लिए उकसाने या उस व्यक्ति की साशय सहायता करने की एक मानसिक प्रक्रिया अंतर्वलित होती है । आत्महत्या करने के लिए उकसाने या सहायता करने में अभियुक्त की ओर से किसी सकारात्मक कृत्य के बिना दोषसिद्धि नहीं की जा सकती ।
>
> 45. विधान-मंडल का आशय और इस न्यायालय द्वारा विनिश्चित मामलों के विनिश्चयाधार स्पष्ट हैं कि किसी व्यक्ति को भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दोषसिद्ध करने के लिए अपराध कारित करने की स्पष्ट आपराधिक मन:स्थिति होनी चाहिए । इसके लिए ऐसा सक्रिय कृत्य या प्रत्यक्ष कृत्य भी आवश्यक होता है जिसके परिणामस्वरूप मृतक ने कोई विकल्प न देखते हुए आत्महत्या की और यह कृत्य मृतक को ऐसी स्थिति में धकेलने के आशय से किया गया होना चाहिए कि उसे आत्महत्या करनी पड़ी ।"

7. **मदन मोहन सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले के विनिश्चय में यह न्यायालय इस मामले में अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 306 सहित भारतीय दंड संहिता की विभिन्न धाराओं के अधीन

---

[1] (2011) 3 एस. सी. सी. 626.

[2] (2010) 8 एस. सी. सी. 628.

[3] (2009) 16 एस. सी. सी. 605.

रजिस्ट्रीकृत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को अभिखंडित करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन फाइल किए गए आवेदन की खारिजी के विरुद्ध अपील पर विचार कर रहा था । इस मामले के प्रयोजनार्थ, उसमें के केवल पैरा 12 को, जहां तक यह सुसंगत है, निर्दिष्ट किया जाता है, जो इस प्रकार है :–

> "भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपराध को सिद्ध करने के लिए आवश्यक है कि अभियुक्त द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 107 द्वारा यथा अनुध्यात विनिर्दिष्ट दुष्प्रेरण संबंधित व्यक्ति को आत्महत्या कर लेने के आशय से दिया गया हो । भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन इस विशिष्ट अपराध के लिए मृतक को आत्महत्या करने के लिए सहायता करने या उकसाने या दुष्प्रेरित करने का अभियुक्त का आशय होना आवश्यक है ......।"

8. इस प्रकार, भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन उपबंधों का भारतीय दंड संहिता की धारा 107 के अधीन यथा अनुध्यात दुष्प्रेरण और **एम. मोहन** (उपर्युक्त) वाले मामले तथा **मदन मोहन सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले के प्रति निर्देश करके विश्लेषण करने पर यह प्रकट होता है कि क्या किसी व्यक्ति को भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दोषसिद्ध किया जा सकता है या नहीं या क्या इसके अधीन दोषसिद्धि संधार्य की जा सकती है या नहीं, इस पर विचार करते समय विपदग्रस्त को आत्महत्या के लिए मजबूर करने की अभियुक्त/दोषसिद्ध व्यक्ति की आपराधिक मन:स्थिति पर विचार किया जाना चाहिए । यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि इसके लिए एक सक्रिय कार्य या प्रत्यक्ष कार्य का होना आवश्यक है जिसके कारण अभियुक्त ने कोई विकल्प न देखते हुए आत्महत्या की ; और दूसरे शब्दों में, मृतक को ऐसी स्थिति में धकेलने के आशय से वह कार्य अवश्य इस स्तर का होना चाहिए कि वह आत्महत्या कर ले । पूर्वोक्त स्थिति को ध्यान में रखते हुए, हम अभियोजन के पक्षकथन और अभिलेख पर के साक्ष्य का यह पता लगाने के लिए विश्लेषण करेंगे कि क्या अभियोजन पक्ष भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपीलार्थी की दोषसिद्धि को सिद्ध करने में सफल रहा था ।

9. उपरोक्त के संबंध में, अभियोजन के पक्षकथन के प्रति एक संक्षिप्त निर्देश करना आवश्यक है । अभियोजन पक्ष के अनुसार, विपदग्रस्त सेंथिल कुमार ने मुथु (अभियुक्त-3) के सालेम होटल में आपूर्तिकर्ता (सप्लायर) के रूप में कार्य करते हुए अपीलार्थी, जो अभियुक्त-3 का पुत्र है, से 2,000/- रुपए की रकम उधार ली थी । अभियोजन का यह पक्षकथन है कि अपीलार्थी ने मृतक के अनुरोध पर इस रकम की व्यवस्था वेंकटचलपति फाइनेंस के किशोर नामक व्यक्ति से ऋण के रूप में लेकर की थी । मृतक उधार ली गई रकम का प्रतिसंदाय करने में असफल रहा और फिर वित्तीय कंपनी ने अपीलार्थी को प्रतिसंदाय के लिए परेशान किया । इस बात से क्रोधित होकर अपीलार्थी ने तारीख 6 दिसंबर, 2002 को उधार ली गई रकम के प्रतिसंदाय की मांग करते हुए रविचंद्रन (अभियुक्त-2) के साथ मृतक का व्यपहरण किया और उसे अभियुक्त-2 की दुकान में लाया और वहां से उसे संपत कुमार (अभि. सा. 3) की दर्जी की दुकान में लेकर आया और उसका सदोष परिरोध किया । उसे सदोष परिरुद्ध करके और तद्द्वारा उसे आत्महत्या के लिए उकसाकर अभियुक्त सं. 3 से 5 ने अपीलार्थी और अभियुक्त-2 के साथ-साथ अपनी भूमिका निभाई थी । इस यातना को सहन न कर पाने पर सेंथल कुमार ने अभि. सा. 3 की दर्जी की दुकान में फांसी लगाकर आत्महत्या कर ली । निर्विवाद रूप से, यही अभियोजन का पक्षकथन है । किंतु निर्विवाद और अविवादग्रस्त परिस्थिति यह है कि अभियोजन पक्ष, जिसे उसके द्वारा प्रस्तुत किया गया पक्षकथन सिद्ध करना होता है, इसे साबित करने में असफल रहा था । ऐसे निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए लंबे-चौड़े तर्क की आवश्यकता नहीं है क्योंकि अपीलार्थी के सभी सह-अभियुक्तों की विचारण न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति और उच्च न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय के अनुसार अपीलार्थी की भारतीय दंड संहिता की धारा 342 और 365 के अधीन दोषसिद्धि से दोषमुक्त किए जाने से अधिक स्पष्टीकरण की आवश्यकता नहीं है । यह भी अविवादग्रस्त स्थिति है कि अपीलार्थी के सह-अभियुक्तों की दोषमुक्ति और उसके पश्चात् उपरोक्त अनुसार अपीलार्थी की दोषमुक्ति के बावजूद उनकी दोषमुक्ति के विरुद्ध कोई अपील फाइल नहीं की गई थी । इस पृष्ठभूमि में यह उल्लेख करना भी सुसंगत है कि यद्यपि ऊपर वर्णित किशोर को अभियोजन पक्ष के लिए एक साक्षी के

रूप में उद्धृत किया गया था किंतु उसकी परीक्षा नहीं की गई थी । अभियोजन पक्ष के अनुसार, अलेग्जेंडर नामक व्यक्ति ने अपीलार्थी को मृतक को ले जाते हुए और उसे अभि. सा. 3 संपत कुमार की दर्जी की दुकान में सदोष परिरुद्ध करते हुए देखा था । तथापि, उसकी भी परीक्षा नहीं की गई थी । पूर्वोक्त तथ्यों और विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय के निर्णयों को दृष्टिगत करते हुए निस्संदेह यह कहा जा सकता है कि अभियोजन पक्ष ने जो यह पक्षकथन प्रस्तुत किया है कि मृतक सेंथिल कुमार का व्यपहरण किया गया था और उसे अभि. सा. 3 संपत कुमार की दर्जी की दुकान में सदोष परिरुद्ध किया गया था, इसे अभियोजन पक्ष द्वारा पूर्वोक्त किशोर और अलेग्जेंडर की परीक्षा करके सिद्ध किए जाने का प्रयत्न नहीं किया था और जो भी हो अपीलार्थी के विरुद्ध व्यपहरण और सदोष परिरोध के पक्षकथन पर उच्च न्यायालय द्वारा विश्वास नहीं किया गया था ।

10. पूर्वोक्त परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए ही भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दोषसिद्धि के विरुद्ध दी गई दलीलों का मूल्यांकन किया जाना होगा ।

11. अभियोजन पक्ष ने अभि. सा. 2, जिसने मृतक सेंथिल कुमार की पत्नी होने का दावा किया है, के माध्यम से यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया था कि घटना से एक सप्ताह पूर्व अपीलार्थी तीन अन्य व्यक्तियों के साथ मृतक के मकान पर गया था और हंगामा खड़ा किया था तथा उस समय पर अभि. सा. 2 वहां अकेली थी । इस साक्षी के अनुसार, जब मृतक घर वापस आया तो उसने संपूर्ण घटना उसे बताई । इसके अतिरिक्त, उसने यह अभिसाक्ष्य दिया कि उसके पति ने ब्याज पर 2,000/- रुपए लिए थे और इसका किश्तों में प्रतिदाय किया जाना था । उसने यह भी अभिसाक्ष्य दिया कि पूर्व में मृतक ने ऋण के मद्दे स्वयं 400-400/- रुपए की दो किश्तें सीधे ऊपर वर्णित वित्तीय संस्था में जमा की थी । उसने यह भी अभिसाक्ष्य दिया कि अपीलार्थी के उपरोक्त अन्यायपूर्ण दौरे के पश्चात् उसने उसे बुधवार को आने के लिए कहा था और फिर उसे 800/- रुपए की रकम का संदाय किया था ।

12. अभि. सा. 2 ने यह भी अभिसाक्ष्य दिया कि इससे पहले अन्यायपूर्ण दौरे के पश्चात् अपीलार्थी ने मकान से जाते हुए यह धमकी

दी थी कि यदि शेष रकम वापस नहीं की गई तो मृतक को उठा लिया जाएगा । अभि. सा. 2 के साक्ष्य पर विचार करते हुए, 2,000/- रुपए की उधार ली गई रकम में से 1,600/- रुपए का वापस संदाय कर दिया गया था । अत: अभियोजन पक्ष के पक्षकथन पर विचार करते हुए, व्यपहरण और पारिणामिक सदोष परिरोध मृतक द्वारा शेष रकम का प्रतिदाय करने में असफल रहने के कारण किया गया था । किंतु, जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है, उच्च न्यायालय द्वारा व्यपहरण और सदोष परिरोध के पक्षकथन पर विश्वास नहीं किया गया था और परिणामत: अपीलार्थी की भारतीय दंड संहिता की धारा 342 और 365 के अधीन दोषसिद्धि को अपास्त कर दिया गया था तथा भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दोषसिद्धि को ही कायम रखा गया था । उपर्युक्त पृष्ठभूमि में ही हमने भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन उपबंधों को निर्दिष्ट और विश्लेषण किया है और **एम. मोहन** (उपर्युक्त) वाले मामले और **मदन मोहन सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में के विनिश्चयों को भी निर्दिष्ट किया है । उक्त विनिश्चयों के प्रति निर्देश करके इस प्रकार विश्लेषण किए गए उपबंधों को ध्यान में रखते हुए विचार किए जाने वाला प्रश्न यह है कि क्या अभियोजन पक्ष यह सिद्ध करने में सफल रहा था कि अपीलार्थी की अपराध कारित करने की आपराधिक मन:स्थिति थी बल्कि उसने विपदग्रस्त को आत्महत्या करने के लिए उकसाया भी था और भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपराध लागू होता है ।

13. उक्त प्रश्न पर विचार करते समय इस तथ्य को ध्यान में रखना सुसंगत है कि यद्यपि अभियोजन पक्ष ने इस पक्षकथन को सिद्ध करने का प्रयत्न किया था कि इस अपील में अपीलार्थी और द्वितीय अभियुक्त ने भारतीय दंड संहिता की धारा 306, 342 और 365 के अधीन आने वाला अपराध कारित किया था । अपीलार्थी और द्वितीय अभियुक्त की उन अपराधों के अधीन दोषमुक्ति से मृतक सेंथिल कुमार का अपीलार्थी द्वारा व्यपहरण या सदोष परिरोध करने का मामला नहीं बन सकता है । उच्च न्यायालय ने स्वयं आक्षेपित निर्णय के पैरा 2.1 में अभियोजन पक्ष के पक्षकथन का उल्लेख किया है । केवल पैरा 2.1 को उद्धृत करना सुसंगत होगा, जो इस प्रकार है :–

"2.1 अभियोजन का यह पक्षकथन है कि मृतक सेंथिल कुमार ने विजय कुमार (अभियुक्त-1) से 2,000/- रुपए उधार लिए थे, जिस विजय कुमार (अभियुक्त-1) ने एक वित्तीय कंपनी से यह रकम उधार ली थी ; जब सेंथिल कुमार ने यह धन वापस नहीं किया, तो वित्तीय कंपनी विजय कुमार पर दबाव बनाने लगी ; इसलिए यह अभिकथित है कि विजय कुमार (अभियुक्त-1) और रविचन्द्रन (अभियुक्त-2) ने तारीख 6 दिसंबर, 2002 को सेंथिल कुमार का व्यपहरण कर लिया और उसे संपत कुमार (अभि. सा. 3) की दर्जी की दुकान में बंद कर दिया और तद्द्वारा रकम के प्रतिसंदाय की मांग करते हुए उसे सदोष अवरुद्ध किया ; इस प्रताड़ना को सहन करने में असमर्थ होने पर सेंथिल कुमार ने तारीख 6 दिसंबर, 2002 को संपत कुमार (अभि. सा. 3) की दर्जी की दुकान में फांसी लगाकर आत्महत्या कर ली ।"

14. इस प्रकार, इस बात पर विचार किया जाना चाहिए कि 'आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरण' का अपराध कारित करने के लिए अपीलार्थी पर दोषारोपण करने के दृष्टांतों के रूप में जब अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किया गया पक्षकथन अपीलार्थी की शेष रकम के प्रतिसंदाय के लिए मृतक का व्यपहरण और सदोष परिरोध किए जाने और इस प्रताड़ना को सहन न कर पाने का है, तो भारतीय दंड संहिता की धारा 342 और 365 के अधीन उसकी दोषमुक्ति को ध्यान में रखते हुए भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दोषसिद्धि को कैसे कायम रखा जा सकता है ।

15. इस प्रसंगगत स्थिति में, भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन उपबंधों के विश्लेषण और ऊपर निर्दिष्ट किए गए विनिश्चयों को ध्यान में रखते हुए हमें भी यह विचार करना होगा कि आपराधिक मन:स्थिति क्या है ? 'आपराधिक मन:स्थिति' से अभिप्रेत है दूषित मन । साधारणतया, प्रत्येक अपराध के लिए एक मानसिक तत्व अपेक्षित होता है, जिसकी प्रकृति प्रश्नगत विशिष्ट अपराध की परिभाषा पर निर्भर करेगी । यद्यपि 'आपराधिक मन:स्थिति' पद का कोई विशिष्ट अर्थ देना असंभव है क्योंकि आपराधिक मन:स्थिति की विद्यमानता का अवधारण करने के लिए उस विशिष्ट अपराध का गठन करने वाले संघटकों और

उस अपराध का गठन करने के लिए उस विशिष्ट अपराध की परिभाषा में प्रयुक्त अभिव्यक्ति पर निर्भर करती है । हाल्सबरी लॉज ऑफ इंग्लैंड (चौथा संस्करण, वाल्यूम-11, पैरा 10) को निर्दिष्ट करना ही उचित होगा :–

> "......'आपराधिक मन:स्थिति' (मेंस रिया) पद का कोई विशिष्ट अर्थ देना असंभव है, आशय, लापरवाही और ज्ञान ऐसी धारणाएं हैं जो आमतौर पर आपराधिक दायित्व के लिए आधार के रूप में प्रयुक्त होती हैं और कुछ मायनों में इन्हें इसका आधार होना कहा जा सकता है । साधारणतया, विशिष्टता और अपवाद दोनों के अध्यधीन रहते हुए किसी व्यक्ति को गंभीर अपराधों के लिए तब तक आपराधिक रूप से दायी नहीं ठहराया जाना चाहिए जब तक उसका आशय वह अपराध कारित करने का न रहा हो या यह पूर्वानुमान न रहा हो कि वह अधिसंभाव्यत: वह अपराध कारित करेगा या कम से कम वह उन तत्वों को कारित कर सकता है जिनसे प्रश्नगत अपराध का गठन होता है ।"

16. **प्रवर्तन निदेशक** बनाम **एम.सी.टी.एम. कार्पोरेशन प्रा. लि. और अन्य**[1] वाले मामले के विनिश्चय में यह मत व्यक्त किया गया था कि आपराधिक मन:स्थिति एक मानसिक अवस्था है और यह अभिनिर्धारित किया कि दांडिक विधि के अधीन आपराधिक मन:स्थिति को "दूषित आशय" के रूप में समझा जाता है और जब तक यह नहीं पाया जाता है कि 'अभियुक्त' का अपराध कारित करने का दूषित आशय था, उसे अपराध कारित करने का दोषी नहीं ठहराया जा सकता ।

17. प्रस्तुत मामले में विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या अपीलार्थी ने भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपराध कारित करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 107 के अधीन अनुध्यात अनुसार उकसाया था । उक्त परिस्थितियों में ही जिनको हमने पहले ही निर्दिष्ट किया है, भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपराध के संघटक लागू होते हैं । आवश्यक रूप से, भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दंडनीय अपराध की मुख्य बात आत्महत्या के लिए

---

[1] ए. आई. आर. 1996 एस. सी. 1100.

दुष्प्रेरित करना है । दुष्प्रेरण से किसी व्यक्ति को उकसाने या अपराध करने के लिए आरंभ में उस व्यक्ति की सहायता करने की एक मानसिक प्रक्रिया अधिरोपित होती है । प्रस्तुत मामले में, प्रश्न यह है कि क्या अपीलार्थी ने मृतक सेंथिल कुमार को आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरित किया था । अभियोजन साक्षियों अर्थात् अभि. सा. 1 और अभि. सा. 3 के साक्ष्य से अपीलार्थी की आपराधिक मन:स्थिति का तत्व विद्यमान होना प्रकट नहीं होता है । उनके मौखिक परिसाक्ष्यों में ऐसा कुछ नहीं है जिससे यह सुझाव मिलता हो कि अपीलार्थी ने मृतक सेंथिल कुमार को आत्महत्या करने के लिए उकसाया था । इस संदर्भ में, यह उल्लेखनीय है कि विपदग्रस्त ने अभि. सा. 3 संपत कुमार की दर्जी की दुकान के अंदर आत्महत्या की थी । उसका यह कहना है कि तारीख 6 दिसंबर, 2002 को लगभग 6.30 बजे अपराह्न में उसने अपनी दुकान पर ताला लगाया और दुकान की चाबी अभियुक्त-3, अपीलार्थी के पिता को दे दी । संपत कुमार ने यह भी अभिसाक्ष्य दिया कि उसे अपनी दर्जी की दुकान के अंदर सेंथिल कुमार द्वारा आत्महत्या करने के बारे में अगले दिन सवेरे लगभग 9.00 बजे पता चला था । हमने पहले ही यह उल्लेख किया है कि यद्यपि अभियोजन का यह पक्षकथन रहा है कि अलेग्जेंडर नामक व्यक्ति ने अपीलार्थी को विपदग्रस्त को ले जाते हुए और उक्त दुकान में उसे सदोष परिरुद्ध करते हुए देखा था, किंतु अभियोजन पक्ष द्वारा उक्त अलेग्जेंडर की परीक्षा नहीं की गई थी । जो भी स्थिति हो, तथ्य यह है कि अपीलार्थी को पहले ही भारतीय दंड संहिता की धारा 342 और 365 के अधीन अपराध के लिए दोषमुक्त कर दिया गया है । यह भी उल्लेखनीय है कि यद्यपि अभियुक्त-3, मुथु (अपीलार्थी का पिता) वह व्यक्ति था जिसको अभि. सा. 3 ने कथित रूप से अपनी दुकान की चाबी सौंपी थी, किंतु विचारण न्यायालय द्वारा उसे दोषमुक्त कर दिया गया था और उसकी दोषमुक्ति के विरुद्ध कोई अपील फाइल नहीं की गई थी । आक्षेपित निर्णय से यह प्रकट होता है कि अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 342 और 365 के अधीन अपराधों के लिए दोषमुक्त करने के पश्चात् भी उच्च न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन उसकी दोषसिद्धि की पुष्टि यह अभिनिर्धारित करते हुए की थी कि अपीलार्थी साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के निबंधनों के अनुसार यह स्पष्टीकरण देने में असफल रहा था

कि कैसे मृतक सैंथिल कुमार आत्महत्या करने के लिए अभि. सा. 3 की दर्जी की दुकान में प्रविष्ट हुआ था ।

18. हमें समझ नहीं आता कि प्रस्तुत मामले में ऊपर वर्णित तथ्यों को देखते हुए कैसे अपीलार्थी के विरुद्ध साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 को लागू किया जा सकता है । यह धारा उस साधारण नियम का अपवाद है जो धारा 101 के अधीन अधिकथित है जिसमें किसी तथ्य को साबित करने का भार उस पक्षकार पर डाला गया है जो सारभूत रूप से विवाद्यक के पक्ष में मजबूत और ठोस प्रस्तुत करके साबित करने की कोशिश करता है । धारा 106 का आशय किसी व्यक्ति को उस कर्तव्य या भार से मुक्त करने का नहीं है । इसके विपरीत, इसमें कहा गया है कि जब किसी तथ्य को, जो किसी व्यक्ति के विशेषत: जानकारी में है, या तो सकारात्मक रूप से या नकारात्मक रूप से साबित किया जाना है, तब उस तथ्य को साबित करने का भार उस पर है । दांडिक मामलों में इस धारा का उपयोजन वहां लागू होता है जहां अभियुक्त की प्रतिरक्षा किसी ऐसे तथ्य को साबित करने पर निर्भर करती है जो विशेषत: उसकी जानकारी में है न कि किसी और की । संक्षेप में, धारा 106 का प्रयोग अपराध को सिद्ध करने के अभियोजन पक्ष के भार को अभियुक्त पर स्थानांतरित करने के लिए नहीं किया जा सकता । यह केवल तब किया जा सकता है जब अभियोजन पक्ष साक्ष्य प्रस्तुत करे और उसे विश्वास हो कि इसके आधार पर दोषसिद्धि हो जाएगी या जिससे एक प्रथमदृष्ट्या मामला बनता हो, तब ऐसे तथ्य (तथ्यों) को साबित करने का भार अभियुक्त पर स्थानांतरित करने का प्रश्न उद्भूत होगा (**सावल दास** बनाम **बिहार राज्य**[1] वाले मामले में का विनिश्चय देखें) ।

19. यथा उपरोक्त विधि की प्रतिपादना को ध्यान में रखते हुए और अपीलार्थी पर भार को स्थानांतरित करने के लिए धारा 106 को लागू करने के लिए कुछ न होने के कारण उच्च न्यायालय ने प्रस्तुत मामले में साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 को लागू करके गलती की थी ।

---

[1] ए. आई. आर. 1974 एस. सी. 778.

20. अत: हमें यह अभिनिर्धारित करने में कोई संकोच नहीं है कि अभिलेख पर के साक्ष्य को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थी के विरुद्ध इसे लागू करने के लिए कतई कोई आधार नहीं है ।

21. इस चर्चा का निष्कर्ष यह है कि अभियोजन पक्ष यह सिद्ध करने में पूरी तरह से असफल रहा है कि इस अपील में अपीलार्थी ने विपदग्रस्त को आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरित किया था । अपीलार्थी की भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दोषसिद्धि को कायम नहीं रखा जा सकता ।

22. परिणामत:, यह अपील मंजूर की जाती है । अपीलार्थी की भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दोषसिद्धि को, जिसकी उच्च न्यायालय द्वारा 2011 की दांडिक अपील सं. 667 में तारीख 25 जनवरी, 2019 को पारित किए गए निर्णय द्वारा पुष्टि की गई थी, अभिखंडित और अपास्त किया जाता है । परिणामत:, उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपराध से दोषमुक्त किया जाता है । अपीलार्थी पहले ही जमानत पर है । उसके जमानत बंधपत्रों को उन्मोचित किया जाता है ।

23. लंबित आवेदन (आवेदनों), यदि कोई है, का निपटारा हो जाएगा ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

[2024] 2 उम. नि. प. 127

ठाकुर उमेदसिंह नथूसिंह

बनाम

गुजरात राज्य

[2016 की दांडिक अपील सं. 250 और इसके साथ 2016 की दांडिक अपील सं. 218-219 और 2024 की दांडिक अपील सं. 1102]

22 फरवरी, 2024

न्यायमूर्ति बी. आर. गवई और न्यायमूर्ति संदीप मेहता

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302/34, 392, 396 और 397 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 25, 26 और 27] – हत्या, हत्या सहित डकैती और लूट – अभियुक्तों द्वारा अभिकथित रूप से मृतक की जीप भाड़े पर लिया जाना और उसके पश्चात् उसकी हत्या करके जीप को लूट लिया जाना – पारिस्थितिक साक्ष्य – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को धारा 392 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना और धारा 302/34 तथा धारा 396 और 397 के अधीन दंडनीय अपराध से दोषमुक्त किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्तों की दोषमुक्ति को उलटा जाना और उन्हें हत्या और हत्या सहित डकैती के अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाना – संधार्यता – अभियुक्तों के विरुद्ध आरोपों को सिद्ध करने के लिए कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य न होने, अभियोजन का संपूर्ण पक्षकथन पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित होने और अभियुक्तों के विरुद्ध हत्या के आरोप को सिद्ध करने के लिए परिस्थितियों की श्रृंखला का गठन करने हेतु विश्वसनीय, ठोस और भरोसेमंद साक्ष्य प्रस्तुत करने में पूरी तरह असफल रहने, अभियुक्तों की गिरफ्तारी एक अभियुक्त द्वारा पुलिस आफिसर की अभिरक्षा में किए गए प्रकटन कथन के आधार पर होने के कारण साक्ष्य में ग्राह्य न होने, पुलिस द्वारा की गई बरामदगियां संदेहास्पद होने, अभियुक्तों की दोषमुक्ति को दोषसिद्धि में संपरिवर्तित करते हुए उच्च न्यायालय का निर्णय

अटकलबाजी और अनुमानों पर आधारित होने तथा अभियुक्तों को धारा 392 के अधीन लूट के अपराध के लिए दोषसिद्ध करते हुए विचारण न्यायालय का निर्णय भी इसी प्रकार के अग्राह्य और अविश्वसनीय साक्ष्य पर आधारित होने के कारण उन्हें दोषमुक्त करना उचित होगा ।

इन अपीलों के तथ्य इस प्रकार हैं कि अभि. सा. 1 द्वारा पुलिस थाने में एक शिकायत, अन्य बातों के साथ-साथ यह अभिकथन करते हुए दर्ज कराई गई कि उसका पुत्र (मृतक), जो एक जीप चलाता था, उसकी हत्या कर दी गई है और उसका शव एक खेत में पड़ा हुआ पाया गया है । उक्त शिकायत के आधार पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई और अन्वेषण आरंभ किया गया । पुलिस थाने के पुलिस उप निरीक्षक ने एक जीप को तेज गति से चलाते हुए देखा । उसने जीप को रुकवाने की कोशिश की जोकि तीव्र गति से चलाई जा रही थी और यह जीप कुछ दूर जाकर रुकी । चार व्यक्ति जीप से उतरे और भागने की कोशिश की । इन व्यक्तियों में से एक को पकड़ लिया गया और गिरफ्तार किया गया । उसने पुलिस द्वारा परिप्रश्न करने पर चार सह-अभियुक्तों के नाम बताए और कहा कि वे वही व्यक्ति थे जो उसके साथ जीप में यात्रा कर रहे थे । परिप्रश्न करने के दौरान उसने जीप के स्वामी की हत्या करने की भी संस्वीकृति की और यह भी संस्वीकृति की कि इस यान को उक्त वारदात के दौरान लूटा गया था । जीप को अभिगृहीत किया गया और इस अभियुक्त को भी अभिरक्षा में लिया गया । शेष चार अभियुक्तों को गिरफ्तार किया गया । अभियुक्तों के विरुद्ध संबंधित न्यायालय में भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 और धारा 396 तथा 397 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दो अलग-अलग आरोप पत्र फाइल किए गए । यद्यपि आरोप अलग-अलग विरचित किए गए थे, किंतु दोनों आरोप पत्रों में अभियुक्तों का विचारण संयुक्त रूप से किया गया । विचारण न्यायालय द्वारा एक अभियुक्त (अभियुक्त सं. 4) को पूर्ण रूप से दोषमुक्त कर दिया गया, जबकि अभियुक्त-1, अभियुक्त-2, अभियुक्त-3 और अभियुक्त-5 की भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 और धारा 396 और धारा 397 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए आरोपों से

दोषमुक्ति अभिलिखित करते हुए उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 392 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषी ठहराया गया और दंडादिष्ट किया गया । अपनी दोषसिद्धि से व्यथित होकर अभियुक्तों द्वारा गुजरात उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की गई जबकि राज्य द्वारा भी अभियुक्तों की दोषमुक्ति को चुनौती देते हुए अपील फाइल की गई । उच्च न्यायालय द्वारा राज्य द्वारा फाइल की गई अपील को मंजूर किया गया जबकि अभियुक्त-अपीलार्थियों द्वारा फाइल की गई अपील को खारिज कर दिया गया । उच्च न्यायालय ने अभियुक्तों की दोषमुक्ति को उलट दिया और उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 396 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया तथा उन्हें आजीवन कारावास भुगतने और जुर्माने का संदाय करने का दंडादेश दिया। उच्च न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर अभियुक्तों द्वारा उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपीलें फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलों को मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभिलेख का परिशीलन करने पर यह न्यायालय पाता है कि अभियोजन पक्ष ने अभियुक्तों की दोषिता को सिद्ध करने के लिए पारिस्थितिक साक्ष्य का अवलंब लिया है जिसमें प्रकटन कथन, बरामदगियां और पता चले तथ्य समाविष्ट हैं । सबसे महत्वपूर्ण बरामदगी अभिकथित रूप से जीप की है जिसका पंजीकरण संख्यांक जीजे-08-114 है । यह उल्लेखनीय है कि उक्त बरामदगी अभियुक्त-1 से होने का अभ्यारोपण किया गया है, जिसे अभिकथित रूप से तारीख 2 मार्च, 1990 को पुलिस उप निरीक्षक जे. एन. चौधरी (अभि. सा. 22) द्वारा गिरफ्तार किया गया था । उसने तारीख 2 मार्च, 1990 को सरदारनगर पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी को एक रिपोर्ट/संसूचना (प्रदर्श-96) भेजी थी जिसमें अभियुक्त-1 द्वारा स्वयं को और अन्य अभियुक्तों को आलिप्त करते हुए संस्वीकृति किया जाना अभिलिखित है । यह घिसी-पिटी बात है कि किसी पुलिस अधिकारी द्वारा अभिरक्षा में अभियुक्त की अभिलिखित की गई संस्वीकृति साक्ष्य में अग्राह्य है क्योंकि इससे साक्ष्य अधिनियम की धारा 25 का अतिक्रमण होता है । इस प्रकार, अभियुक्त-1 के कथन का वह भाग, जो रिपोर्ट/संसूचना

(प्रदर्श-96) में अभिलिखित है जिसमें उसने अभिकथित रूप से जीप के ड्राइवर की हत्या करने और जीप को लूटने के अपराध की संस्वीकृति की थी और अन्य अभियुक्त व्यक्तियों के सह-अभियुक्तों के रूप में नाम लिए थे, पूरी तरह से अग्राह्य है और साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन उपबंधित सीमा के सिवाय इसे साक्ष्य में ग्रहण नहीं किया जा सकता । अभियुक्त-1 को गिरफ्तार किए जाने के पश्चात् पुलिस उप निरीक्षक जे. एन. चौधरी (अभि. सा. 22) ने दो पंचनामे अर्थात् प्रदर्श-88 और प्रदर्श-89 तैयार किए थे । पंचनामा (प्रदर्श-89) तारीख 2 मार्च, 1990 को 8.30 बजे अपराह्न में तैयार किया गया था जिसमें कोई उल्लेख नहीं है कि अभियुक्त-1 ने अन्य अभियुक्तों के नाम प्रकटित किए थे । यह लोप बहुत ही महत्वपूर्ण है और मामले की तह तक जाता है । इससे पुलिस उप निरीक्षक जे. एन. चौधरी (अभि. सा. 22) के साक्ष्य की सत्यता पर गंभीर संदेह उत्पन्न होता है । परिणामत:, अभियुक्त-1 द्वारा किया गया तथाकथित प्रकटन कथन (प्रदर्श-96), जिस पर अभियोजन पक्ष ने अवलंब लिया है और उच्च न्यायालय ने इसे अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध एक अपराध में आलिप्त करने वाली परिस्थिति समझते हुए इसका अवलंब लिया है, पूर्णतया अग्राह्य और अविश्वसनीय है । यदि तर्क के लिए मान लिया जाए कि अभियुक्त-1 भरतभाई (मृतक) के स्वामित्व वाली जीप में मौजूद था, अकेले इस तथ्य से हत्या और डकैती के अपराधों के लिए उक्त अभियुक्त की सहापराधिता के बारे में कोई निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता । अभियोजन पक्ष के स्वीकृत पक्षकथन के अनुसार, उस समय जीप में एक से अधिक व्यक्ति मौजूद थे जब इसे पुलिस उप निरीक्षक जे. एन. चौधरी (अभि. सा. 22) द्वारा रुकवाया गया था । इस प्रकार, अभियुक्त-1 (लक्ष्मण सिंह) द्वारा जीप में एक निर्दोष यात्री के रूप में यात्रा करने की संभाव्यता से इनकार नहीं किया जा सकता । अभियुक्त-1 की दोषिता को सिद्ध करने के लिए उसकी जीप में मौजूदगी के सिवाय किसी अन्य परिस्थिति को अभियोजन के पक्षकथन में प्रस्तुत नहीं किया गया था । अभियोजन पक्ष ने हमलावरों के रूप में अभियुक्त-2, अभियुक्त-3 और अभियुक्त-5 की शनाख्त पर अभियुक्त-1 के प्रकटन कथन (प्रदर्श-96)

के आधार पर विश्वास किया है । उन्हें प्राथमिक रूप से चाकुओं ओर वस्त्रों की बरामदगियों के आधार पर दोषसिद्‌ध किया गया था । यह न्यायालय पाता है कि अभियुक्तों के बताने पर अभिकथित रूप से बरामद की गई इन तथाकथित अपराध में आलिप्त करने वाली वस्तुओं को कभी भी सीरम विशेषज्ञ को उन वस्तुओं पर विद्‌यमान रक्त समूहों का मृतक के रक्त समूह के साथ मिलान करने के लिए नहीं भेजा गया था । इस न्यायालय ने बरामदगियों से सहबद्‌ध संबंधित पुलिस पदधारियों के साक्ष्य पर विचार किया है और उनके परिसाक्ष्यों को अत्यंत संदेहास्पद पाया है । अभियुक्त-3 के बताने पर जो चाकू बरामद किया गया था उसे एक नाले से पाया गया था जो कि एक खुला स्थान है और सभी की पहुंच में है । अभियुक्त-4 पर जिस चाकू का अभ्यारोपण किया गया है उसे कांजी छारा की पत्नी शोभनाबेन द्‌वारा प्रस्तुत किया गया था और इस प्रकार इसे अभियुक्त-4 से संबद्‌ध नहीं किया जा सकता है । इस प्रकार इन बरामदगियों को किसी भी रीति में अपराध में आलिप्त करने वाली प्रकृति का नहीं समझा जा सकता । अत: यह न्यायालय इन बरामदगियों को अत्यंत संदेहास्पद और दूषित पाता है । यदि क्षणभर के लिए यह मान लिया जाए कि ऐसी बरामदगियां की गई थीं, तो भी इनसे सीरम विज्ञानी की रिपोर्ट के रूप में ऐसी कोई निश्चायक परिस्थिति नहीं बनती है जिससे इन पर मृतक के रक्त समूह वाला रक्त समूह मौजूद होना सिद्‌ध होता है और इसलिए उनसे अभियोजन पक्ष का पक्षकथन अग्रसर नहीं होता है । इनके अतिरिक्त, यह न्यायालय पाता है कि अभियोजन पक्ष मुद्‌दामल वस्तुओं को सुरक्षित रखे जाने के तथ्य को सिद्‌ध करने के लिए आज्ञापक रूप से अपेक्षित कड़ी साक्ष्य को प्रस्तुत करने में असफल रहा था और इसलिए बरामदगियां असंगत बन जाती हैं । (पैरा 27 से 30 और 33-35)

अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का पूर्ण रूप से मूल्यांकन करने पर यह न्यायालय पाता है कि अभियोजन पक्ष अपराध में आलिप्त करने वाली परिस्थितियों की एक पूर्ण श्रृंखला का गठन करने वाली विश्वसनीय, ठोस और भरोसेमंद कड़ी को प्रस्तुत करने में पूरी तरह से असफल रहा है जिससे अभियुक्तों की भारतीय दंड संहिता की धारा 302

के अधीन दंडनीय हत्या के आरोप के लिए दोषिता को सिद्ध किया जा सके । विचारण न्यायालय द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 और धारा 396 तथा 397 के अधीन आरोपों के लिए अभिलिखित की गई अभियुक्तों की दोषमुक्ति को उलटते हुए उच्च न्यायालय ने ऐसा कोई निष्कर्ष अभिलिखित नहीं किया कि विचारण न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण साक्ष्य के मूल्यांकन के आधार पर या तो अनुचित था या अभियुक्तों की दोषिता का समर्थन करने वाला एक अनुज्ञेय दृष्टिकोण नहीं था । इस पृष्ठभूमि में, उच्च न्यायालय द्वारा दिया गया आक्षेपित निर्णय किसी दोषमुक्ति के निर्णय को उलटने और इसे दोषसिद्धि में संपरिवर्तित करने के लिए अभिलिखित किए जाने के लिए आज्ञापक रूप से अपेक्षित समाधान पर्याप्त नहीं है । यह न्यायालय बल्कि यह अभिनिर्धारित करने के लिए बाध्य है कि उच्च न्यायालय का निर्णय ऐसे किसी सारभूत या विश्वसनीय पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित होने के बजाय जिससे अनन्य रूप से अभियुक्तों की दोषिता इंगित होती हो, पूर्णतया अटकलों और अनुमानों पर आधारित है । जहां तक धारा 392 के अधीन अपराध के लिए विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित की गई अभियुक्तों की दोषसिद्धि का संबंध है, वह भी पारिस्थितिक साक्ष्य की इसी प्रकार की अग्राह्य और अविश्वसनीय कड़ियों पर आधारित है जिसे इस न्यायालय ने पूर्ववर्ती चर्चा में त्यक्त किया है । (पैरा 35 और 39)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2023]	(2023) 9 एस. सी. सी. 581 : **एच. डी. सुंदरा और अन्य** बनाम **कर्नाटक राज्य** ;	24
[2011]	(2011) 11 एस. सी. सी. 724 : **मुस्तकीम** उर्फ **सिराजुदीन** बनाम **राजस्थान राज्य** ;	35
[1985]	[1985] 1 उम. नि. प. 995 = (1984) 4 एस. सी. सी. 116 : **शरद बिरधीचंद सारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	23

[1964] ए. आई. आर. 1964 एस. सी. 1184 :
हरीचरण कुर्मी बनाम **बिहार राज्य ।** 36

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2016 की दांडिक अपील सं. 250 (इसके साथ 2016 की दांडिक अपील सं. 218-219 और 2024 की दांडिक अपील सं. 1102).

1993 की दांडिक अपील सं. 1012 में गुजरात उच्च न्यायालय, अहमदाबाद द्वारा तारीख 11 दिसंबर, 2015 को पारित किए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपीलें ।

अपीलार्थियों की ओर से सर्वश्री राउफ रहीम, ज्येष्ठ अधिवक्ता, नचिकेता जोशी, मोहम्मद असद खान, (सुश्री) सुचेता जोशी, हिमाद्री हकसर, नारायण देव पाराशर, अली असगर रहीम और शेखर कुमार

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वसुश्री अर्चना पाठक दवे, ज्येष्ठ अधिवक्ता, स्वाति घिलडियाल और देवयानी भट्ट

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति संदीप मेहता ने दिया ।

न्या. मेहता – इन अपीलों में 1994 की दांडिक अपील सं. 949 और 1993 की दांडिक अपील सं. 1012 में गुजरात उच्च न्यायालय, अहमदाबाद द्वारा तारीख 11 दिसंबर, 2015 को पारित किए गए एक ही निर्णय और आदेश को चुनौती दी गई है ।

2. अपीलार्थियों, मूल अभियुक्त सं. 1, 2, 3 और 5 अर्थात् ठाकुर लक्ष्मणसिंह हलसिंह (जिसे इसमें इसके पश्चात् अभियुक्त-1 कहा गया है), ठाकुर प्रवीणसिंह राजसिंह (जिसे इसमें इसके पश्चात् अभियुक्त-2 कहा गया है), ठाकुर उमेद सिंह नथूसिंह (जिसे इसमें इसके पश्चात् अभियुक्त-3 कहा गया है), ठाकुर खेमसिंह हलसिंह (जिसे इसमें इसके पश्चात् अभियुक्त-5 कहा गया है), का मूल अभियुक्त सं. 4 अर्थात्

ठाकुर प्रभातसिंह कपूरसिंह (जिसे इसमें इसके पश्चात् अभियुक्त-4 कहा गया है), के साथ क्रमश: 1990 के सेशन मामला सं. 107 और 143 में विद्‌वान् अपर सेशन न्यायाधीश, जिला बनासकांठा, पालनपुर (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'विचारण न्यायालय' कहा गया है) द्‌वारा विचारण किया गया था । विचारण न्यायालय द्‌वारा अभियुक्त-अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में 'भारतीय दंड संहिता') की धारा 392 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्‌ध किया गया और 5,000/- रुपए के जुर्माने सहिता दस वर्ष का कठोर कारावास भुगतने और जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर तीन माह का अतिरिक्त साधारण कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया । विद्‌वान् विचारण न्यायालय ने अभियुक्त-अपीलार्थियों को तारीख 21 अगस्त, 1993 के निर्णय और अंतिम आदेश द्‌वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 और धारा 396 तथा 397 के अधीन आरोपों से दोषमुक्त कर दिया । मूल अभियुक्त सं 4 को सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया था ।

3. अभियुक्त-अपीलार्थियों ने व्यथित होकर तारीख 21 अगस्त, 1993 के आदेश के विरुद्‌ध 1993 की दांडिक अपील सं. 1012 फाइल की और दोषमुक्ति की ईप्सा की, जबकि राज्य ने अभियुक्त-अपीलार्थियों की आरोपित अपराधों अर्थात् भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 और धारा 396 तथा 397 के लिए दोषमुक्ति को चुनौती देते हुए 1994 की दांडिक अपील सं. 949 फाइल की ।

संक्षेप में अभियोजन का पक्षकथन

4. विट्‌ठलभाई कचराभाई बरोत (अभि. सा. 1) ने तारीख 1 मार्च, 1990 को गढ़ पुलिस थाना, तालुका पालनपुर, गुजरात में एक शिकायत (प्रदर्श 21), अन्य बातों के साथ-साथ, यह अभिकथन करते हुए दर्ज कराई कि उसका पुत्र भरतभाई (मृतक), जो पंजीकरण संख्यांक जीजे-08-114 वाली एक जीप चलाता था, की हत्या कर दी गई थी और उसका शव दांतीवाड़ा रोड पर गांव डांगिया में निज़ामखान नामक व्यक्ति के खेत में पड़ा हुआ पाया था । उक्त शिकायत के आधार पर गढ़ पुलिस थाना,

तालुका पालनपुर, गुजरात में 1990 का आपराधिक मामला (प्रथम इत्तिला रिपोर्ट) सं. 2914 रजिस्ट्रीकृत किया गया और अन्वेषण आरंभ किया गया ।

5. तारीख 2 मार्च, 1999 की भौर में सरदारनगर पुलिस थाने के पुलिस उप निरीक्षक जे. एन. चौधरी (अभि. सा. 22) ने चरणनगर, अहमदाबाद के निकट एक जीप को तेज गति से चलाते हुए देखा । पुलिस उप निरीक्षक ने जीप को रुकवाने की कोशिश की जो कि तीव्र गति से चलाई जा रही थी और यह जीप कुछ दूर जाकर रुकी । चार व्यक्ति जीप से उतरे और भागने की कोशिश की । इन व्यक्तियों में से एक को पकड़ लिया गया और गिरफ्तार किया गया तथा उसने अपना नाम लक्ष्मणसिंह (अभियुक्त-1) बताया ।

6. यह अभिकथित है कि अभियुक्त-1 ने पुलिस द्वारा परिप्रश्न करने पर चार सह-अभियुक्तों (अभि-2, अभि-3, अभि-4 और अभि-5) के नाम बताए और कहा कि वे वही व्यक्ति थे जो उसके साथ जीप में यात्रा कर रहे थे ।

7. परिप्रश्न करने के दौरान अभियुक्त-1 ने जीप के स्वामी की हत्या करने की भी संस्वीकृति की और यह भी संस्वीकृति की कि इस यान को उक्त वारदात के दौरान लूटा गया था । उसने यह भी कहा कि जो व्यक्ति घटनास्थल से बचकर भाग गए हैं, वे भी हत्या में सम्मिलित थे । चूंकि जीप पर रक्त के धब्बे लगे थे इसलिए इसे अभिगृहीत किया गया और अभियुक्त-1 को अभिरक्षा में लिया गया ।

8. प्रायिक अन्वेषण किया गया ; पंचनामा तैयार किया गया ; शेष चार अभियुक्तों को गिरफ्तार किया गया । अभियुक्त-2 के बताने पर एक रक्तरंजित चाकू बरामद किया गया जो कि अभिकथित रूप से आक्रामक आयुध था । यह बरामदगी अभिकथित रूप से एक नाले से की गई थी । अभियुक्त-3 और अभियुक्त-4 को गिरफ्तार किया गया । अभियुक्त-3 के रक्तरंजित वस्त्र बरामद किए गए । तारीख 4 अप्रैल, 1990 को अभियुक्त-4 को गिरफ्तार किया गया और उसकी सूचना के आधार पर कांजी छारा की पत्नी शोभनाबेन द्वारा एक चाकू प्रस्तुत

किया गया । अन्वेषण अधिकारी ने निष्कर्ष निकाला कि अभियुक्त व्यक्तियों ने भरतभाई (मृतक) की जीप टैक्सी को भाड़े पर लिया था और उसके पश्चात् उन्होंने विपदग्रस्त की हत्या कर दी और जीप को लूट लिया ।

9. अभियुक्तों के विरुद्ध संबंधित न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी (जे.एम.एफ.सी.) के न्यायालय में भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 और धारा 396 तथा 397 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दो अलग-अलग आरोप पत्र फाइल किए गए । अपराध अनन्य रूप से सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय होने के कारण दोनों आरोप पत्रों में के अभियुक्तों को सेशन न्यायालय, बनासकांठा, पालनपुर को सुपुर्द किया गया जहां से मामले विचारण के लिए अपर सेशन न्यायाधीश, बनासकांठा, पालनपुर के न्यायालय को सौंपे गए । अभियुक्त-1, अभियुक्त-2, अभियुक्त-3 और अभियुक्त-4 के विरुद्ध 1990 के सेशन मामला सं. 107 में भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 और धारा 396 तथा 397 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए आरोप विरचित किए गए । अभियुक्त-5 के विरुद्ध 1990 के सेशन मामला सं. 143 में इसी प्रकार के आरोप विरचित किए गए । अभियुक्तों ने दोषी न होने का अभिवाक् किया और विचारण किए जाने का दावा किया । यद्यपि आरोप अलग-अलग विरचित किए गए थे, किंतु दोनों आरोप पत्रों में के अभियुक्तों का विचारण संयुक्त रूप से किया गया था ।

10. अभियोजन पक्ष द्वारा अपने पक्षकथन को साबित करने के लिए 25 साक्षियों की परीक्षा की गई और 23 दस्तावेज प्रदर्शित किए गए । दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'दंड प्रक्रिया संहिता' कहा गया है) की धारा 313 के अधीन प्रश्न किए जाने पर और अभियोजन पक्ष द्वारा अभियुक्तों के विरुद्ध प्रस्तुत की गई परिस्थितियों से सामना कराने पर उन्होंने उनसे इनकार किया और निर्दोष होने का दावा किया ।

11. विद्वान् विचारण न्यायालय ने विद्वान् लोक अभियोजक और प्रतिरक्षा पक्ष के काउंसेल द्वारा दी गई दलीलों को सुनने के पश्चात्

अभियुक्त सं. 4 को पूर्ण रूप से दोषमुक्त कर दिया । अभियुक्त-1, अभियुक्त-2, अभियुक्त-3 और अभियुक्त-5 के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 और धारा 396 और धारा 397 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए आरोपों से दोषमुक्ति अभिलिखित करते हुए उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 392 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषी ठहराया गया और दोषसिद्ध किया गया तथा दस वर्ष का कठोर कारावास भुगतने और 5,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने तथा जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर तीन माह का अतिरिक्त साधारण कारावास भुगतने का दंडादेश दिया । अपनी दोषसिद्धि से व्यथित होकर अभियुक्त-1, अभियुक्त-2, अभियुक्त-3 और अभियुक्त-5 ने गुजरात उच्च न्यायालय के समक्ष 1993 की दांडिक अपील सं. 1012 फाइल की जबकि राज्य ने अभियुक्त-1, अभियुक्त-2, अभियुक्त-3 और अभियुक्त-5 की दोषमुक्ति को चुनौती देते हुए 1994 की दांडिक अपील सं. 949 फाइल की ।

12. राज्य द्वारा फाइल की गई 1994 की दांडिक अपील सं. 949 को गुजरात उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा मंजूर किया गया जबकि अभियुक्त-अपीलार्थियों द्वारा फाइल की गई अपील को खारिज कर दिया गया । उच्च न्यायालय ने अभियुक्तों की दोषमुक्ति को उलट दिया और उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 396 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया तथा उन्हें आजीवन कारावास भुगतने और जुर्माने का संदाय करने का दंडादेश दिया और व्यतिक्रम करने पर दिए गए दंडादेश को कायम रखा गया ।

13. अभियुक्त-अपीलार्थियों की ओर से फाइल की गई इन अपीलों में तारीख 11 दिसंबर, 2015 के पूर्वोक्त निर्णय को चुनौती दी गई है ।

अभियुक्त-अपीलार्थियों की ओर से दलीलें

14. अभियुक्त-अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि अभियोजन पक्ष ने किसी प्रकार का ऐसा कोई दस्तावेज साबित नहीं किया है जिससे यह सिद्ध हो सके कि पंजीकरण संख्यांक जीजे-08-114 वाली जीप मृतक की थी या उसके कब्जे में थी ।

अभियुक्तों के बताने पर अभिकथित रूप से बरामद की गई अपराध में आलिप्त करने वाली वस्तुओं का कभी भी न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशालाओं के माध्यम से परीक्षण नहीं कराया गया था । केवल दो अभियुक्तों के रक्त के नमूने सीरम विज्ञानी के परीक्षण के लिए न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला भेजे गए थे ।

15. अभियोजन पक्ष इस तथ्य को साबित करने में पूरी तरह से असफल रहा था कि अभियुक्त-1 पंजीकरण संख्यांक जीजे-08-114 वाली जीप में उस समय मौजूद पाया गया था जब इसे कुबेरनगर पुलिस थाने के पुलिस उप निरीक्षक जे. एन. चौधरी (अभि. सा. 22) द्वारा रुकवाया गया था । इस बाबत न्यायालय का ध्यान पुलिस उप निरीक्षक जे. एन. चौधरी (अभि. सा. 22) द्वारा सरदारनगर पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी को भेजी गई संसूचना अर्थात् प्रदर्श-96 की ओर दिलाया गया, जिसमें जीप के पंजीकरण संख्यांक का वर्णन नहीं है । विद्वान् काउंसेल ने आग्रह किया कि यह लोप अभियोजन के पक्षकथन के लिए घातक है ।

16. अत: यह आग्रह किया गया कि अभियुक्तों की दोषिता को युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध करने के लिए कोई विश्वसनीय और ठोस साक्ष्य नहीं है जिससे गुजरात उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित दोषमुक्ति के निष्कर्षों को उलटते हुए अभियुक्तअपीलार्थियों की यथानिदेशित दोषसिद्धि को न्यायोचित ठहराया जा सके ।

17. यह भी दलील दी गई कि अभियुक्त-2, अभियुक्त-3 और अभियुक्त-5 को पुलिस निरीक्षक, अभि. सा. 22 द्वारा अभिलिखित किए गए अभियुक्त-1 के एकमात्र संस्वीकृति कथन के आधार पर दोषसिद्ध किया गया है । विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि उक्त प्रकटन पुलिस अधिकारी द्वारा अभिलिखित एक संस्वीकृति के रूप में होने के कारण साक्ष्य में पूरी तरह से अग्राह्य है क्योंकि इससे भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'साक्ष्य अधिनियम' कहा गया है) की धारा 25 ओर 26 का अतिक्रमण होता है ।

18. यह भी दलील दी गई कि उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा यथा अभिलिखित अभियुक्तों की दोषमुक्ति को उलटते हुए कोई ऐसा निष्कर्ष अभिलिखित नहीं किया है कि विचारण न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण अनुचित था या अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से दो मत संभव नहीं थे अर्थात् एक अभियुक्तों के पक्ष में और दूसरा अभियोजन के पक्ष में । यह दलील दी गई कि उच्च न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णयों में अभिलिखित निष्कर्ष किसी ठोस साक्ष्य पर आधारित नहीं हैं और पूर्णतया अटकलों और अनुमानों के आधार पर निकाले गए हैं । अत: उन्होंने दलील दी कि अभियुक्त दोषमुक्ति के हकदार हैं और आक्षेपित निर्णय अपास्त किए जाने योग्य हैं ।

प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से दलीलें

19. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से हाजिर होने वाली विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल सुश्री अर्चना पाठक दवे ने अभियुक्त-अपीलार्थियों का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई दलीलों का जोरदार रूप से विरोध किया । उन्होंने दलील दी कि उच्च न्यायालय ने अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए सारभूत और विश्वसनीय पारिस्थितिक साक्ष्य का पूर्ण और उपयुक्त रूप से मूल्यांकन करने के पश्चात् अभियुक्तों को अपराधों का दोषी अभिनिर्धारित करते हुए अनधिक्षेपणीय निष्कर्ष अभिलिखित किए हैं । अत: उन्होंने न्यायालय से अपीलों को खारिज करने और उच्च न्यायालय के निर्णय की अभिपुष्टि करने का अनुरोध किया ।

चर्चा

20. हमने न्यायालय के समक्ष दी गई दलीलों पर गंभीरता से विचार किया और आक्षेपित निर्णय तथा अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का बारीकी से परिशीलन किया ।

21. इन अपीलों में न्यायनिर्णयन के लिए दो बुनियादी मुद्दे प्रस्तुत किए गए हैं :–

(i) विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों की दोषमुक्ति को चुनौती देते हुए की गई अपील में उच्च न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप की गुंजाइश ;

(ii) पूरी तरह से पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित मामले में आरोपों को सिद्ध करने के लिए अपेक्षित सबूत का मानदंड ।

22. यह विवादग्रस्त नहीं है कि अभियोजन पक्ष ने ऐसा कोई प्रत्यक्ष साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया था जिससे अभियुक्तों के विरुद्ध आरोपों को सिद्ध किया जा सके और अभियोजन का संपूर्ण पक्षकथन पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित है ।

23. पूरी तरह से पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित मामले में आरोपों को सिद्ध करने के लिए अपेक्षित सिद्धांतों को इस न्यायालय द्वारा **शरद बिरधीचंद सारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में स्पष्ट किया गया । उपरोक्त निर्णय में पांच स्वर्णिम नियम अधिकथित किए गए थे :–

> "(1) वे परिस्थितियां, जिनसे दोषिता का निष्कर्ष निकाला जाना है, अवश्य पूरी तरह सिद्ध करनी होंगी या सिद्ध की जानी चाहिएं न कि केवल सिद्ध 'की जा सकती हैं' ।
>
> (2) इस प्रकार सिद्ध किए गए तथ्य केवल अभियुक्त की दोषिता की कल्पना के अनुरूप होने चाहिएं अर्थात् इस बात के सिवाय कि अभियुक्त दोषी है, किसी अन्य कल्पना के पोषक नहीं होने चाहिएं,
>
> (3) परिस्थितियां निश्चायक प्रकृति और प्रवृत्ति की होनी चाहिएं,
>
> (4) उन्हें साबित की जाने वाली हर उप-कल्पना के सिवाय हर संभावित उप-कल्पना अपवर्जित होनी चाहिए, और
>
> (5) साक्ष्य की श्रृंखला इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि अभियुक्त की निर्दोषिता के अनुरूप निष्कर्ष निकालने के लिए कोई भी युक्तियुक्त आधार न बचे और उससे यह दर्शित हो कि संपूर्ण मानवीय अधिसंभावना में वह कार्य अभियुक्त द्वारा ही किया गया होगा ।"

---

[1] [1985] 1 उम. नि. प. 995 = (1984) 4 एस. सी. सी. 116.

24. दोषमुक्ति के विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 378(1)(ख) के अधीन अपील पर विचार करते समय अपीली अधिकारिता का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप की गुंजाइश को शासित करने वाले सिद्धांतों को इस न्यायालय द्वारा हाल ही में **एच. डी. सुंदरा और अन्य** बनाम **कर्नाटक राज्य**[1] वाले मामले में दोहराया गया था, जो निम्नलिखित हैं :–

> "(क) अभियुक्त की दोषमुक्ति से निर्दोषिता की उपधारणा और मजबूत हो जाती है ;
>
> (ख) अपील न्यायालय दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील की सुनवाई करते समय मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करने के लिए हकदार है ;
>
> (ग) अपील न्यायालय को, साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करने के पश्चात् दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील का विनिश्चय करते समय यह विचार करना चाहिए कि क्या विचारण न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण एक ऐसा संभाव्य दृष्टिकोण है जिसे अभिलेख पर के साक्ष्य के आधार पर अपनाया जा सकता था ;
>
> (घ) यदि अपनाया गया दृष्टिकोण एक संभाव्य दृष्टिकोण है, तो अपील न्यायालय दोषमुक्ति के आदेश को इस आधार पर नहीं उलट सकता कि एक अन्य दृष्टिकोण भी संभाव्य था ; और
>
> (ङ) अपील न्यायालय दोषमुक्ति के आदेश में केवल तब हस्तक्षेप कर सकता है यदि वह इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि अभिलेख पर के साक्ष्य के आधार पर जो एकमात्र निष्कर्ष अभिलिखित किया जा सकता है वह यह है कि अभियुक्त की दोषिता को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया गया था और कोई अन्य निष्कर्ष संभव नहीं था ।"

25. इन सुस्थिर विधिक सिद्धांतों के आलोक में विचार करते हुए हम अब आक्षेपित निर्णय का मूल्यांकन करने के लिए अग्रसर होंगे जिसके द्वारा विचारण न्यायालय द्वारा की गई दोषमुक्ति को उलटते

---

[1] (2023) 9 एस. सी. सी. 581.

हुए अभियुक्तों की दोषसिद्धि अभिलिखित की गई है । तारीख 11 दिसंबर, 2015 के आक्षेपित निर्णय से सुसंगत निष्कर्षों को तुरंत संदर्भ के लिए इसमें नीचे उद्धृत किया जाता है :–

> "(6.1) आरंभ में यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है और यह विवादग्रस्त नहीं है कि मृतक भरतभाई का शव तारीख 1 मार्च, 1990 को गढ़ पुलिस थाना, तालुका पालनपुर की अधिकारिता के भीतर दांतीवाड़ा रोड पर गांव डांघिया में निज़ामखान नामक व्यक्ति के खेत में पाया गया था । यह विवादग्रस्त नहीं है कि मूल अभियुक्त सं. 1 लक्ष्मणसिंह को सरदारनगर पुलिस थाने के पुलिस उप निरीक्षक श्री चौधरी द्वारा तारीख 2 मार्च, 1990 को भौर में गिरफ्तार किया गया था । तारीख 2 मार्च, 1990 को भौर में अहमदाबाद में छारानगर के निकट सरदारनगर पुलिस थाने के पुलिस उप निरीक्षक ने तीव्र गति से आते हुए एक जीप (मुद्दामल जीप) देखी और उसने इसे रुकवाने की कोशिश की । मूल अभियुक्त सं. 1 को छोड़कर चार व्यक्ति जीप से भागने में सफल रहे, तथापि, मूल अभियुक्त सं. 1 को गिरफ्तार कर लिया गया और परिप्रश्न किए गए । मूल अभियुक्त सं. 1 ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभिलिखित अपने आगे के कथन में जीप में अपनी मौजूदगी को स्पष्ट करने की कोशिश की । मूल अभियुक्त सं. 1 के अनुसार, चूंकि वह गीतामंदिर बस अड्डे से पालनपुर जाना चाहता था और एक जीप पालनपुर के लिए यात्रियों को ले रही थी, उसे भाड़ा देकर इस जीप में बैठने के लिए कहा गया था और इसलिए वह अन्य यात्रियों के साथ जीप में बैठ गया तथा सरदारनगर के निकट सड़क पर पुलिस ने जीप रुकवाने की कोशिश की, जो कुछ दूरी पर जाकर रुकी और इसलिए यात्री और ड्राइवर भाग गए और जब वह जीप से उतरा तो पुलिस ने उसे गिरफ्तार कर लिया । तथापि, विद्वान् विचारण न्यायालय ने अकाट्य कारण देते हुए मूल अभियुक्त सं. 1 की प्रतिरक्षा को स्वीकार नहीं किया । यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि गीतामंदिर बस अड्डा, छारानगर से पालनपुर जाने के लिए, जहां से

मूल अभियुक्त सं. 1 को जीप से गिरफ्तार किया गया था, का कतई कोई मार्ग नहीं था । गीतामंदिर बस अड्डे से पालनपुर जाने के लिए छारानगर/सरदार नगर जाने की कतई आवश्यकता नहीं है । इन परिस्थितियों में, चूंकि मूल अभियुक्त सं 1 ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभिलिखित अपने आगे के कथन में मिथ्या स्पष्टीकरण दिया है/प्रतिरक्षा ली है । इस प्रक्रम पर, यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि जीप के टायरों के बीच डिजाइन का मिलान घटनास्थल पर पाए गए टायर के चिह्नों से होता है, जहां से मृतक भरतभाई का शव पाया गया था । यहां तक कि मूल अभियुक्त सं. 1 के चप्पलों के डिजाइन का भी घटनास्थल पर पाए गए चप्पल के डिजाइन से मिलान होता है ।

(6.2) वर्तमान मामले में मूल अभियुक्त सं. 2 प्रवीणसिंह के बताने पर अपराध कारित करने में प्रयुक्त किए गए चाकू की बरामदगी हुई है जिसे उस स्थान अर्थात् पालनपुरसिद्धपुर राजमार्ग सड़क से बरामद किया गया था जिसकी जानकारी केवल उक्त अभियुक्त को ही हो सकती थी । मूल अभियुक्त सं. 2 के बताने पर की गई चाकू की बरामदगी को पंच साक्षियों की परीक्षा करके सिद्ध और साबित किया गया है ।

(6.3) वर्तमान मामले में मूल अभियुक्त सं. 3 और 5 के बताने पर भी चाकू की बरामदगी हुई है और अपराध कारित करने में प्रयुक्त किया गया चाकू जिस स्थान से बरामद किया गया था उसकी जानकारी केवल उक्त अभियुक्तों को थी । मूल अभियुक्त सं. 3 और 5 के ट्राउजर/पैंट की बरामदगी भी उनके बताने पर उक्त अभियुक्तों के मित्र कांजीभाई के मकान से की गई थी । उक्त पैंटों पर रक्त के धब्बे थे । मूल अभियुक्त सं. 3 और 5 अपनी पैंटों पर रक्त के धब्बों के बारे में स्पष्टीकरण देने में असफल रहे । मूल अभियुक्त सं. 3 और 5 के बताने पर ट्राउजर/पैंटों और चाकू की बरामदगी को प्रदर्श 77 पर कांजीभाई और उसकी पत्नी शोभनाबेन की परीक्षा करके सिद्ध और साबित किया गया है ।

(6.4) अत: यह भी दलील दी गई है कि जब अपराध कारित करने में प्रयुक्त किए गए आयुधों की बरामदगियां हुई हैं और मूल अभियुक्त सं. 2, 3 और 5 के बताने पर मूल अभियुक्त सं. 3 और 5 के ट्राउजरों और पैंटों की भी बरामदगी हुई है जिन पर रक्त के धब्बे थे और जब मूल अभियुक्त सं. 1 को मुद्दामल जीप में पाया गया था/हिरासत में लिया गया था/गिरफ्तार किया गया था और उसकी प्रतिरक्षा/स्पष्टीकरण मिथ्या पाया गया है और जब अभियोजन पक्ष उस जीप के अंतर्ग्रस्त होने के संबंध में घटनाओं की पूर्ण श्रृंखला को सिद्ध करने और/या साबित करने में सफल रहा है, जो मूल अभियुक्त सं. 1 द्वारा चलाई जा रही थी, तब यह नहीं कहा जा सकता कि विचारण न्यायालय ने अभियुक्त सं. 1, 2, 3 और 5 को भारतीय दंड संहिता की धारा 392 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध करने में कोई गलती की है । यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि जीप के इंजन के ढक्कन पर और यहां तक कि चाकू पर भी रक्त के धब्बे पाए गए थे ।

(6.5) अब, हम मूल अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 396 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषमुक्त करते हुए विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित किए गए दोषमुक्ति के आक्षेपित निर्णय और आदेश के विरुद्ध राज्य द्वारा फाइल की गई अपील पर आते हैं ।

जहां तक विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 396 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषमुक्त करते हुए पारित किए गए दोषमुक्ति के आर्क्षेपित निर्णय और आदेश का संबंध है, यह प्रतीत होता है कि आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 396 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए इस आधार पर दोषमुक्त किया है चूंकि मूल अभियुक्त सं 4 को दोषमुक्त कर दिया गया है और शेष दोषसिद्ध अभियुक्तों की सं. केवल चार रह जाती है, इसलिए विद्वान् विचारण न्यायालय ने शेष अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 396 के अधीन

दंडनीय अपराध के लिए दोषमुक्त किया है । तथापि, यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि आरंभ से ही अपराध के कारित करने में पांच व्यक्तियों की अंतर्ग्रस्तता के अभिकथन किए गए थे । यह सही है कि पांच अभियुक्तों में से मूल अभियुक्त सं 4 को पर्याप्त साक्ष्य के अभाव में दोषमुक्त गया है । तथापि, केवल इस आधार पर ही शेष अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 396 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषमुक्त नहीं किया जा सकता था । जैसा कि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा मनोज गिरि (उपर्युक्त) वाले मामले में मत व्यक्त किया गया है, किसी प्रस्तुत मामले में पांच या अधिक व्यक्ति हो सकते हैं और पांच या अधिक व्यक्ति होने का तथ्य न तो विवादग्रस्त हो और स्पष्ट रूप से सिद्ध किया गया हो, किंतु न्यायालय कथित रूप से डकैती करने वाले सभी व्यक्तियों की शनाख्त के बारे में निष्कर्ष अभिलिखित करने में समर्थ न रहा हो और उन्हें दोषसिद्ध करने में समर्थ न रहा हो और उसके पश्चात् यह मत व्यक्त करते हुए उनकी दोषमुक्ति का आदेश किया गया हो कि शनाख्त सिद्ध नहीं की गई है, या अन्यथा उन्हें दोषसिद्ध करने के लिए अपर्याप्त साक्ष्य है, तो ऐसे मामले में डकैती के लिए पांच व्यक्तियों से कम या यहां तक कि एक व्यक्ति की दोषसिद्धि हो सकती है । सक्तू (उपर्युक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा इसी प्रकार का दृष्टिकोण अपनाया गया है । इन परिस्थितियों में और इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में विद्वान् विचारण न्यायालय ने शेष मूल अभियुक्त सं. 1, 2, 3 और 5 को भारतीय दंड संहिता की धारा 396 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषमुक्त करके तात्विक रूप से गलती की है ।

(6.6) इसी प्रकार, विद्वान् विचारण न्यायालय ने मूल अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषमुक्त करके गंभीर गलती की है । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित किए गए निष्कर्षों में विद्वान् विचारण न्यायालय ने विनिर्दिष्ट रूप से यह मत व्यक्त

किया है और यह निष्कर्ष निकाला है कि मूल अभियुक्त सं. 1, 2, 3 और 5 ने हत्या/लूट/डकैती कारित की है और मृतक भरतभाई की हत्या के संबंध में उन्हें संपृक्त करने के लिए उनके विरुद्ध पर्याप्त सामग्री/साक्ष्य है । अत: विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियुक्तों को पहले ही भारतीय दंड संहिता की धारा 392 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया है । जैसा कि इसमें ऊपर मत व्यक्त किया गया है, मूल अभियुक्त सं. 1, 2, 3 और 5 को भी भारतीय दंड संहिता की धारा 396 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषी अभिनिर्धारित किया गया है । जब एक बार अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 396 के अधीन दंडनीय अपराधों अर्थात् हत्या सहित डकैती के लिए दोषसिद्ध किया गया है और मृतक भरतभाई की मृत्यु आपराधिक मानव वध थी, विद्वान् विचारण न्यायालय को अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए भी दोषसिद्ध किया जाना चाहिए था । जैसा कि इसमें ऊपर मत व्यक्त किया गया है, अभियोजन पक्ष विश्वसनीय साक्ष्य प्रस्तुत करके घटनाओं की पूर्ण श्रृंखला को साबित और सिद्ध करने में सफल रहा है और इसलिए अभियुक्त व्यक्ति भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किए जाने के दायी थे ।

(6.7) अब, जहां तक मूल अभियुक्तों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अधिवक्ता द्वारा अवलंब लिए गए राकेश (उपर्युक्त), विजय कुमार (उपर्युक्त) और कन्हैयालाल (उपर्युक्त) वाले मामलों में माननीय उच्चतम न्यायालय के विनिश्चयों का अवलंब लिए जाने का संबंध है, यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि तथ्यों और इस न्यायालय द्वारा अभिलिखित किए गए निष्कर्षों के आधार पर पूर्वोक्त विनिश्चयों में से कोई भी लागू नहीं होगा और/या इनसे अभियुक्तों को कोई सहायता नहीं मिलेगी ।

(6.8) अब, जहां तक अभियुक्तों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अधिवक्ता द्वारा राकेश (उपर्युक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लेने का संबंध है, यह

उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि वर्तमान मामले में मूल अभियुक्त सं. 2 और मूल अभियुक्त सं. 3 और 5 के बताने पर चाकू/चाकुओं की बरामदगी हुई है और मूल अभियुक्त सं 3 और 4 के रक्त के धब्बे लगे वस्त्रों की बरामदगी हुई है जिसे मूल अभियुक्त सं. 2, 3, और 5 द्वारा स्पष्ट नहीं किया गया है । इसी प्रकार, कन्हैयालाल (उपर्युक्त) वाले मामले में अभियुक्तों को संपृक्त करने के लिए माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष एक-साथ देखे जाने के वृत्तांत के सिवाय कोई अन्य साक्षी नहीं था । इन परिस्थितियों में, पूर्वोक्त विनिश्चयों में से कोई भी प्रस्तुत मामले के तथ्यों को लागू नहीं होगा और/या अभियुक्तों को कोई सहायता नहीं मिलेगी ।

(7.0) उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए और ऊपर उल्लिखित कारणों से मूल अभियुक्तों द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 392 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए अपनी दोषसिद्धि के विरुद्ध फाइल की गई 1993 की दांडिक अपील सं. 1012 को तद्द्वारा खारिज किया जाता है ।"

26. अभिलेख का परिशीलन करने पर हम पाते हैं कि अभियोजन पक्ष ने अभियुक्तों की दोषिता को सिद्ध करने के लिए पारिस्थितिक साक्ष्य का अवलंब लिया है जिसमें प्रकटन कथन, बरामदगियां और पता चले तथ्य समाविष्ट हैं ।

27. सबसे महत्वपूर्ण बरामदगी अभिकथित रूप से जीप की है जिसका पंजीकरण संख्यांक जीजे-08-114 है ।

28. हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि उक्त बरामदगी अभियुक्त-1 से होने का अभ्यारोपण किया गया है, जिसे अभिकथित रूप से तारीख 2 मार्च, 1990 को पुलिस उप निरीक्षक जे. एन. चौधरी (अभि. सा. 22) द्वारा गिरफ्तार किया गया था । उसने तारीख 2 मार्च, 1990 को सरदारनगर पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी को एक रिपोर्ट/संसूचना (प्रदर्श-96) भेजी थी जिसमें अभियुक्त-1 द्वारा स्वयं को और अन्य अभियुक्तों को आलिप्त करते हुए संस्वीकृति किया जाना अभिलिखित है ।

29. यह घिसी-पिटी बात है कि किसी पुलिस अधिकारी द्‌वारा अभिरक्षा में अभियुक्त की अभिलिखित की गई संस्वीकृति साक्ष्य में अग्राह्य है क्योंकि इससे साक्ष्य अधिनियम की धारा 25 का अतिक्रमण होता है । इस प्रकार, अभियुक्त-1 के कथन का वह भाग, जो रिपोर्ट/संसूचना (प्रदर्श-96) में अभिलिखित है जिसमें उसने अभिकथित रूप से जीप के ड्राइवर की हत्या करने और जीप को लूटने के अपराध की संस्वीकृति की थी और अन्य अभियुक्त व्यक्तियों के सह-अभियुक्तों के रूप में नाम लिए थे, पूरी तरह से अग्राह्य है और साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन उपबंधित सीमा के सिवाय इसे साक्ष्य में ग्रहण नहीं किया जा सकता ।

30. अभियुक्त-1 को गिरफ्तार किए जाने के पश्चात् पुलिस उप निरीक्षक जे. एन. चौधरी (अभि. सा. 22) ने दो पंचनामे अर्थात् प्रदर्श-88 और प्रदर्श-89 तैयार किए थे । पंचनामा (प्रदर्श-89) तारीख 2 मार्च, 1990 को 8.30 बजे अपराह्न में तैयार किया गया था जिसमें कोई उल्लेख नहीं है कि अभियुक्त-1 ने अन्य अभियुक्तों के नाम प्रकटित किए थे । यह लोप बहुत ही महत्वपूर्ण है और मामले की तह तक जाता है । इससे पुलिस उप निरीक्षक जे. एन. चौधरी (अभि. सा. 22) के साक्ष्य की सत्यता पर गंभीर संदेह उत्पन्न होता है । परिणामतः, अभियुक्त-1 द्‌वारा किया गया तथाकथित प्रकटन कथन (प्रदर्श-96), जिस पर अभियोजन पक्ष ने अवलंब लिया है और उच्च न्यायालय ने इसे अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्‌ध एक अपराध में आलिप्त करने वाली परिस्थिति समझते हुए इसका अवलंब लिया है, पूर्णतया अग्राह्य और अविश्वसनीय है ।

31. पंच साक्षियों में से एक प्रताप तोलाराम मखीजा की अभि. सा. 21 के रूप में परीक्षा की गई थी और उसने अपने अभिसाक्ष्य में इस संबंध में एक शब्द भी नहीं कहा था कि अभियुक्तों ने पुलिस उप निरीक्षक जे. एन. चौधरी (अभि. सा. 22) को उस समय कोई संस्वीकृति/प्रकटन कथन किया था जब ज्ञापन (प्रदर्श-88 और 89) तैयार किए गए थे ।

32. जब पुलिस उप निरीक्षक जे. एन. चौधरी (अभि. सा. 22) की परीक्षा की गई थी तब अभियोजन पक्ष ने संसूचना (प्रदर्श-96) के संस्वीकृति वाले भाग को साबित करने का कोई प्रयत्न तक नहीं किया गया था और ठीक ऐसी ही हमारी राय है ।

33. यदि तर्क के लिए मान लिया जाए कि अभियुक्त-1 भरतभाई (मृतक) के स्वामित्व वाली जीप में मौजूद था, अकेले इस तथ्य से हत्या और डकैती के अपराधों के लिए उक्त अभियुक्त की सहापराधिता के बारे में कोई निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता । अभियोजन पक्ष के स्वीकृत पक्षकथन के अनुसार, उस समय जीप में एक से अधिक व्यक्ति मौजूद थे जब इसे पुलिस उप निरीक्षक जे. एन. चौधरी (अभि. सा. 22) द्वारा रुकवाया गया था । इस प्रकार, अभियुक्त-1 (लक्ष्मण सिंह) द्वारा जीप में एक निर्दोष यात्री के रूप में यात्रा करने की संभाव्यता से इनकार नहीं किया जा सकता । अभियुक्त-1 की दोषिता को सिद्ध करने के लिए उसकी जीप में मौजूदगी के सिवाय किसी अन्य परिस्थिति को अभियोजन के पक्षकथन में प्रस्तुत नहीं किया गया था ।

34. अभियोजन पक्ष ने हमलावरों के रूप में अभियुक्त-2, अभियुक्त-3 और अभियुक्त-5 की शनाख्त पर अभियुक्त-1 के प्रकटन कथन (प्रदर्श-96) के आधार पर विश्वास किया है । उन्हें प्राथमिक रूप से चाकुओं और वस्त्रों की बरामदगियों के आधार पर दोषसिद्ध किया गया था । हम पाते हैं कि अभियुक्तों के बताने पर अभिकथित रूप से बरामद की गई इन तथाकथित अपराध में आलिप्त करने वाली वस्तुओं को कभी भी सीरम विशेषज्ञ को उन वस्तुओं पर विद्यमान रक्त समूहों का मृतक के रक्त समूह के साथ मिलान करने के लिए नहीं भेजा गया था ।

35. हमने बरामदगियों से सहबद्ध संबंधित पुलिस पदधारियों के साक्ष्य पर विचार किया है और उनके परिसाक्ष्यों को अत्यंत संदेहास्पद पाया है । अभियुक्त-3 के बताने पर जो चाकू बरामद किया गया था उसे एक नाले से पाया गया था जो कि एक खुला स्थान है और सभी की पहुंच में है । अभियुक्त-4 पर जिस चाकू का अभ्यारोपण किया गया है उसे कांजी छारा की पत्नी शोभनाबेन द्वारा प्रस्तुत किया गया था और

इस प्रकार इसे अभियुक्त-4 से संबद्ध नहीं किया जा सकता है । इस प्रकार इन बरामदगियों को किसी भी रीति में अपराध में आलिप्त करने वाली प्रकृति का नहीं समझा जा सकता । **मुस्तकीम** उर्फ **सिराजुदीन** बनाम **राजस्थान राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया था कि रक्त-रंजित आयुधों की बरामदगी की एकल परिस्थिति से ऐसे साक्ष्य का गठन नहीं हो सकता जिसे किसी अभियुक्त को हत्या के आरोप के लिए दोषसिद्ध करने के लिए पर्याप्त समझा जा सके । अत: हम इन बरामदगियों को अत्यंत संदेहास्पद और दूषित पाते हैं । यदि क्षणभर के लिए यह मान लिया जाए कि ऐसी बरामदगियां की गई थीं, तो भी इनसे सीरम विज्ञानी की रिपोर्ट के रूप में ऐसी कोई निश्चायक परिस्थिति नहीं बनती है जिससे इन पर मृतक के रक्त समूह वाला रक्त समूह मौजूद होना सिद्ध होता है और इसलिए उनसे अभियोजन पक्ष का पक्षकथन अग्रसर नहीं होता है । इनके अतिरिक्त, हम पाते हैं कि अभियोजन पक्ष मुद्दामल वस्तुओं को सुरक्षित रखे जाने के तथ्य को सिद्ध करने के लिए आज्ञापक रूप से अपेक्षित कड़ी साक्ष्य को प्रस्तुत करने में असफल रहा था और इसलिए बरामदगियां असंगत बन जाती हैं ।

36. पुनरावृत्ति करते हुए, यह उल्लेखनीय है कि अभि. सा. 22 द्वारा अभिलिखित अभियुक्त-1 के प्रकटन कथन की सत्यता पर हमारे द्वारा पहले ही संदेह किया गया है । इसके अतिरिक्त, यह स्पष्ट है कि अभियुक्त-1 के प्रकटन कथन को अन्य अभियुक्तों अर्थात् अभियुक्त-2, अभियुक्त-3 और अभियुक्त-5 के विरुद्ध साक्ष्य में ग्रहण नहीं किया जा सकता । **हरीचरण कुर्मी** बनाम **बिहार राज्य**[2] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा एक सह-अभियुक्त की संस्वीकृति का अन्य अभियुक्तों के विरुद्ध साक्ष्यिक महत्व पर विचार किया गया था और यह अभिनिर्धारित किया गया था कि ऐसा कथन एक सारभूत साक्ष्य नहीं है । उक्त मामला एक अभियुक्त द्वारा की गई न्यायिक संस्वीकृति के संबंध में था और यह अभिनिर्धारित किया गया था कि ऐसी संस्वीकृति

---

[1] (2011) 11 एस. सी. सी. 724.

[2] ए. आई. आर. 1964 एस. सी. 1184.

को भी अन्य सह-अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध एक सारभूत साक्ष्य नहीं समझा जा सकता । प्रस्तुत मामले में, स्थिति और भी बदतर है क्योंकि उच्च न्यायालय ने अभियुक्त-1 के परिप्रश्न टिप्पण (प्रदर्श-96) का अवलंब लिया है जिससे अभियुक्त-2, अभियुक्त-3 और अभियुक्त-5 को अपराध का दोषी ठहराया जा सके । अभियुक्त-1 के परिप्रश्न टिप्पण से साक्ष्य अधिनियम की धारा 25 का उल्लंघन होने के कारण इसे किसी भी प्रकार के किसी प्रयोजन के लिए साक्ष्य में ग्रहण नहीं किया जा सकता ।

37. अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का पूर्ण रूप से मूल्यांकन करने पर हम पाते हैं कि अभियोजन पक्ष अपराध में आलिप्त करने वाली परिस्थितियों की एक पूर्ण श्रृंखला का गठन करने वाली विश्वसनीय, ठोस और भरोसेमंद कड़ी को प्रस्तुत करने में पूरी तरह से असफल रहा है जिससे अभियुक्तों की भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय हत्या के आरोप के लिए दोषिता को सिद्ध किया जा सके ।

38. हम आक्षेपित निर्णय के उद्धृत भागों से उल्लेख कर सकते हैं कि विचारण न्यायालय द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 और धारा 396 तथा 397 के अधीन आरोपों के लिए अभिलिखित की गई अभियुक्तों की दोषमुक्ति को उलटते हुए उच्च न्यायालय ने ऐसा कोई निष्कर्ष अभिलिखित नहीं किया कि विचारण न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण साक्ष्य के मूल्यांकन के आधार पर या तो अनुचित था या अभियुक्तों की दोषिता का समर्थन करने वाला एक अनुज्ञेय दृष्टिकोण नहीं था । इस पृष्ठभूमि में, उच्च न्यायालय द्वारा दिया गया आक्षेपित निर्णय किसी दोषमुक्ति के निर्णय को उलटने और इसे दोषसिद्धि में संपरिवर्तित करने के लिए अभिलिखित किए जाने के लिए आज्ञापक रूप से अपेक्षित समाधान पर्याप्त नहीं है ।

39. हम बल्कि यह अभिनिर्धारित करने के लिए बाध्य हैं कि उच्च न्यायालय का निर्णय ऐसे किसी सारभूत या विश्वसनीय पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित होने के बजाय जिससे अनन्य रूप से अभियुक्तों की दोषिता इंगित होती हो, पूर्णतया अटकलों और अनुमानों पर आधारित है । जहां तक धारा 392 के अधीन अपराध के लिए विचारण न्यायालय

द्वारा अभिलिखित की गई अभियुक्तों की दोषसिद्धि का संबंध है, वह भी पारिस्थितिक साक्ष्य की इसी प्रकार की अग्राह्य और अविश्वसनीय कड़ियों पर आधारित है जिसे हमने पूर्ववर्ती चर्चा में त्यक्त किया है ।

निष्कर्ष

40. उपरोक्त चर्चा के परिणामस्वरूप, 1993 की दांडिक अपील सं. 1012 में और 1994 की दांडिक अपील सं. 949 में गुजरात उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 11 दिसंबर, 2015 को पारित किया गया आक्षेपित निर्णय जांच में खरा नहीं उतरता है और तद्द्वारा अभिखंडित और अपास्त किया जाता है । इसके अतिरिक्त, विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 392 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट करते हुए तारीख 21 अगस्त, 1993 को पारित किया गया निर्णय भी अभिलेख को देखने पर असंधार्य है । इस प्रकार, दोनों निर्णयों को अभिखंडित और अपास्त किया जाता है ।

41. परिणामत:, ये अपीलें मंजूर की जाती हैं । अपीलार्थियों को आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है और यदि किसी अन्य मामले में आवश्यकता न हो, तो तुरंत स्वतंत्र किए जाने का निदेश दिया जाता है ।

42. लंबित आवेदन (आवेदनों), यदि कोई है, का निपटारा हो जाएगा ।

अपीलें मंजूर की गईं ।

जस.

[2024] 2 उम. नि. प. 153

शाहिद अली

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

[2024 की दांडिक अपील सं. 1479]

11 मार्च, 2024

न्यायमूर्ति विक्रम नाथ और न्यायमूर्ति सतीश चंद्र शर्मा

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302, 304 भाग 1 और 304 भाग 2 [सपठित आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 25/27] – हत्या – दोषसिद्धि – अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा एक विवाह समारोह के दौरान देसी पिस्तौल से छत की ओर निशाना करके हर्षोल्लास में गोली चलाया जाना – गोली मृतक की गर्दन में जा लगने के कारण उसकी घटनास्थल पर ही मृत्यु हो जाना – अभियुक्त को हत्या के अपराध के लिए धारा 302 और इसके साथ-साथ आयुध अधिनियम की धारा 25/27 के अधीन दोषसिद्ध और आजीवन कारावास से दंडादिष्ट किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किया जाना – संधार्यता – अभिलेख पर ऐसा कोई साक्ष्य न होने जिससे यह पता चलता हो कि अभियुक्त ने विवाह समारोह में सम्मिलित होकर हर्षोल्लास में गोली एकत्रित जनसमूह को निशाना बनाकर चलाई थी या मृतक और अभियुक्त की बीच कोई पूर्व दुश्मनी थी या अभियुक्त का मृतक की मृत्यु कारित करने का कोई आशय था, किंतु उस पर यह ज्ञान होने का अभ्यारोपण किया जा सकता है कि ऐसे कृत्य से मृत्यु हो जाना संभाव्य है, इसलिए मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उसकी धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि को धारा 304 भाग 2 के अधीन दंडनीय अपराध में संपरिवर्तित करना किंतु आयुध अधिनियम के अधीन दोषसिद्धि को कायम रखना उचित होगा ।

इस अपील के तथ्य संक्षेप में इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी-अभियुक्त द्वारा एक विवाह समारोह के दौरान हर्षोल्लास में गोली चलाई गई थी जो निशाना चुकने के कारण समारोह में मौजूद मृतक की गर्दन में जा लगी और उसकी घटनास्थल पर ही मृत्यु हो गई । गांव के चौकीदार

(अभि. सा. 1) द्वारा पुलिस थाने में यह उल्लेख करते हुए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई गई कि निजामुद्दीन नामक व्यक्ति की पुत्री का विवाह समारोह चल रहा था जिसमें मृतक सहित अन्य नातेदारों को भी उक्त विवाह में आमंत्रित किया गया था । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में यह कहा गया कि विवाह समारोह के बीच में अपीलार्थी ने मृतक पर गोली चला दी जिसके परिणामस्वरूप उसकी गर्दन पर क्षति पहुंची और अंततोगत्वा इसके कारण घटनास्थल पर ही उसकी मृत्यु हो गई । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में मृतक और अभियुक्त के बीच पूर्ववर्ती दुश्मनी होने का खुलासा किया गया । इसके अतिरिक्त, यह कहा गया था कि बहुत सारे व्यक्तियों ने अभिकथित घटना को देखा था क्योंकि विवाह समारोह में बहुत सारे लोग थे । तद्नुसार अभियुक्त के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और आयुध अधिनियम की धारा 25/27 के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई । मामले का अन्वेषण किया गया । अन्वेषण अधिकारी द्वारा जेल में अभियुक्त का कथन अभिलिखित किया गया और अभियुक्त ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित अपने कथन में अपनी दोषिता की संस्वीकृति की । आरोप पत्र फाइल किए जाने के उपरांत मजिस्ट्रेट द्वारा मामले को सेशन न्यायालय के सुपुर्द किया गया और अन्य अपराधों के साथ-साथ भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध और आयुध अधिनियम की धारा 25/27 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आरोप विरचित किए गए । मृतका के पिता के सिवाए लगभग सभी प्रत्यक्षदर्शी साक्षी विचारण के दौरान पक्षद्रोही घोषित किए गए । विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को दंड संहिता की धारा 302 के साथ-साथ आयुध अधिनियम के अधीन दोषसिद्ध करते हुए अन्य दंडादेशों के साथ-साथ आजीवन कारावास से दंडादिष्ट किया गया । अपील में उच्च न्यायालय द्वारा विचारण न्यायालय के निर्णय और आदेश की अभिपुष्टि की गई । अभियुक्त द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपील की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा केवल दंडादेश के प्रश्न के संबंध में विचार करते हुए अपील को भागत: मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – इस न्यायालय के समक्ष विवाद का आधार यह है कि क्या एक विवाह समारोह के दौरान अपीलार्थी द्वारा हर्षोल्लास में गोली

चलाने का यह अर्थ लगाया जा सकता है कि वह कार्य इतना आसन्न संकट था कि पूरी अधिसंभाव्यता थी कि वह मृत्यु कारित कर ही देगा या ऐसी शारीरिक क्षति कारित कर ही देगा जिससे मृत्यु कारित होना संभाव्य है ? विवाह समारोहों के दौरान हर्षोल्लास में गोली चलाना दुर्भाग्यपूर्ण है, तो भी हमारे देश में यह प्रचलित परिपाटी है । वर्तमान मामला ऐसी ही अनियंत्रित और अवांछित हर्षोल्लास में की गई गोलाबारी के खतरनाक परिणामों का एक प्रत्यक्ष उदाहरण है । जो भी स्थिति हो, अभिलेख पर ऐसे किसी साक्ष्य के अभाव में जिससे यह सुझाव मिलता हो कि या तो अपीलार्थी द्वारा हर्षोल्लास में की गई गोलाबारी (फायरिंग) एकत्रित जनसमूह को लक्ष्य करके और/या निशाना बनाकर की गई थी ; या मृतक और अपीलार्थी के बीच कोई पूर्व दुश्मनी थी, यह न्यायालय अभियोजन पक्ष के उस वृत्तांत को स्वीकार करने में असमर्थ हैं जिसे विचारण न्यायालय द्वारा स्वीकार किया गया था और उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई थी । इस संदर्भ में, मामले की संपूर्ण परिस्थितियों अर्थात् विशेष रूप से इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि – (i) मृतक और अपीलार्थी के बीच कोई पूर्ववर्ती दुश्मनी नहीं थी ; (ii) अभिलेख से अपीलार्थी के ऐसे आशय का निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि उसका आशय मृतक की मृत्यु कारित करना था ; और इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित और बाद में अनुसरण की गई विधि की स्थिति को ध्यान में रखते हुए इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि अपीलार्थी भारतीय दंड संहिता की धारा 299 के अर्थान्तर्गत अर्थात् भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग 2 के अधीन दंडनीय 'आपराधिक मानववध' कारित करने का दोषी है । पूर्वोक्त को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थी की भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि और दंडादेश को अपास्त किया जाता है । अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग 2 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाता है । अपीलार्थी ने पहले ही लगभग 8 वर्ष का कारावास भुगत लिया है । मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए, यह न्यायालय पहले ही भुगत ली गई अवधि के समतुल्य दंडादेश अधिनिर्णीत करता है । अपीलार्थी पर आयुध अधिनियम की धारा 25 और 27 के अधीन अधिनिर्णीत दोषसिद्धि और दंडादेश अपरिवर्तित बने रहेंगे । (पैरा 12, 13, 17 और 18)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2020]	(2014) 12 एस. सी. सी. 434 : **कुंवर पाल सिंह** बनाम **उत्तराखंड राज्य** ;	14, 15, 17
[2014]	(2020) 14 एस. सी. सी. 184 : **भगवान सिंह** बनाम **उत्तराखंड राज्य ।**	15, 17

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2024 की दांडिक अपील सं. 1479.

2018 की दांडिक अपील सं. 1462 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 4 अप्रैल, 2010 को पारित निर्णय और आदेश के विरूद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री संजय कुमार दुबे, शुचि सिंह, राकेश कुमार तिवारी, कृष्ण कांत दुबे, विवेक कुमार पांडेय, उज्ज्वल कुमार दुबे और अमन

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री आरधेंदुमौली कुमार प्रसाद, ज्येष्ठ अपर महाधिवक्ता, विष्णु शंकर जैन और आयुष मिश्रा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति सतीश चंद्र शर्मा ने दिया ।

न्या. शर्मा – इजाजत दी गई ।

2. यह अपील 2016 के सेशन विचारण सं. 290, जिसका शीर्षक 'उत्तर प्रदेश राज्य बनाम शाहिद अली' था, में तारीख 23 फरवरी, 2018 को पारित दोषसिद्धि के निर्णय और आदेश से उद्भूत हुई है जिसमें अपीलार्थी को दोषसिद्ध किया गया था और (i) भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दस हजार रुपए के जुर्माने सहित कठोर आजीवन कारावास भुगतने और जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर छह माह का कठोर कारावास भुगतने ; और (ii) आयुध अधिनियम, 1959 ("आयुध अधिनियम") की धारा 25/27 के अधीन पांच हजार रुपए के जुर्माने सहित पांच वर्ष का कठोर कारावास भुगतने और जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर तीन माह का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था ।

3. अपीलार्थी द्वारा दोषसिद्धि और दंडादेश को इलाहाबाद उच्च न्यायालय के समक्ष 2018 की दांडिक अपील सं. 1462, जिसका शीर्षक 'शाहिद अली बनाम उत्तर प्रदेश राज्य' था, द्वारा चुनौती दी गई जिसे उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 4 अप्रैल, 2019 के आदेश ("आक्षेपित आदेश") द्वारा खारिज कर दिया गया ।

4. इस न्यायालय ने तारीख 3 दिसंबर, 2021 को अपराध की प्रकृति के प्रश्न तक सीमित सूचना जारी की अर्थात् क्या अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के स्थान पर भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग 1 या भाग 2 के अधीन अपराध का दोषी ठहराया जा सकता था ।

5. मामले के तथ्यों से प्रकट होता है कि अभि. सा. 1 गुलाब अली अर्थात् गांव कटेना सिकेरिया, जिला फिरोजाबाद के चौकीदार द्वारा पुलिस थाना, जसराना में तारीख 17 मार्च, 2016 को यह उल्लेख करते हुए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई गई थी कि निजामुद्दीन की पुत्री का विवाह समारोह चल रहा था । प्रासंगिक रूप से (i) इशफाक अली ("मृतक") ; (ii) अभियुक्त अर्थात् शाहिद अली ; और (iii) अन्य नातेदारों को भी उक्त विवाह में आमंत्रित किया गया था । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में यह भी कहा गया था कि तारीख 17 मार्च, 2016 को लगभग 3.30 बजे अपराह्न में अर्थात् विवाह समारोह के बीच में अपीलार्थी ने इशफाक अली पर गोली चला दी जिसके परिणामस्वरूप उसकी गर्दन पर क्षति पहुंची और अंततोगत्वा इसके कारण घटनास्थल पर ही उसकी मृत्यु हो गई । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में मृतक और अभियुक्त के बीच पूर्ववर्ती दुश्मनी होने का खुलासा किया गया था । इसके अतिरिक्त, यह कहा गया था कि बहुत सारे व्यक्तियों ने अभिकथित घटना को देखा था क्योंकि विवाह समारोह में बहुत सारे लोग थे । तद्नुसार पुलिस थाना जसराना, जिला फिरोजाबाद में भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन 2016 के अपराध मामला सं. 108 के रूप में एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई । उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को प्रदर्श क-13 के रूप में साबित किया गया । उसके पश्चात्, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के संबंध में तारीख 17 मार्च, 2016 को 5.05 बजे अपराह्न में साधारण डायरी में रपट सं. 34, प्रदर्श क-4 की प्रविष्टि गई । उसके पश्चात्, अभि. सा. 19 अर्थात् लोकेन्द्र पाल सिंह, थाना भारसाधक अधिकारी, पुलिस थाना जसराना ने मामले का अन्वेषण किया, मृतक के शव की

मृत्युसमीक्षा की और मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट (प्रदर्श क-7) तैयार की । स्थल नक्शा (क-5) भी तैयार किया गया । मृतक के शव को अस्पताल ले जाया गया और एक चिकित्सा अधिकारी अर्थात् डा. नितिन जग्गी द्वारा तारीख 18 मार्च, 2016 को मरणोत्तर परीक्षा की गई । अन्वेषण अधिकारी द्वारा जेल में अभियुक्त का कथन अभिलिखित किया गया, जिसे गिरफ्तार किया गया था और अभियुक्त ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित अपने कथन में अपनी दोषिता की संस्वीकृति की । अपीलार्थी के विरुद्ध तारीख 8 अप्रैल, 2016 को आयुध अधिनियम की धारा 25/27 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए भी एक अन्य प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई जिसे पुलिस थाना जसराना में 2016 के अपराध मामला सं. 147 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया था । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (रिपोर्टों) के अनुसरण में अन्वेषण किया गया और एक आरोप पत्र फाइल किया गया । मजिस्ट्रेट द्वारा मामले को सेशन न्यायालय के सुपुर्द किया गया और अन्य अपराधों के साथ-साथ भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध और आयुध अधिनियम की धारा 25/27 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आरोप विरचित किए गए ।

6. अभियोजन पक्ष ने अपने पक्षकथन के समर्थन में 12 साक्षियों अर्थात् अभि. सा. 1 गुलाम अली, अभि. सा. 2 इदरिश अली, अभि. सा. 3 निजामुद्दीन, अभि. सा. 4 राजू अली, अभि. सा. 5 मोहम्मद शकील, अभि. सा. 6 शमशेर अली, अभि. सा. 7 चमन बाबू, अभि. सा. 8 डा. नितिन जग्गी, अभि. सा. 9 पुलिस हैड कांस्टेबल क्षेत्रपाल सिंह, अभि. सा. 10 एसओ/अन्वेषण अधिकारी लोकेन्द्रपाल सिंह, अभि. सा. 11 उप निरीक्षक यशपाल सिंह और अभि. सा. 12 कांस्टेबल कलर्क भूपेन्द्र सिंह की परीक्षा की ।

7. अभियोजन पक्ष ने अभिलेख पर दस्तावेजी साक्ष्य अर्थात् लिखित रिपोर्ट प्रदर्श क-1, मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट प्रदर्श क-2, चिक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्रदर्श क-3, साधारण डायरी की प्रतिलिपि प्रदर्श क-4, स्थल योजना प्रदर्श क-5, आयुध की घटनास्थल पर बरामदगी के संबंध में स्थल नक्शा प्रदर्श क-6, मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट प्रदर्श क-7, चालानाश प्रदर्श क-8, फोटोनाश प्रदर्श क-9, आर.आई. को पत्र प्रदर्श क-10, मुख्य चिकित्सा अधिकारी को पत्र प्रदर्श क-11, अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध

भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन आरोप पत्र प्रदर्श क-12, बरामदगी ज्ञापन प्रदर्श क-13, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्रदर्श क-13, स्थल नक्शा प्रदर्श क-14, अभियोजन चलाने के लिए जिला मजिस्ट्रेट से मंजूरी प्रदर्श क-15, साधारण डायरी की प्रतिलिपि प्रदर्श क-16 और अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध आयुध अधिनियम की धारा 25/27 के अधीन आरोप पत्र प्रदर्श क-17 भी प्रस्तुत किए ।

8. इस न्यायालय द्वारा अभिलेख पर के साक्ष्य की सावधानीपूर्वक परीक्षा की गई । अभि. सा. 1 गुलाब अली, जो मामले का इत्तिलाकर्ता था, ने आरंभ में अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन किया । उसने स्पष्ट रूप से कहा कि मृतक को देसी पिस्तौल से गोली मारी गई थी और उसे गोली उसकी गर्दन पर लगी थी और उसके पश्चात् उसे पहुंची क्षतियों के कारण घटनास्थल पर ही उसकी मृत्यु हो गई थी, तथापि, अपनी प्रतिपरीक्षा में इसी साक्षी गुलाब अली ने कथन किया कि उसने अभिकथित घटना को स्वयं अपनी आंखों से नहीं देखा था और उसे मृतक और अपीलार्थी के बीच कोई पुरानी दुश्मनी होने की जानकारी नहीं है । उसने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह भी स्पष्ट किया कि उसने पक्षकारों के बीच दुश्मनी होने के बारे में उन लोगों के अनुश्रृत साक्ष्य के आधार पर कहा था, जो विवाह समारोह में मौजूद थे ।

9. अभि. सा. 2 इदरिश अली अर्थात् मृतक के पुत्र ने, जो घटनास्थल पर मौजूद था, ने आरंभ में अपनी मुख्य परीक्षा में अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन किया, तथापि, बाद में अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान उसने कथन किया कि उसके मृतक पिता और अपीलार्थी के बीच कोई दुश्मनी नहीं थी और उसके पिता इशफाक अली पर तारीख 17 मार्च, 2016 को किसी व्यक्ति द्वारा गोली चलाई गई थी । अभि. सा. 2 भी विचारण के दौरान पक्षद्रोही हो गया था । अभि. सा. 3 निजामुद्दीन, जिसकी पुत्री का विवाह तारीख 17 मार्च, 2016 को अनुष्ठापित किया जा रहा था, ने भी आरंभ में अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन किया, तथापि, अपनी प्रतिपरीक्षा में उसने कथन किया कि अपीलार्थी उसका भांजा है और उसने अपीलार्थी को मृतक पर गोली चलाते हुए नहीं देखा था । अभि. सा. 4 राजू अली ने भी स्पष्ट रूप से यह कथन किया कि अपीलार्थी और मृतक के बीच कोई दुश्मनी नहीं थी और उसे भी अभियोजन पक्ष द्वारा एक पक्षद्रोही साक्षी घोषित किया

गया था । उसने अपनी प्रतिपरीक्षा में स्पष्ट रूप से कथन किया कि उसने पुलिस को अभियुक्त को अपराध में आलिप्त करने वाला कोई कथन नहीं किया था । अभि. सा. 5 मोहम्मद शकील, जो भी अभिकथित रूप से घटना के समय पर मौजूद था, ने अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन नहीं किया और उसे पक्षद्रोही घोषित किया गया था । अभि. सा. 6 शमशेर अली ने भी अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन नहीं किया और उसने स्पष्ट रूप से कथन किया कि उसने अभियुक्त को आलिप्त करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन कोई कथन नहीं किया था । उसे भी पक्षद्रोही घोषित किया गया था । अभि. सा. 7 चमन बाबू, एक अन्य प्रत्यक्षदर्शी साक्षी को भी पक्षद्रोही घोषित किया गया था । अभि. सा. 8 डा. नितिन जग्गी, जिसने मरणोत्तर परीक्षा की थी, ने न्यायालय के समक्ष कथन किया कि मृतक की मृत्यु बंदूक की गोली से पहुंचे घाव के कारण हुई थी और उसने अभियोजन के पक्षकथन का इस सीमा तक समर्थन किया कि उसने मरणोत्तर परीक्षा की थी । उसने अपनी इस राय का समर्थन किया कि मृतक की मृत्यु बंदूक की गोली से मृत्यु-पूर्व पहुंची क्षतियों के परिणामस्वरूप हुए रक्तस्राव के कारण हुई थी । अभि. सा. 9 हैड कांस्टेबल क्षेत्रपाल सिंह, जो एक औपचारिक साक्षी था, ने अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन किया और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को साबित किया जो तारीख 17 मार्च, 2016 को दर्ज की गई थी । अभि. सा. 10, थाना अधिकारी लोकेन्द्र पाल सिंह ने भी अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन किया । अभि. सा. 11 उप निरीक्षक यशपाल सिंह, जो अपीलार्थी को पुलिस अभिरक्षा में प्रतिप्रेषित करने के दौरान अभि. सा. 10 के साथ मौजूद था, ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि अग्न्यायुध और कारतूस की बरामदगी अपीलार्थी के बताने पर की गई थी और उसने अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन किया । अभि. सा. 12 कांस्टेबल भूपेन्द्र सिंह, जो भी प्रश्नगत अग्न्यायुध और कारतूस की बरामदगी का प्रत्यक्षदर्शी साक्षी है, ने भी अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन किया ।

10. अभिलेख पर के साक्ष्य से यह प्रकट होता है कि सभी प्रत्यक्षदर्शी साक्षी पक्षद्रोही हो गए थे और विचारण न्यायालय साक्ष्य के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि अपीलार्थी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में अभिकथित अपराध का दोषी है और तद्नुसार अपीलार्थी को दोषसिद्ध

करने के लिए अग्रसर हुआ । बाद में, उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा पारित किए गए आदेश की अभिपुष्टि की । व्यथित होकर, अपीलार्थी ने वर्तमान याचिका फाइल की । इस न्यायालय ने तारीख 3 दिसंबर, 2021 के आदेश द्वारा मामले में एक सीमित प्रश्न पर सूचना जारी की अर्थात् क्या अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के स्थान पर भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग-1 या भाग-2 के अधीन अपराध का दोषी ठहराया जा सकता है या नहीं ।

11. मामले के निर्विवाद तथ्यों से प्रकट होता है कि घटना तारीख 17 मार्च, 2016 को निजामुद्दीन की पुत्री के विवाह समारोह में घटी थी । उसके पश्चात्, अपीलार्थी से कारतूसों सहित एक आयुध की बरामदगी को विचारण न्यायालय के समक्ष साबित किया गया था । यह भी निर्विवाद तथ्य है कि मृतक की मृत्यु गोली लगने से पहुंची एकल क्षति के कारण हुई थी और मृतक और अपीलार्थी के बीच कोई ज्ञात पूर्व दुश्मनी नहीं थी ।

12. इस न्यायालय के समक्ष विवाद का आधार यह है कि क्या एक विवाह समारोह के दौरान अपीलार्थी द्वारा हर्षोल्लास में गोली चलाने का यह अर्थ लगाया जा सकता है कि वह कार्य इतना आसन्न संकट था कि पूरी अधिसंभाव्यता थी कि वह मृत्यु कारित कर ही देगा या ऐसी शारीरिक क्षति कारित कर ही देगा जिससे मृत्यु कारित होना संभाव्य है ?

13. विवाह समारोहों के दौरान हर्षोल्लास में गोली चलाना दुर्भाग्यपूर्ण है, तो भी हमारे देश में यह प्रचलित परिपाटी है । वर्तमान मामला ऐसी ही अनियंत्रित और अवांछित हर्षोल्लास में की गई गोलाबारी के खतरनाक परिणामों का एक प्रत्यक्ष उदाहरण है । जो भी स्थिति हो, अभिलेख पर ऐसे किसी साक्ष्य के अभाव में जिससे यह सुझाव मिलता हो कि या तो अपीलार्थी ने हर्षोल्लास में की गई गोलाबारी (फायरिंग) एकत्रित जनसमूह को लक्ष्य करके और/या निशाना बनाकर की गई थी ; या मृतक और अपीलार्थी के बीच कोई पूर्व-दुश्मनी थी, हम अभियोजन पक्ष के उस वृत्तांत को स्वीकार करने में असमर्थ हैं जिसे विचारण न्यायालय द्वारा स्वीकार किया गया था और उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई थी ।

14. इस प्रक्रम पर **कुंवर पाल सिंह** बनाम **उत्तराखंड राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय को निर्दिष्ट करना उपयुक्त होगा जिसमें इस न्यायालय ने इसी प्रकार की स्थिति में निम्नलिखित मत व्यक्त किया था :–

> "12. इन परिस्थितियों में, हमारा निष्कर्ष है कि मृतक की हत्या करने के अपीलार्थी के आशय को, यदि कोई था, युक्तियुक्त संदेह के परे साबित नहीं किया गया है और किसी भी स्थिति में अपीलार्थी संदेह के फायदे का हकदार है जो इस मामले में सुस्पष्ट है । अत: भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग 1 के अधीन दोषसिद्धि को कायम रखना संभव नहीं है, जिसके लिए यह अपेक्षित है कि वह कार्य जिसके द्वारा मृत्यु कारित की गई है, मृत्यु या ऐसी शारीरिक क्षति, जिससे मृत्यु होना संभाव्य है, कारित करने के आशय से किया जाना चाहिए । यद्यपि आशय का अभ्यारोपण करना संभव नहीं है किंतु समान रूप से यह अभिनिर्धारित करना संभव नहीं है कि कार्य इस ज्ञान के बिना किया गया था कि इससे मृत्यु कारित हो जाना संभाव्य है । हर कोई जो जिंदा कारतूसों के साथ बंदूक लिए हुए हो और अन्य व्यक्ति भी जानते हैं कि बंदूक से गोली चलाने और वह भी कई सारे लोगों की मौजूदगी में गोली चलाने का कार्य ऐसा है जिससे मृत्यु कारित होना संभाव्य है, वही वास्तव में इस मामले में हुआ था । बंदूकों को जिम्मेदारी और सतर्कता के साथ रखा जाना चाहिए और ये विवाह समारोहों जैसे स्थानों पर प्रयुक्त किए जाने के लिए नहीं हैं ।
>
> *** *** ***
>
> वर्तमान मामले में, हमारा मत है कि अपीलार्थी उस कार्य को करने का दोषी है जिससे मृतक की मृत्यु हुई थी चूंकि यह कार्य इस ज्ञान के साथ किया गया था कि इससे भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग 2 के अर्थान्तर्गत मृत्यु कारित करना संभाव्य है । इन परिस्थितियों में, अपील भागत: मंजूर की जाती है, तथापि, हम

---
[1] (2014) 12 एस. सी. सी. 434.

अपीलार्थी पर विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित और उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टिकृत दंडादेश को कम करके, जुर्माने की रकम में कोई परिवर्तन किए बिना, सात वर्ष करते हैं ।"

15. महत्वपूर्ण रूप से, **कुंवर पाल सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में व्यक्त किए गए मत का **भगवान सिंह** बनाम **उत्तराखंड राज्य**[1] वाले मामले में अनुसरण किया गया था । इस न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया था :–

"15. तथापि, प्रस्तुत मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में ऐसा निष्कर्ष निकालना अनुज्ञात नहीं है । हमने अभियोजन पक्ष के वृत्तांत को इस सीमा तक पहले ही नामंजूर किया है कि अपीलार्थी ने श्रीमती अनीता को लक्ष्य करके गोली (गोलियां) चलाई थी । इसके विपरीत, अभिलेख पर के साक्ष्य से दर्शित होता है कि अपीलार्थी ने बंदूक का निशाना छत की ओर लगाया था और फिर गोली दागी थी । यह निशाना चूकने का दुर्भाग्यपूर्ण मामला था । निस्संदेह, अपीलार्थी इस निष्कर्ष से छुटकारा नहीं पा सकता कि वह ऐसे भीड़ भरे स्थान पर गोलियों से भरी बंदूक लिए हुए था जहां उसके अपने अतिथि विवाह समारोह में सम्मिलित होने के लिए एकत्रित हुए थे । उसने हवा में या आकाश की ओर गोली चलाने जैसा कोई युक्तियुक्त सुरक्षा उपाय नहीं अपनाया था बल्कि उसने पूरा जोखिम उठाया और छत की ओर बंदूक का निशाना साधा और गोली चला दी । भले ही एक ही गोली चलाई गई थी किंतु उससे यह ज्ञान होने की प्रत्याशा थी कि गोलियों से आस-पास के व्यक्तियों को बंदूक की गोली से बहुविध क्षतियां पहुंच सकती हैं । इस प्रकार, अपीलार्थी ऐसे कार्य का दोषी है जिसके संभाव्य परिणाम उस पर अभ्यारोपणीय हैं जिसमें उन व्यक्तियों को घातक क्षतियां पहुंचना भी सम्मिलित है जो आस-पास थे । इस प्रकार, अपीलार्थी द्वारा किया गया अपराध भारतीय दंड संहिता की धारा 299 के अर्थान्तर्गत 'आपराधिक मानववध' की कोटि में आएगा जो यद्यपि धारा 304 भाग 2 के अधीन दंडनीय है ।"

---

[1] (2020) 14 एस. सी. सी. 184.

16. इस तथ्य के बारे में कोई संदेह नहीं हो सकता है कि अपीलार्थी ने एक भीड़ भरे स्थान अर्थात् एक विवाह समारोह में सुरक्षा के लिए युक्तियुक्त उपाय किए बिना गोली चलाई थी जिसके परिणामस्वरूप मृतक की दुर्भाग्यपूर्ण मृत्यु हुई थी ।

17. इस संदर्भ में, मामले की संपूर्ण परिस्थितियों अर्थात् विशेष रूप से इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि – (i) मृतक और अपीलार्थी के बीच कोई पूर्ववर्ती दुश्मनी नहीं थी ; (ii) अभिलेख से अपीलार्थी के ऐसे आशय का निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि उसका आशय मृतक की मृत्यु कारित करना था ; और **कंवर पाल सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित और बाद में **भगवान सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में अनुसरण की गई विधि की स्थिति को ध्यान में रखते हुए हमारा निष्कर्ष है कि अपीलार्थी भारतीय दंड संहिता की धारा 299 के अर्थान्तर्गत अर्थात् भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग 2 के अधीन दंडनीय 'आपराधिक मानववध' कारित करने का दोषी है ।

18. पूर्वोक्त को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थी की भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि और दंडादेश को अपास्त किया जाता है । अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग 2 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाता है । अपीलार्थी ने पहले ही लगभग 8 वर्ष का कारावास भुगत लिया है । मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए, हम पहले ही भुगत ली गई अवधि के समतुल्य दंडादेश अधिनिर्णीत करते हैं । अपीलार्थी पर आयुध अधिनियम की धारा 25 और 27 के अधीन अधिनिर्णीत दोषसिद्धि और दंडादेश अपरिवर्तित बने रहेंगे । परिणामत:, अपीलार्थी को, यदि किसी अन्य मामले में आवश्यकता नहीं है, तुरंत छोड़ दिया जाए ।

19. तदनुसार, यह अपील भागत: मंजूर की जाती है । लंबित आवेदन (आवेदनों), यदि कोई है, का निपटारा हो जाएगा ।

अपील भागत: मंजूर की गई ।

जस.

गतांक से आगे.........

781. दस्तावेजी साक्ष्य से निम्नलिखित बातें प्रकट होती हैं :–

(i) वर्ष 1856-57 के पूर्व भीतरी बरामदे की सीमा के भीतर हिंदुओं द्वारा उपासना अर्पित किए जाने के विरुद्ध कोई अपवर्जन नहीं था;

(ii) वर्ष 1856-57 के अग्निकांड के परिणामस्वरूप दोनों समुदायों के मध्य उपासना के स्थान को विभाजित किए जाने के प्रयोजनार्थ बाड़ को स्थापित किया गया;

(iii) बाड़ को स्थापित किए जाने के तत्काल परिणाम के रूप में हिंदुओं, जिन्होंने बाड़ के अति समीप चबूतरे का निर्माण किया था, द्वारा उपासना के अधिकार का निरंतर रूप से दावा किया जाना था;

(iv) बाड़ की विद्यमानता के बावजूद भीतरी बरामदे से हिंदुओं का अपवर्जन उनके द्वारा किए जाने वाले प्रतिवाद के कारणवश था, जो कम से कम असीमित तो नहीं था;

(v) जहां तक बाहरी बरामदे का संबंध है, यह बरामदा हिंदुओं की उपासना का केंद्र बिंदु बन गया था, चूंकि सीता रसोई को सम्मिलित करते हुए बाहरी बरामदे के भीतर राम चबूतरा और साथ ही अन्य धार्मिक ढांचे स्थित थे । यद्यपि हिंदुओं ने राम चबूतरे, जो बाहरी बरामदे में स्थित था, पर 'गर्भगृह' को चढ़ावा समर्पित किए जाने और बाड़े पर खड़े होकर उपासना को सम्मिलित करते हुए अपनी उपासना की पद्धति को निरंतर जारी रखा, इसलिए इस बाबत कोई संदेह नहीं हो सकता कि यह उनकी आस्था के अग्रसरण में था कि भगवान राम का जन्मस्थान मस्जिद की सीमा के भीतर और केंद्रीय गुंबद के नीचे स्थित था; और

(vi) वर्ष 1934 के दंगे और साथ ही वे घटनाएं, जो तारीख 22/23 दिसंबर, 1949 को घटित हुईं, से यह उपदर्शित होता है कि भीतरी बरामदे पर कब्जा गंभीर प्रतिवाद का मामला था, जिसके कारण बहुधा

दोनों पक्षों के मध्य हिंसा होती थी और मुस्लिमों का भीतरी बरामदे पर अनन्य कब्जा नहीं था । उपरोक्त दस्तावेजी साक्ष्य के आधार यह नहीं कहा जा सकता कि मुस्लिम विवादित स्थल पर संपूर्णता में अपने कब्जे समेत हक को स्थापित कर पाने में समर्थ रहे हैं ।

ण.16 कब्जाधारी हक के बाबत मुस्लिमों का दावा

782. वाद संख्या 4 में वादियों की तरफ से उपस्थित विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल श्री राजीव धवन ने मंदिर की विद्यमानता और उसके विध्वंस के बाबत सुन्नी सेंट्रल वक्फ़ बोर्ड द्वारा हक के संबंध में दृढ़तापूर्वक किए गए दावे पर निवेदन प्रस्तुत किए । डा. धवन द्वारा किए गए निवेदनों का उल्लेख नीचे किया गया है :–

(i) मस्जिद के नीचे पूर्ववर्ती समयावधि से संबंधित मंदिर की विद्यमानता हक के प्रश्न पर असुसंगत है;

(ii) किसी भी स्थिति में इस प्रश्न पर भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण की रिपोर्ट अनिश्चायक है कि क्या –

(क) विवादित स्थल पर एक पूर्ववर्ती ढांचा विद्यमान था, जिसे मस्जिद के निर्माण के प्रयोजनार्थ ढहा दिया गया था; और

(ख) क्या वह ढांचा मंदिर का था या नहीं ।

(iii) उच्च न्यायालय ने भी इस तथ्य को स्वीकार किया है कि भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण की रिपोर्ट में इस बाबत सुस्पष्ट निष्कर्ष प्रस्तुत नहीं किया गया है कि क्या मस्जिद का निर्माण किसी पूर्व विद्यमान ढांचे को ढहाए जाने के द्वारा किया गया था;

(iv) मुस्लिम पक्षों के विरुद्ध इस अभिवाक् का आश्रय लिए जाने में विफल रहने के लिए कोई प्रतिकूल निष्कर्ष नहीं निकाला गया कि क्या मस्जिद के ढांचे के नीचे कोई पूर्ववर्ती ईदगाह या कनाती मस्जिद स्थित थी, चूंकि –

(क) बाबर द्वारा मस्जिद के निर्माण के पूर्व इस प्रकार की कोई जांच संचालित नहीं की जा सकती थी; और

(ख) उच्च न्यायालय ने भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण को अन्वेषण संचालित करने के लिए मात्र इस आधार पर निर्देशित किया था कि क्या वह सामग्री, जो गज़ेटियरों और ऐतिहासिक वृत्तांतों से प्रकट हुई, अनिश्चायक थी ।

डा. धवन ने हक से संबंधित विधि पर आगे निवेदन करते हुए न्यायालय द्वारा स्वीकार किए जाने के प्रयोजनार्थ निम्नलिखित प्रतिपादनाएं प्रस्तुत कीं –

(i) कब्जे से हक की उपधारणा सृजित होती है, विशेष रूप से जब कोई बेहतर हक उपलब्ध न हो या कोई अन्य दावा परिसीमा द्वारा बाधित हो;

(ii) ऐसे मामले, जिनमें किसी व्यक्ति के पास हक के साथ कब्जा भी है, तो वह संपत्ति का उपयोग करने या करने में असमर्थ रहने की स्थिति में भी कब्जे में बना रहेगा;

(iii) कतिपय परिस्थितियों में हक का प्रश्न निर्णीत किए जाने के प्रयोजनार्थ कब्जा पर्याप्त होगा;

(iv) साबित करने का भार उस व्यक्ति पर होता है, जो बिना हक कब्जे का दावा करता है, विशेष रूप से साक्ष्य अधिनियम की धारा 110 के उपबंधों को ध्यान में रखते हुए;

(v) यदि कोई व्यक्ति किसी ऐसी रीति में सहमति प्रदान करता है या कोई ऐसा कार्य करता है, जिससे कब्जे की अनुपस्थिति उपदर्शित होती है और कोई ऐसा कार्य या लोप करता है, तो इसके परिणामस्वरूप साक्ष्य अधिनियम की धारा 115 के अधीन विबंधन लागू होगा;

(vi) कब्जा को कब्जे के आशय द्वारा मान्य ठहराया गया है; और

(vii) प्रार्थना की अनुपस्थिति या कमतर प्रार्थना के परिणामस्वरूप हक की हानि नहीं होगी और हक की हानि केवल प्रतिकूल कब्जे की दशा में और परिसीमा के परे होगी;

सारत:, जैसाकि इस न्यायालय के समक्ष डा. धवन द्वारा अभिकथित किया गया है, हक के दावे का आधार निम्नलिखित शब्दों में सूत्रबद्ध किया जा सकता है :–

(i) बाबरी मस्जिद का निर्माण बाबर के आदेश पर वर्ष 1528 में किया गया था । इस मस्जिद की मरम्मत और देखभाल के लिए नकद अनुदान दिया जाता था, जिसका संदाय बाबर के शासनकाल के दौरान शाही खजाने से किया जाता था और ब्रिटिश प्रशासन ने इस अनुदान को जारी रखा;

(ii) सिखों और हिंदुओं द्वारा अतिचार और अतिक्रमण के अनेक प्रयास किए गए, जिनको मुस्लिमों द्वारा विफल किया गया और राज्य प्राधिकारियों ने भी उनके अधिकारों का संरक्षण यह निर्देशित करते हुए प्रदान किया –

(क) मस्जिद में अनधिकृत रूप से प्रवेश करने वाले हिंदुओं/सिखों; और

(ख) आपत्तिजनक निर्माणों को हटाया जाना;

(iii) वर्ष 1885 तक हिंदुओं का सामान्य रूप से यह विश्वास था कि राम चबूतरा ही भगवान राम का जन्मस्थान है । हिंदुओं के इस विश्वास का उल्लेख वर्ष 1885 के वाद, जिसमें यह निष्कर्ष अभिलिखित किया गया था कि हिंदुओं का चबूतरे पर कोई हक नहीं है और उनके अधिकार अधिक से अधिक निर्देशात्मक प्रकृति के हैं, में भी किया गया;

(iv) हिंदुओं ने विवादित ढांचे को सदैव मस्जिद के रूप में निर्दिष्ट किया और उसी प्रकार से मान्यता प्रदान की;

(v) मुस्लिमों ने निरंतर रूप से विवादित ढांचे में नमाज अदा की, जैसाकि निम्नलिखित से स्पष्ट है –

(क) पेश इमाम के वेतन और बकाए के संदाय के लिए तारीख 25 जुलाई, 1936 का करार;

(ख) 1941 के शिया/सुन्नी वाद में अभिलिखित साक्षियों के परिसाक्ष्य; और

(ग) वाद संख्या 5 के वादियों द्वारा दलीलों के दौरान इस बाबत स्वीकृति कि मस्जिद में तारीख 16 दिसंबर, 1949 तक नमाज अदा की जा रही थी;

(vi) वे अधिकार, जिनका हिंदू दावा करते हैं, शुद्धत: अवैध कार्यों पर आधारित है –

(क) मुस्लिमों को रोकना और उनका उत्पीड़न करना, जब वे नमाज अदा करने के लिए मस्जिद में जाते हैं;

(ख) वर्ष 1934 में मस्जिद का एक भाग नष्ट किया जाना, जिसके कारण मरम्मत कराई गई और हिंदुओं पर जुर्माना अधिरोपित किया गया;

(ग) तारीख 22/23 दिसंबर, 1949 को मस्जिद का अपवित्रीकरण; और

(घ) इस न्यायालय द्वारा यथास्थिति बनाए रखे जाने के आदेशों के अतिक्रमण में तारीख 6 दिसंबर, 1992 को मस्जिद का विध्वंस;

(vii) परिणामस्वरूप विवादित ढांचा सदैव मस्जिद रहा है, जो वर्ष 1528 से तारीख 22/23 दिसंबर, 1949 को उसके अपवित्रीकरण तक मुस्लिमों के कब्जे में रही है ।

783. डा. धवन के निवेदन का यह भाग आवश्यक रूप से कब्जाधारी हक पर आधारित है । स्वतंत्र हक के दावे पर पूर्ववर्ती विश्लेषण में यह पाया गया है कि मुस्लिमों के शासन के दौरान या वर्ष 1857 के पश्चात् साम्राज्यवादी प्रशासन को शक्ति के अंतरण पर कानूनी हक के आधार के रूप में वह भूमि, जिस पर मस्जिद स्थित है, के बाबत विनिर्दिष्ट अनुदान को साबित कर पाने में असमर्थ रहे हैं । दस्तावेजी साक्ष्य, जिसका अवलंब लिया गया, में मस्जिद की मरम्मत और देखभाल के लिए अनुदान से संबंधित राजस्व अभिलेख समाविष्ट हैं । तथापि, डा. धवन ने मुस्लिमों के दावे को स्वीकार किए जाने के लिए इस आधार पर दलील दी कि वे भीतरी और बाहरी बरामदे के कब्जे में थे और उनके

निरंतर रूप से कब्जे की प्रकृति से हक की उपधारणा सृजित होती, जिसे हिंदू विस्थापित नहीं कर सकते ।

784. साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 110 में यह उपबंधित है :–

> "**धारा 110. स्वामित्व के बारे में सबूत का भार** – जबकि प्रश्न यह है कि क्या कोई व्यक्ति ऐसी किसी चीज का स्वामी है, जिस पर उसका कब्जा होना दर्शित किया गया है, तब यह साबित करने का भार कि वह स्वामी नहीं है, उस व्यक्ति पर है, जो प्रतिज्ञात करता है कि वह स्वामी नहीं है ।"

धारा 110 साबित किए जाने के भार से संबंधित है । जिन मामलों में यह उपबंध लागू होता है, उनमें यह साबित करने का भार कि कोई अन्य व्यक्ति, जो कब्जे में है, स्वामी नहीं है, उस व्यक्ति पर होगा, जो उस व्यक्ति के स्वामित्व के विरुद्ध दावा करता है । किंतु जहां तक धारा 110 को आकर्षित किए जाने का प्रश्न है, इस प्रश्न पर विचार किया जाना चाहिए कि क्या कोई व्यक्ति किसी वस्तु का स्वामी है और उस वस्तु के स्वामित्व के बाबत यह दावा किया जाना चाहिए कि वह कब्जे में है । धारा 110 इस सिद्धांत पर आधारित है कि हक कब्जे का अनुसरण करता है । इसी कारणवश यह उपबंध अनुध्यात करता है, जहां किसी व्यक्ति का कब्जे में होना दर्शित किया जाता और यह प्रश्न उद्भूत होता है कि क्या वह व्यक्ति स्वामी है, तो विधि उस व्यक्ति का स्वामित्व नसाबित किए जाने का भार उस व्यक्ति पर डालती है, जो इस बात की पुष्टि करता है कि कब्जाधारी व्यक्ति स्वामी नहीं है ।

785. इस न्यायालय के अनेक विनिश्चयों में धारा 110 का निर्वचन किया गया है । धारा 110 इस सिद्धांत पर आधारित है कि कब्जा अपने आप में हक की उपधारणा सृजित करता है । किंतु यह उपधारणा तब लागू होती है, जब तथ्य इस बात का प्रकटीकरण करते हैं कि यदि किसी भी विवाद करने वाले के पक्ष में कोई हक उद्भूत नहीं होता, तो ऐसे मामले में, जैसाकि ऊपर कहा गया है कब्जा स्वयमेव ही संपूर्ण विवाद को निर्णीत कर देता है । इसके विपरीत यह भी सुस्थापित है कि उस स्थिति में उपधारणा उद्भूत नहीं हो सकती, जब मामले के तथ्य ज्ञात हों ।

नायर सर्विस सोसाइटी लिमिटेड बनाम **के. सी. एलेक्जेंडर**[1] वाले मामले में न्यायमूर्ति एम. हिदायतुल्लाह (जो उस समय विद्वान् मुख्य न्यायमूर्ति थे) ने इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ की तरफ से निर्णय पारित करते हुए यह अभिनिर्धारित किया :–

> "17. ... कब्जे के आधार पर प्रथमदृष्ट्या हक की उपधारणा उद्भूत होती है और कोई भी इस बात से इनकार नहीं कर सकता किंतु यह उपधारणा उन मामलों में शायद ही उद्भूत होगी, जिनमें तथ्य ज्ञात होते हैं । जब तथ्य विवाद के किसी भी पक्ष के पक्ष में किसी हक का प्रकटीकरण नहीं करते, तब केवल कब्जा विवाद का निर्णय कर देता है ।"

एम. एस. जगदंबल बनाम **साऊथ इंडियन एजुकेशन ट्रस्ट**[2] वाले मामले में न्यायमूर्ति के. जगन्नाथ शेट्टी ने इस न्यायालय के दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ की तरफ से निर्णय पारित करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि कब्जा हकधारक के साथ रहता है, जब तक कि प्रतिवादी प्रतिकूल कब्जे द्वारा हक अर्जित नहीं कर लेता :–

> "18. कब्जा हकधारक के साथ रहता है, जब तक कि प्रतिवादी प्रतिकूल कब्जे द्वारा हक अर्जित नहीं कर लेता । उस स्थिति में प्रतिकूल कब्जे की निरंतरता नहीं मानी जाएगी, जिसमें भूमि जलमग्न होती है और उपयोग और उपभोग के बाहर हो जाती है । ऐसे मामलों में वह पक्ष, जिसके पास हक है आन्वयिक कब्जे (परोक्ष कब्जे) का दावा कर सकता है परंतु यह तब जबकि अंतिम बार जलमग्न होने के पूर्व हक का शमन प्रतिकूल कब्जे द्वारा न हो गया हो ।"

चीफ कंज़रवेटर आफ फॉरेस्ट्स, आंध्र प्रदेश सरकार बनाम **कलक्टर**[3] वाले मामले में न्यायमूर्ति सय्यद शाह मोहम्मद कादरी ने इस न्यायालय के दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ की तरफ से निर्णय पारित करते हुए यह अभिनिर्धारित किया :–

---

[1] ए. आई. आर. 1968 एस. सी. 1165.

[2] (1988) सप्ली. एस. सी. सी. 144.

[3] (2003) 3 एस. सी. सी. 472.

"20. ... वह उपधारणा, जिसका खंडन किया जा सकता है, तभी आकर्षित होगी, जब कब्जा प्रथमदृष्ट्या विधिपूर्ण हो और जब मुकदमा लड़ने वाले पक्ष का उस पर हक न हो ।"

आंध्र प्रदेश राज्य बनाम **स्टार बोन मिल एंड फर्टिलाइजर कंपनी**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि धारा 110 का उद्देश्य लोक नीति पर आधारित है । इस धारा का उद्देश्य उन लोगों, जिनका प्रश्नगत भूमि पर हक चाहे जितना भी उत्तम हो, को कानून अपने हाथों में लेकर शांति भंग कारित करने से प्रवारित करना है । इसका उद्देश्य 1963 के विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 6, 1973 की दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 और 1860 की भारतीय दंड संहिता की धारा 154 और 158 के अधीन उपबंधों को रेखांकित करना है । न्यायमूर्ति बी. एस. चौहान ने उपरोक्त विनिश्चय में इस न्यायालय के दो न्यायाधीशों की तरफ से निर्णय पारित करते हुए स्पष्ट किया :–

"21. ... उपरोक्त प्रतिपादना को साक्ष्य अधिनियम की धारा 114 के अधीन पढ़ा जाता है और यह उपधारणा केवल ऐसे मामलों में लागू होती है, जिनमें दोनों पक्षों की तरफ से स्वामित्व का कोई सबूत उपलब्ध न हो या अत्यंत लघु मात्रा में उपलब्ध हो । सिद्धांत 'कब्जा हक का अनुसरण करता है' उन मामलों में लागू होता है, जिनमें वास्तविक कब्जे के सबूत की युक्तिसंगत रूप से प्रत्याशा नहीं की जा सकती, उदाहरण के लिए जलमग्न भूमि के मामलों में या ऐसे मामलों में, जिनमें किसी भी पक्ष के कब्जे के बारे में कुछ भी ज्ञात न हो । कब्जे के परिणामस्वरूप हक की उपधारणा केवल तभी उद्भूत होती है, जब तथ्य इस बात का प्रकटीकरण करते हैं कि किसी भी पक्ष में कोई हक निहित नहीं है । वादी का कब्जा प्रथमदृष्ट्या दोषपूर्ण नहीं है और वादी का हक साबित नहीं किया गया है । इसका निश्चित रूप से यह अर्थ नहीं है कि क्योंकि किसी व्यक्ति का किसी भूमि पर हक है, तो वह आवश्यक रूप से उस भूमि के कब्जे में भी हो । वास्तव में इसका अर्थ यह है कि यदि किसी समयबिंदु पर कोई व्यक्ति उक्त संपत्ति

[1] (2013) 9 एस. सी. सी. 319.

<u>के हक के साथ कब्जे में था, तो विधि इस उपधारणा को अनुज्ञा प्रदान करती है कि ऐसी उपधारणा उसमें निहित हक की निरंतरता में थी ।</u> किसी व्यक्ति को इस बात को साबित करना चाहिए कि वह वादग्रस्त संपत्ति के कब्जे में निरंतर रूप से कब्जे में है, जबकि हक का दावा करने वाले अन्य पक्ष को अतिचार/अतिक्रमण इत्यादि का मामला प्रस्तुत करना चाहिए । ऐसे मामले, जिसमें प्रकटत: हक वादी के पक्ष में है, तो प्रतिवादी पर यह साबित करने का भार होता है कि वह प्रकट रूप से हक के दावे के खंडन और स्वयं के लाभकारी हक को साबित किए जाने के प्रयोजनार्थ उसको उन संतोषजनक साक्ष्यों और परिस्थितियों, जो उसके वृतांत के पक्ष में हो, द्वारा साबित करे । यहां तक कि राजस्व अभिलेख भी हक का दस्तावेज नहीं होता । यह मात्र कब्जे के संबंध में उपधारणा को सृजित करता है । कब्जे की उपधारणा और/या उसकी निरंतरता, आगे और पीछे की अवधि, दोनों को सम्मिलित करते हुए का भी प्रश्न साक्ष्य अधिनियम की धारा 110 के अधीन उठाया जा सकता है ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

धारा 110 के उपयोजन पर निवेदन के भाग का मूल्यांकन करते हुए निर्णायक परीक्षण यह है कि क्या विवादित स्थल 'किसी ऐसे स्थान' का प्रतिनिधित्व करता है, जिसके मुस्लिम 'कब्जे में दर्शित किए गए' हैं । जब तक कि 'कब्जे में दर्शित किए गए' की अपेक्षा पूर्ण नहीं हो जाती, यह उपधारणा उद्भूत नहीं होगी और इस बात को साबित किए जाने के भार का प्रश्न उत्पन्न नहीं होगा कि वाद संख्या 4 के वादी मुकदमे का सामना करने वाले हिंदू पक्षों के स्वामी नहीं हैं ।

मुस्लिमों के कब्जे के दावे का विश्लेषण

786. वाद संख्या 4 में वादियों के पक्षकथन का मूल्यांकन अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य की संपूर्णता के आधार पर इस बाबत किया जाना चाहिए कि क्या कब्जे को अधिसंभाव्यताओं की प्रबलता के आधार पर स्थापित किया गया है । साक्ष्य के आधार पर अनेक महत्वपूर्ण लक्षण प्रकट होते हैं, जिनका उल्लेख नीचे किया जाता है :–

(i) यद्यपि वाद संख्या 4 में वादियों का पक्षकथन यह है कि मस्जिद का निर्माण बाबर द्वारा या उसकी तरफ से वर्ष 1528 में कराया गया था, किंतु वर्ष 1856-57 के मध्य उसके निर्माण की तारीख, उसके कब्जे, उपयोग या उसमें नमाज अदा किए जाने के बाबत कोई वृत्तांत उपलब्ध नहीं है । अत: मुस्लिमों ने 325 वर्षों से अधिक की अवधि, जो इस मस्जिद के निर्माण की तारीख से व्यतीत हो चुकी है, के दौरान अंग्रेजों द्वारा ईंट और उसके ऊपर लोहे की जाली वाली दीवार स्थापित किए जाने तक विवादित स्थल पर कब्जाधारी नियंत्रण के प्रयोग को साबित किए जाने के प्रयोजनार्थ कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है । साथ ही इस अवधि के दौरान मस्जिद में नमाज अदा किए जाने के साक्ष्य से संबंधित भी कोई वृत्तांत उपलब्ध नहीं है;

(ii) इसके विपरीत यात्रावृत्तांतों (मुख्यत: टिफेंथेलर और मॉटगोमरी मार्टिन के यात्रावृत्तांतों) में पुनीतता पर आधारित हिंदुओं की आस्था और विश्वास, दोनों का विस्तारपूर्वक विवरण उपलब्ध है, जिसको वे भगवान राम का जन्मस्थान और जन्मस्थान पर हिंदुओं द्वारा वास्तविक उपासना बताते हैं;

(iii) विलियम फिंच (1608-11) और टिफेंथेलर जिन्होंने वर्ष 1743-1785 के मध्य भारत का भ्रमण किया, में अयोध्या के बारे में वृत्तांत लिखे हैं । इन दोनों ही वृत्तांतों में हिंदुओं द्वारा भगवान राम की उपासना के संदर्भ महत्वपूर्ण हैं । भगवान राम की हिंदुओं द्वारा उपासना का निश्चायक वृत्तांत इसका प्रमाण है । टिफेंथेलर ने सीता रसोई, स्वर्गाद्वार और भगवान राम के जन्म के प्रतीक बेदी या पालना को सम्मिलित करते हुए हिंदू उपासना के स्थानों को विनिर्दिष्ट रूप से निर्दिष्ट किया है । इस वृत्तांत में उन धार्मिक त्यौहारों को निर्दिष्ट किया गया है, जिनके दौरान हिंदू श्रद्धालु बड़ी संख्या में उपासना के लिए आते थे । टिफेंथेलर का वृत्तांत 18वीं शताब्दी में मस्जिद के सामने ईंट और लोहे की जाली वाली दीवार के निर्माण के पूर्व का है । टिफेंथेलर ने एक 'वर्गाकार संदूक को निर्दिष्ट किया है, जो भूमि से पांच इंच ऊपर स्थापित किया गया

था और जिसके किनारे पांच एल्स से अधिक लंबाई और चार एल्स की अधिकतम चौड़ाई के साथ चूने द्वारा निर्मित थे' और जिसको हिंदुओं द्वारा बेदी या पालना कहा जाता था । जैसाकि उन्होंने उल्लेख किया है, यह स्थान वह घर था, जहां भगवान विष्णु का जन्म भगवान राम के रूप में हुआ था । जैसाकि उन्होंने उल्लेख किया है, यही वह स्थान था, जिसके बाबत यह विश्वास किया जाता था कि इस स्थान को या तो औरंगजेब या (अन्य के अनुसार) बाबर द्वारा ठहरा दिया गया था । तथापि, टिफेंथेलर ने उल्लेख किया है कि इस स्थान पर जहां भगवान राम का 'पैतृक निवास' स्थित था, हिंदू तीन बार परिक्रमा करते थे और जमीन पर दंडवत प्रणाम करते थे । टिफेंथेलर का यह वृत्तांत उपासना के एक केंद्र बिंदु अर्थात् भगवान राम का जन्मस्थान, जिसके चारों तरफ उपासना की जाती थी और हिंदू परिक्रमा करते थे और दंडवत प्रणाम करते थे;

(iv) वर्ष 1856-57 में सांप्रदायिक दंगे घटित हुए, जिनके परिणामस्वरूप साम्राज्यवादी प्रशासन ने ईंट और लोहे की जाली वाली दीवार स्थापित कर दी ताकि दोनों समुदायों के परस्पर विरोधी दावों के मध्य शांति का वातावरण स्थापित किया जा सके । इस बाड़ के निर्माण के तुरंत पश्चात् राम चबूतरे, जिसको बाड़ के अत्यंत समीप निर्मित किया गया था और जहां से हिंदू भगवान राम की उपासना करते थे, का विवाद उद्भूत हुआ । हिंदुओं को भीतरी बरामदे से पूर्णरूपेण अपवर्जित किए जाने के पश्चात् चबूतरे को स्थापित किए जाने के समय उसकी अवस्थिति का स्थान और उस चबूतरे पर भगवान राम की उपासना अर्पित किया जाना बाड़ के अतिसमीप रहते हुए निरंतर रूप से उपासना अर्पित किया जाना हिंदुओं द्वारा उपासना की दिशा का सूचक हैं ।

(v) ईंट के ऊपर लोहे की जाली वाली दीवार का निर्माण साम्राज्यवादी प्रशासन व्यवस्था के दौरान किया गया था किंतु इससे हिंदू और मुस्लिमों के मध्य किसी हक का विनिर्धारण नहीं होता और यह 1856-57 में घटित घटनाओं, जिनके परिणामस्वरूप जान

की हानि हुई थी, को ध्यान में रखते हुए मात्र शांति और सुरक्षा बनाए रखने के लिए आशयित एक उपाय था;

(vi) ईंट के ऊपर लोहे की जाली वाली दीवार के स्वरूप में मध्यवर्ती क्षेत्र सृजित किए जाने के बावजूद आत्यंतिक रूप से अपवर्जन सृजित नहीं किया जा सका और ऐसा प्रतीत होता है कि छुटपुट घटनाएं घटित होती रहीं, जैसेकि मस्जिद की सीमा के भीतर निहंग सिख द्वारा झंडा स्थापित किए जाने और हवन और पूजा किए जाने वाली घटना । निहंग सिख को राज्य प्राधिकारियों के मध्यक्षेप द्वारा निष्कासित कर दिया गया था;

(vii) वर्ष 1877 तक पश्चिमी दिशा में केवल एक प्रवेश द्वार स्थित था, जिसके द्वारा भीतरी बरामदे में प्रवेश किया जा सकता था और इसे हनुमत द्वार कहते थे । हिंदू प्रवेश करने के पश्चात् अनेक स्थानों पर उपासना करते थे, जैसेकि राम चबूतरा और सीता रसोई और साथ ही भंडार की भी उपासना करते थे, जो इस बात का द्योतक था कि जहां तक बाहरी बरामदे का संबंध है, हिंदू स्थिरीकृत रूप से कब्जे में थे;

(viii) उत्तरी दिशा में अतिरिक्त द्वार, जिसे सिंह द्वार के नाम से जाना जाता था, का खोला जाना बड़ी संख्या में तीर्थयात्रियों, जो परिसर में उपासना अर्पित करने के लिए प्रवेश करते थे, को सुरक्षित मार्ग सुनिश्चित कराए जाने के उपाय के रूप में आवश्यक था । सिंह द्वार खोले जाने के विरुद्ध ऐतराजों पर विचार किया गया था और उन ऐतराजों को अस्वीकृत कर दिया गया था, जिसके परिणामस्वरूप एक अतिरिक्त द्वार उपलब्ध कराए जाने का तथ्य स्थापित हो जाता है;

(ix) हिंदुओं और मुस्लिमों के मध्य विवाद लगातार जारी रहा, जो दोनों पक्षों द्वारा प्रस्तुत किए गए विवादों की प्रकृति से उपदर्शित होता है;

(x) वर्ष 1934 में एक अन्य सांप्रदायिक दंगा घटित हुआ, जिसके दौरान मस्जिद के गुंबदों को नुकसान पहुंचाया गया । इस

कारणवश अयोध्या के निवासी हिंदुओं पर जुर्माना अधिरोपित किया गया और गुंबदों के पुनर्स्थापन का कार्य साम्राज्यवादी प्रशासन के खर्च पर मुस्लिम ठेकेदार द्‌वारा किया गया । इससे यह उपदर्शित होता है, यद्‌यपि हिंदू बाहरी बरामदे में निरंतर रूप से उपासना अर्पित करते रहते थे, किंतु मुस्लिमों द्‌वारा मस्जिद के भीतरी बरामदे के भीतर वाले ढांचे की स्थिति के बाबत दावे का अधित्यजन नहीं किया । वर्ष 1934 के पश्चात् की एक दस्तावेजी सामग्री यह उपदर्शित किए जाने के प्रयोजनार्थ उपलब्ध है कि पेश ईमाम और मुतवल्ली की नियुक्ति के लिए इंतजाम किए गए थे, जिससे इस धारणा को झुठलाया जा सकता है कि मस्जिद का अधित्यजन कर दिया गया था ।

(xi) वर्ष 1934 के पश्चात् साक्ष्यों के आधार पर यह उपदर्शित होता है कि भीतरी बरामदे में प्रवेश में अवरोधों के परिणामस्वरूप नमाज अदा करने वाले मुस्लिमों की संख्या घट गई थी । तारीख 16 दिसंबर, 1949 को (नमाज के अंतिम शुक्रवार को) मस्जिद का प्रयोग शुक्रवार की नमाज के प्रयोजनार्थ किया जा रहा था । वर्ष 1934 में मस्जिद को कारित नुकसान की पूर्ति से संबंधित परिस्थितियां, पेश ईमाम की सेवाएं उपलब्ध कराए जाने और मुस्लिमों द्‌वारा कम मात्रा में ही सही किंतु नमाज का अदा किया जाता रहना वे परिस्थितियां हैं, जो इस युक्तिसंगत अनुमान की ओर संकेत करती हैं कि मुस्लिमों को भीतरी ढांचे से तारीख 22/23 दिसंबर, 1949 के पूर्व पूर्णतया बेदखल नहीं किया गया था, यद्‌यपि उनकी पहुंच आंतरायिक और अवरोधित थी; और

(xii) तारीख 22/23 दिसंबर, 1949 को भीतरी ढांचे के केंद्रीय गुंबद के नीचे मूर्तियां स्थापित की गई थीं, जिससे मुस्लिमों के अनुसार मस्जिद का अपवित्रीकरण हो गया था । इसके पूर्व अंतिम नमाज तारीख 16 दिसंबर, 1949 को शुक्रवार के दिन अदा की गई थी । शुक्रवार की नमाज तारीख 23 दिसंबर, 1949 को अदा की जानी थी, जो इस दौरान मस्जिद के अपवित्रीकरण के कारण अदा नहीं की जा सकी ।

साक्ष्य अधिनियम की धारा 110 का उपयोजन आकर्षित किए जाने के प्रयोजनार्थ सुन्नी सेंट्रल वक्फ़ बोर्ड के कब्जे के बाबत पक्षकथन का मूल्यांकन दो परिप्रेक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए – प्रथम, जहां तक बाहरी बरामदे का संबंध है, इस बात को अधिसंभाव्यताओं के प्रबलता के आधार पर स्वीकार किया जाना असंभव है कि मुस्लिम कब्जे में थे । इसके विपरीत बाहरी बरामदे में उपासना के हिंदू स्थानों की स्थापना इस प्रकार के किसी भी दावे को स्पष्टत: झुठलाता है । द्वितीयत:, जहां तक भीतरी बरामदे का संबंध है, मुस्लिमों के दावे का मूल्यांकन विभिन्न समयावधियों को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए अर्थात् (i) वर्ष 1856 के पूर्व (ii) वर्ष 1856 और 1934 के मध्य और (iii) वर्ष 1934 के पश्चात्;

787. हिंदुओं द्वारा वर्ष 1856 के पूर्व उपासना अर्पित किए जाने के वृत्तांत के मुकाबले मुस्लिमों द्वारा नमाज अदा किए जाने का वृत्तांत सुस्पष्टत: मौन है । यह स्पष्ट है कि दीवार और लोहे की जाली स्थापित किए जाने के पूर्व भीतरी बरामदे में मुस्लिमों की नमाज में निरंतर रूप से व्यवधान उत्पन्न किए जा रहे थे, जो विभिन्न कार्यवाहियों द्वारा और साथ ही 1934 के दंगों से स्पष्ट हो जाता है । फिर भी वह तरीका, जिसमें दंगों के पश्चात् मस्जिद को पुन: स्थापित किया गया और विशेष रूप से पेश ईमाम की सेवाओं का इंतजाम किया गया, से उपदर्शित होता है कि व्यवधान होते हुए भी तारीख 16 दिसंबर, 1949 तक मस्जिद में किसी न किसी स्वरूप में निरंतर रूप से नमाज अदा की जाती रही । यद्यपि वक्फ़ निरीक्षक ने यह उपदर्शित किया था कि नमाज की प्रक्रिया में व्यवधान उत्पन्न किया जा रहा है और नमाजियों का उत्पीड़न किया जा रहा है, फिर यह दर्शित किए जाने के प्रयोजनार्थ कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं है कि मुस्लिमों द्वारा उनके दावे का अधित्यजन कर दिया गया था । वास्तव में दस्तावेजी और मौखिक साक्ष्यों से यह उपदर्शित होता है कि शुक्रवार की नमाज तारीख 16 दिसंबर, 1949 तक रुक-रुक कर अदा की जाती रही । यद्यपि मुस्लिमों ने भीतरी बरामदे पर अपने दावे का अधित्यजन नहीं किया था, फिर भी जैसाकि साक्ष्य से उपदर्शित होता है, यह होड़ और विवाद का मामला था ।

त. हक का विश्लेषण

त.1 वाद संख्या 4 और 5 में साक्ष्य का क्रमबंधन –

788. वाद संख्या 4 और वाद संख्या 5 में हक के दावे पर साक्ष्य के एक साथ क्रमबंधन किए जाने का प्रक्रम अब आ चुका है ताकि प्रदान किए जाने योग्य अनुतोष का अंतिम रूप से विनिर्धारण किए जाने का मार्ग प्रशस्त हो सके ।

I. भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण की रिपोर्ट निम्नलिखित स्थिति को उपदर्शित करती है :–

(i) उत्खनन के क्षेत्र में पुरातत्विक खोजें क्रमिक सभ्यता, जो उत्तरी काले पॉलिश वाले बर्तनों के काल से आरंभ होकर द्वितीय शताब्दी ईसा पूर्व काल तक अनुमार्गणीय हैं, के महत्वपूर्ण चिह्नों को प्रकट करती हैं;

(ii) भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण द्वारा उत्खनन में भूमि के नीचे दबी हुई संरचना, जो दसवीं शताब्दी की है, की विद्यमानता प्रकट होती है । इस संरचना के विशाल आयाम हैं, जो इस तथ्य से स्पष्ट हैं कि इस संरचना में 85 स्तंभ आधार थे, जो पांच स्तंभ आधारों प्रत्येक की 17 कतारों में समाविष्ट थे;

(iii) भूमि के नीचे दबी हुई संरचना की प्रकृति पर पुरातात्विक खोजें अधिसंभाव्यताओं के प्रबलता के आधार पर उपदर्शित करती है कि यह हिंदू धर्म से संबंधित धार्मिक वस्तुएं हैं, जो 12वीं शताब्दी ए. डी. की हैं ।

(iv) विवादित मस्जिद का निर्माण पूर्व विद्यमान ढांचे की बुनियाद के ऊपर किया गया था । मस्जिद का निर्माण इस प्रकार से किया गया है ताकि पूर्व विद्यमान ढांचे की दीवारों का उपयोग करते हुए स्वतंत्र बुनियाद का निर्माण किया जा सके; और

(v) उत्खनन स्थल पर उत्खनन की सतहों से मकारा परनाला के साथ गोलाकार पूजा स्थल की विद्यमानता का भी प्रकटीकरण हुआ है, जो आठवीं से दसवीं शताब्दी पूर्व हिंदू उपासना का सूचक है ।

सुबूत के स्तरमान के आधार पर युक्तिसंगत अनुमान, जो सिविल विचारणों पर लागू होता है, लगाया जा सकता है, जैसेकि :–

(i) मस्जिद की बुनियाद विशाल पूर्व विद्यमान ढांचे की दीवारों पर टिकी हुई है;

(ii) पूर्व विद्यमान ढांचा बारहवीं शताब्दी का है; और

(iii) भूमि के नीचे दबा हुआ ढांचा, जिसने अपनी स्थापत्य विशेषताओं और पुरातात्विक लक्षणों और उत्खनन में प्राप्त वस्तुओं के साथ मस्जिद की बुनियाद उपलब्ध कराई, इस क्षेत्र में उस युग से संबंधित हिंदू धार्मिक ढांचे का संकेत देते हैं ।

II. हिंदू धार्मिक अवशेषों वाले भूमि में दबे हुए ढांचे के बाबत भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण की रिपोर्ट में निकाले गए निष्कर्ष बारहवीं शताब्दी ए. डी. के मंदिर के वास्तुविद् के प्रतीक हैं और इनको इसी संदर्भ में निम्नलिखित सावधानियों के साथ पढ़ा जाना चाहिए :–

(i) यद्यपि भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण की रिपोर्ट में पूर्व विद्यमान ढांचे के अवशेषों की विद्यमानता पाई गई, किंतु इस रिपोर्ट में निम्नलिखित बातें समाविष्ट नहीं हैं –

(क) पूर्व विद्यमान ढांचे के विध्वंस से संबंधित कारण ; और

(ख) क्या पूर्ववर्ती संरचना को मस्जिद के निर्माण के प्रयोजनार्थ ढहा दिया गया था ।

(ii) चूंकि भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण की रिपोर्ट के अनुसार भूमि के नीचे दबा हुआ ढांचा बारहवीं शताब्दी का है इसलिए भूमि के नीचे दबे हुए ढांचे और मस्जिद के निर्माण की तारीखों के मध्य चार शताब्दियों का समयांतर है । इस तथ्य के स्पष्टीकरण के प्रयोजनार्थ कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं है कि उपरोक्त मध्यवर्ती अवधि के दौरान क्या घटनाएं घटीं;

(iii) भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण की रिपोर्ट के आधार पर यह निष्कर्ष नहीं निकलता कि पूर्व विद्यमान ढांचे के अवशेषों का

प्रयोग मस्जिद के निर्माण के प्रयोजनार्थ किया गया था (इस बात के अतिरिक्त कि मस्जिद का निर्माण पूर्ववर्ती ढांचे की बुनियाद पर किया गया था); और

(iv) वे स्तंभ, जिनका प्रयोग मस्जिद के निर्माण में किया गया था, काले कसौटी पत्थर के स्तंभ थे । भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण को यह दर्शित किए जाने के प्रयोजनार्थ कोई साक्ष्य प्राप्त नहीं हुआ कि ये कसौटी के स्तंभ भूमि के नीचे दबे हुए स्तंभ आधारों, जिन्हें मस्जिद के नीचे वाले ढांचे के उत्खनन के दौरान प्राप्त किया गया, से संबंधित हैं ।

III. विधि की दृष्टि में हक के बाबत निष्कर्ष पुरातात्विक निष्कर्षों, जिन्हें भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण द्वारा निकाला गया, पर आधारित नहीं हो सकता । अभिलेख पर बारहवीं और सोलहवीं शताब्दी के मध्य मानवीय इतिहास के संबंध में कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं है । इस पुरातनता के मामले में अभिलेख पर कोई भी साक्ष्य उपलब्ध नहीं है (i) भूमि के नीचे दबे हुए ढांचे के ध्वंस का कारण और (ii) क्या पूर्ववर्ती ढांचे को मस्जिद के निर्माण के प्रयोजनार्थ ध्वस्त कर दिया गया था । भूमि के हक का निर्णय स्थिरीकृत विधिक सिद्धांतों और साक्ष्यिक स्तरमानों, जो सिविल विचारण को शासित करते हैं, को लागू किए जाने के आधार पर किया जाना चाहिए ।

IV. यात्रियों के ऐतिहासिक अभिलेखों (मुख्यत: अठारहवीं शताब्दी में टिफेंथेलर और मॉन्टगोमरी मार्टिन के वृत्तांत) यह उपदर्शित करते हैं :-

(i) हिंदुओं की आस्था और विश्वास की विद्यमानता कि विवादित स्थल भगवान राम का जन्मस्थान है;

(ii) सीता रसोई, स्वर्गद्वार और बेदी (पालना) जो विवादित स्थल पर और उसके आसपास भगवान राम के जन्म को प्रतीकत्व प्रदान करते हैं, को सम्मिलित करते हुए हिंदुओं द्वारा उपासना अर्पित किए जाने के प्रयोजनार्थ पहचाने जाने योग्य स्थान;

(iii) विवादित स्थल पर, परिक्रमा को सम्मिलित करते हुए तीर्थयात्रियों द्वारा उपासना की प्रथा का प्रचलन और धार्मिक त्योहारों के अवसरों पर श्रद्धालुओं के विशाल जनसमूहों की उपस्थिति; और

(iv) अंग्रेजों द्वारा अवध को सम्मिलित किए जाने और वर्ष 1857 में ईंट और लोहे की जाली वाली दीवार के निर्माण के पूर्व श्रद्धालुओं की ऐतिहासिक उपस्थिति और विवादित स्थल पर उपासना की विद्यमानता ।

यात्रियों के वृत्तांतों को उपरोक्त मताभिव्यक्तियों के परे सावधानीपूर्वक पढ़ा जाना चाहिए । उनकी व्यक्तिगत मताभिव्यक्तियों की छानबीन अनुश्रुत-किंवदंतियों और शिक्षा के मामले में सावधानीपूर्वक की जानी चाहिए । हक के मामले पर विचार किए जाने के प्रयोजनार्थ उनके वृत्तांतों पर सार्वजनिक इतिहास के मामलों में विचार किया जाना साक्ष्य से भिन्न मामला होता है । हक का न्यायनिर्णयन साक्ष्य के आधार पर इस प्रकार से किया जाना चाहिए कि वह विधि के न्यायालय, जिसने प्रतिपरीक्षा की सूक्ष्म जांच की है, के समक्ष खरे उतरने की दृष्टि से मान्य ठहराए जाने योग्य हो । इसी प्रकार से गज़ेटियरों की अंतर्वस्तु को साक्ष्य, जो अभिलेख के आधार पर उद्भूत होता है, की सामग्री का अधिकाधिक पुष्टिकरण उपलब्ध कराना चाहिए । न्यायालय को यात्री के वृत्तांत से उन परिस्थितियों, जिनको यात्री ने न तो देखा और न ही उनकी समीक्षा की, के आधार पर नकारात्मक अनुमान निकालते हुए सावधान रहना चाहिए । हक को आस्था और विश्वास के आधार पर स्थापित नहीं किया जा सकता । आस्था और विश्वास स्थल पर उपासना के स्वरूपों, जिनके आधार पर कब्जे के दावे किए गए हैं, के प्रति सूचक होते हैं । इस न्यायालय ने ऐसी स्थिति, जिसे राज्य ने अपने लिखित कथन में अभिव्यक्त रूप से अभिकथित किया है कि उसका भूमि में किसी हित के बाबत कोई दावा नहीं है, पर कब्जाधारी हक के परस्पर विरोधी दावों का मूल्यांकन किया है ।

V. साक्ष्य के आधार पर उपदर्शित होता है कि हिंदू विवादित स्थल पर मस्जिद की विद्यमानता के बावजूद उस स्थल की उपासना इस विश्वास के साथ करते रहे हैं कि वह स्थान भगवान राम का जन्मस्थान है और उनके द्वारा उपासना को निर्बंधित नहीं किया । ऐसे स्थान पर इस्लामिक ढांचे की विद्यमानता, जिसे हिंदुओं द्वारा पवित्र स्थान माना जाता है, उनको वर्ष 1856-57 की घटनाओं के पूर्व उस विवादित स्थल

पर ढांचे के परिसर के भीतर उनकी उपासना को जारी रखे जाने से नहीं रोकता था । किसी इस्लामिक मस्जिद का भौतिक ढांचा हिंदुओं की इस बाबत आस्था और विश्वास को नहीं डिगा सका कि विवादित स्थल पर भगवान राम का जन्म हुआ था । इसके विपरीत विद्वान् काउंसेल ने निष्पक्षतापूर्वक अभिकथित किया कि सुन्नी सेंट्रल वक्फ़ बोर्ड ने मुस्लिम निवासियों द्वारा नमाज अदा किए जाने के तथ्य को साबित किए जाने के प्रयोजनार्थ जिस साक्ष्य का अवलंब लिया है, वह काल वर्ष 1856-57 के आसपास आरंभ होता है;

VI. अंग्रेजों द्वारा वर्ष 1857 में मस्जिद के विवादित ढांचे के चारों तरफ बाड़ की स्थापना हिंदुओं द्वारा मस्जिद परिसर के भीतर उपासना के दावे पर होड़ और विवाद की पृष्ठभूमि में की गई थी । इस होड़ और विवाद ने दंगों की पृष्ठभूमि तैयार की, जो हिंदुओं और मुस्लिमों के मध्य 1856-57 में घटित हुआ । साम्राज्यवादी प्रशासन द्वारा ईंट की दीवार के ऊपर लोहे की जाली का निर्माण उपासना के विवादास्पद स्थान के संबंध में दोनों समुदायों के मध्य शांति को सुनिश्चित किए जाने के लिए आशयित था । ईंट की दीवार पर जाली के निर्माण के आधार पर न तो विवादित स्थल, जो एक संयुक्त संपत्ति थी, का उपविभाजन हुआ और न ही इसके आधार पर साम्राज्यवादी प्रशासन द्वारा हक का अभिनिर्धारण किया गया;

VII. रामचबूतरे का निर्माण बाड़ स्थापित किए जाने के समय की निकटतम समयावधि में वर्ष 1857 या उसके आसपास किया गया था । राम चबूतरा बाड़ के निकटतम स्थित था । वास्तव में राम चबूतरे की स्थापना भीतरी गुंबद से 100 फीट या लगभग इतनी ही दूरी पर की गई थी और इसको हिंदुओं द्वारा भगवान राम के जन्मस्थान पर उपासना के अधिकार की अभिव्यक्ति या उनके दावे के ऐतिहासिक संदर्भ में देखा जाना चाहिए । यहां तक कि हिंदू ने अंग्रेजों द्वारा विभाजनकारी दीवार के निर्माण के पश्चात् भी केंद्रीय गुंबद के नीचे अपने प्रार्थना के अधिकार के दावे पर अड़े रहे । यह साक्षिक अभिलेख से प्रकट होता है, जो लोगों द्वारा मूर्तियां स्थापित किए जाने और परिसर के भीतरी बरामदे के बाहर और भीतर, दोनों स्थानों पर मूर्तियां स्थापित किए जाने और पूजा का

निर्वहन किए जाने के प्रयास को उपदर्शित करता है । तीर्थयात्री राम चबूतरा स्थापित किए जाने के पश्चात् भी लोहे की बाड़, जिसने भीतरी और बाहरी बरामदों को विभाजित कर दिया था, के निकट खड़े होकर श्रद्धा सुमन अर्पित करते थे और चढ़ावा चढ़ाते थे, जिसके बाबत उनका यह विश्वास था कि तीन गुंबदों वाले ढांचे के भीतर 'गर्भगृह' स्थित है । इसके विपरीत मुस्लिमों द्वारा यह उपदर्शित किए जाने के प्रयोजनार्थ कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया कि मस्जिद के विवादित ढांचे पर उनका कब्जा अनन्य था और हिंदुओं के मुकाबले उनके द्वारा नमाज अदा किया जाना अपवर्जनात्मक था ।

VIII. हिंदू राम चबूतरे, सीता रसोई और भंडार की स्थापना को सम्मिलित करते हुए अन्य धार्मिक स्थानों पर उपासना करते थे, जिससे बाहरी बरामदे पर उनका स्वतंत्र, अनन्य और अबाधित कब्जा उपदर्शित होता है । मुस्लिम बाहरी बरामदे के कब्जे में नहीं रहे । अंग्रेजों द्वारा वर्ष 1858 में दीवार के निर्माण और भीतरी गुंबद के अतिसमीप राम चबूतरा स्थापित किए जाने के बावजूद हिंदू तीन गुंबदों वाले ढांचे के भीतर अपने उपासना के अधिकार के दावे पर अड़े रहे;

IX. प्रशासन द्वारा वर्ष 1877 में या उसके आसपास हिंदुओं को उत्तरी दिशा में बाहरी बरामदे में विद्यमान पूर्वी द्वार (हनुमत द्वार) के अतिरिक्त एक अन्य द्वार (सिंह द्वार) खोले जाने की अनुज्ञा प्रदान की गई थी । उपायुक्त ने इस दीवार में अन्य द्वार खोले जाने के विरुद्ध फाइल की गई शिकायत पर विचार करने से इनकार कर दिया था । इसके विरुद्ध फाइल की गई अपील को आयुक्त द्वारा यह अभिनिर्धारित करते हुए खारिज कर दिया गया था कि द्वार का खोला जाना जनहित में है । अंग्रेज प्रशासन द्वारा अतिरिक्त द्वार खोले जाने की अनुज्ञा प्रदान किए जाने से हिंदू श्रद्धालुओं के बड़े जनसमूह की उपस्थिति को मान्यता उपदर्शित होती है, जो विवादित स्थल पर शांति और सुरक्षा के हित में अतिरिक्त द्वार को आवश्यक ठहराती है;

X. हिंदू और मुस्लिम, दोनों के साक्षियों द्वारा दिए गए परिसाक्ष्यों से यह उपदर्शित होता है कि धार्मिक अवसरों और त्योहारों, जैसेकि रामनवमी, सावन झूला, कार्तिक पूर्णिमा, परिक्रमा मेला और राम विवाह

के अवसरों पर हिंदू श्रद्धालुओं के विशाल जनसमूह विवादित परिसर में दर्शनों के लिए आते थे । हिंदू श्रद्धालुओं के मौखिक परिसाक्ष्यों के आधार पर उनके द्वारा ईंट की दीवार पर लोहे की जाली वाली संरचना वाली बाड़ के निकट खड़े होकर सीता रसोई, राम चबूतरा और 'गर्भगृह' के प्रति उपासना और प्रार्थना की पद्धति स्थापित होती है;

XI. हिंदू साक्षियों ने उपदर्शित किया है कि वे मस्जिद के भीतर स्थापित कसौटी पत्थर के स्तंभों को उपासना अर्पित करते थे । मुस्लिम साक्षियों ने मस्जिद के भीतर और बाहर हिंदू धार्मिक महत्व के प्रतीकों की उपस्थिति को स्वीकार किया है । इन प्रतिकों में, वाराह जय-विजय और तीन गुंबदों वाले ढांचे के बाहर गरुण का चित्रण सम्मिलित है । ये प्रतीक न केवल आस्था और विश्वास की विद्यमानता के सूचक हैं बल्कि सदियों से वास्तविक रूप में उपासना के भी सूचक हैं;

XII. सोलहवीं शताब्दी में मस्जिद के ढांचे पर 'अल्लाह' के उत्कीर्णन के साथ उसके निर्माण की विद्यमानता से इनकार नहीं किया जा सकता । वर्ष 1856-57 की सांप्रदायिक घटना की उत्पत्ति दोनों समुदायों के मध्य उपासना के बिंदु पर होड़ से संबंधित है । वर्ष 1856-57 में बाड़ की स्थापना धार्मिक उपासना के प्रयोजनार्थ उपासना स्थल को विभाजित किए जाने का प्रयास था – ताकि मुस्लिमों द्वारा बाड़ के भीतर रहते हुए मस्जिद के गुंबदों वाले ढांचे के भीतर नमाज अदा की जा सके और बाड़ के बाहर हिंदुओं द्वारा उपासना अर्पित की जा सके । सिख फकीर द्वारा मस्जिद में प्रवेश करने और पूजा के लिए धार्मिक प्रतीकों को स्थापित किए जाने के प्रयासों का मुस्लिमों द्वारा विरोध किया गया था, जिसके परिणामस्वरूप अधिभोगी को प्रशासन द्वारा निष्कासित कर दिया गया था;

XIII. वर्ष 1857 में ईंट के ऊपर लोहे की जाली वाली दीवार के निर्माण के पश्चात् अभिलेख पर साक्ष्य उपलब्ध है, जिसके आधार पर हिंदुओं का अनन्य और अबाधित कब्जा और बाहरी बरामदे में उपासना का अर्पण दर्शित होता है । तीन गुंबदों वाले ढांचे में प्रवेश केवल बाहरी बरामदे की पूर्वी और उत्तरी दिशाओं में स्थित दो द्वारों, जो हिंदू

श्रद्धालुओं के नियंत्रण में थे, में से किसी द्वार के द्वारा प्रवेश की ईप्सा किए जाने के द्वारा संभव था;

XIV. अधिसंभाव्यताओं की प्रबलता के आधार पर यह साबित किए जाने के प्रयोजनार्थ कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं है कि मुस्लिमों ने मस्जिद का अधित्यजन कर दिया था या वर्ष 1958 के पश्चात् भीतरी बरामदे में उनके कब्जे के बिंदु पर होड़ के बावजूद नमाज अदा करना बंद कर दिया था । मौखिक साक्ष्य के आधार पर नमाज की निरंतरता उपदर्शित होती है;

XV. भीतरी बरामदे के कब्जे के बाबत होड़ वर्ष 1934 में सांप्रदायिक संघर्ष का केंद्र बिंदु बन गया था और इसके दौरान मस्जिद के गुंबदों और ढांचे को नुकसान पहुंचा था ।1934 के दंगों के पश्चात् मस्जिद की मरम्म्त और नवीकरण का कार्य अंग्रेज प्रशासन के खर्च पर मुस्लिम ठेकेदार के अभिकरण द्वारा कराया गया था, जो इस तथ्य का सूचक है कि दोनों समुदायों के मध्य विवाद के बावजूद मस्जिद का ढांचा विद्यमान बना रहा, बिल्कुल उसी प्रकार से जैसे मुस्लिमों का नमाज अदा करने के अधिकार का दावा । ऐसा प्रतीत होता है कि मुस्लिमों ने वर्ष 1934 के पश्चात् तक मस्जिद में नमाज अदा की किंतु जब 22/23 दिसंबर, 1949 की घटना घटित हुई तो केवल शुक्रवार की नमाज अदा की जा रही थी । वक्फ़ निरीक्षक की दिसंबर, 1949 की रिपोर्ट से उपदर्शित होता है कि साधू और बैरागी, जो बाहरी बरामदे में उपासना करते थे और वहीं निवास भी करते थे, मुसलमानों को बरामदे, जो उनके नियंत्रण में था, से मस्जिद के भीतर नमाज के लिए गुजरने में व्यवधान उत्पन्न किया करते थे । इसलिए, वक्फ़ निरीक्षक ने उल्लेख किया है कि मस्जिद के भीतर नमाज केवल शुक्रवार को पुलिस की सहायता से संभव थी;

XVI. 22/23 दिसंबर, 1949 के पूर्व की घटनाएं बाहरी बरामदे में बैरागियों की विशाल उपस्थिति को उपदर्शित करती हैं और पुलिस अधीक्षक की इस आशंका की अभिव्यक्ति को भी उपदर्शित करती हैं कि हिंदू मस्जिद के परिसर के भीतर मूर्तियों को स्थापित किए जाने के प्रयोजनार्थ बलपूर्वक प्रवेश कर सकते हैं । उप आयुक्त और जिला

मजिस्ट्रेट (श्री के. के. नय्यर) को लिखित सूचनाएं दिए जाने के बावजूद उन्होंने कोई ध्यान नहीं दिया और पुलिस अधीक्षक की मस्जिद की सुरक्षा की आशंका को निराधार कहते हुए अस्वीकृत कर दिया । आशंका उस घटना के कारण उत्पन्न हुई, जो तारीख 22/23 दिसंबर, 1949 की मध्यवर्ती रात्रि में घटित हुई थी, जब 50 से 60 लोगों के एक समूह ने मस्जिद के मंच पर केंद्रीय गुंबद के नीचे मूर्तियों को स्थापित कर दिया था । इस कारणवश मस्जिद का अपवित्रीकरण हुआ और विधि की सम्यक् प्रक्रिया के अन्यथा तरीकों द्वारा मुस्लिमों की बेदखली हो गई । तत्पश्चात् भीतरी बरामदे को तारीख 29 दिसंबर, 1949 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के अधीन कार्यवाही द्वारा कुर्क कर लिया गया और रिसीवर ने कब्जा ले लिया;

XVII. तारीख 6 दिसंबर, 1992 को मस्जिद का ढांचा ढहा दिया गया और मस्जिद को नष्ट कर दिया गया । यह विध्वंस इस न्यायालय द्वारा यथास्थिति बनाए रखे जाने के आदेश और इस न्यायालय को दिए गए आश्वासन के भंग में घटित हुआ । मस्जिद का विध्वंस और इस्लामिक ढांचे का विलोपन विधि के नियम का भीषण अतिक्रमण था;

XVIII. परिणामस्वरूप साक्ष्यिक अभिलेखों के आधार पर प्रकट होता है :–

(i) विवादित ढांचा एक समग्र ढांचा है । वर्ष 1856-57 में स्थापित की गई बाड़ में न तो भूमि का उप-विभाजन किया और न ही हक का विनिर्धारण किया;

(ii) सुन्नी सेंट्रल वक्फ़ बोर्ड ने उपयोगकर्ता द्वारा समर्पण के अपने पक्षकथन को स्थापित नहीं किया है;

(iii) सुन्नी सेंट्रल वक्फ़ बोर्ड द्वारा प्रतिकूल कब्जे के आनुकल्पिक अभिवाक् को स्थापित नहीं किया गया है और वे प्रतिकूल कब्जे की अपेक्षाओं को संतुष्ट कर पाने में विफल रही;

(iv) हिंदू बाहरी बरामदे के अनन्य और अबाधित कब्जे में रहे हैं, जहां उन्होंने निरंतर रूप से उपासना की है;

(v) बाहरी बरामदा हिंदुओं और मुस्लिमों के मध्य परस्पर विरोधी दावों के साथ विवादास्पद स्थल रहा है;

(vi) तारीख 6 दिसंबर, 1992 तक मस्जिद के ढांचे की विद्यमान के बाबत कोई विवाद नहीं है । इस निवेदन को अस्वीकार किया जाता है कि यह मस्जिद इस्लामिक सिद्धांतों के अनुसार नहीं थी । साक्ष्यों के आधार पर यह उपदर्शित होता है कि मुस्लिमों द्वारा मस्जिद का अधित्यजन नहीं किया गया था । दिसंबर, 1949 तक नमाज शुक्रवार को अदा की जाती थी और अंतिम नमाज तारीख 16 दिसंबर, 1949 को अदा की गई थी;

(vii) वर्ष 1934 में मस्जिद को कारित नुकसान और उसका अपवित्रीकरण और उसके पश्चात् मुस्लिमों की बेदखली और तारीख 6 दिसंबर, 1992 को उसका अंतिम विध्वंस विधि के नियम का गंभीर अतिक्रमण गठित करते हैं;

(viii) न्याय समता और सद्विवेक के सिद्धांतों के संगत वाद संख्या 4 और 5, दोनों को डिक्री किया जाता है और अनुतोष को इस प्रकार से अभिलिखित किया जाता है, जो न्याय, बंधुत्व, मानवीय गरिमा और धार्मिक विश्वास की समानता के संवैधानिक मूल्यों को संरक्षण प्रदान करने वाली हो ।

IXX. हिंदुओं ने बाहरी बरामदे में राम चबूतरा और धार्मिक महत्व की अन्य वस्तुओं की निरंतर और अबाधित उपासना के बाबत कब्जाधारी हक का स्पष्ट मामला साबित किया है । हिंदुओं और मुस्लिमों, दोनों ने भीतरी बरामदे में तीन गुंबदों वाले ढांचे के भीतर उपासना अर्पित करने के परस्पर विरोधी दावों में एक दूसरे का विरोध किया है । हिंदुओं द्वारा भीतरी बरामदे में उपासना अर्पित करने के उनके हक के दावे का प्रतिवाद मुस्लिमों द्वारा किया गया है ।

उच्च न्यायालय द्वारा विभाजन के लिए पारित डिक्री की वैधता

789. उच्च न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर पहुंचते हुए कि चूंकि हिंदू और मुस्लिम संयुक्त रूप से कब्जे में थे, इसलिए विवादित स्थल को तीन भागों में मुस्लिम, हिंदू और निर्मोही अखाड़ा में प्रत्येक को एक

तिहाई भाग प्रदान किए जाने के लिए निर्देशित किया । न्यायमूर्ति एस. यू. खान ने अभिनिर्धारित किया कि हक कब्जे का अनुसरण करता है और साक्ष्य अधिनियम की धारा 110 के उपबंधों का अवलंब लेते हुए यह निष्कर्ष निकाला कि विवादित स्थल तीनों पक्षों के मध्य समान रूप से विभाजित कर दिया जाए । न्यायमूर्ति सुधीर अग्रवाल ने अभिनिर्धारित किया कि विवादित ढांचे के केंद्रीय गुंबद के नीचे वाले क्षेत्र के बाबत हिंदुओं का यह विश्वास है कि यह भगवान राम का जन्मस्थान है और इसी विश्वास के आधार पर इस स्थान की उपासना की जाती है । भूमि के इस भाग के बाबत उन्होंने यह अभिनिर्धारित किया कि यह स्थान देवता का है, जिसे 'राम जन्मस्थान' कहा जाता है, जिसका हिंदुओं के लिए विनिर्दिष्ट रूप से महत्व है । जहां तक भीतरी बरामदे के भीतर अन्य भूमि का संबंध है, न्यायमूर्ति अग्रवाल ने इस बात का उल्लेख करते हुए कि वाद संख्या 5 में ईप्सित अनुतोष 'इस प्रकार से शब्दांकित किया गया है, जिससे यह उपदर्शित होता है कि इस अनुतोष को न्यायालय से चाहा नहीं गया है बल्कि न्यायालय के विवेकाधिकार पर छोड़ दिया गया है, यदि वह इसको प्रदान करना उचित समझे' अभिनिर्धारित किया कि इस भूमि का उपयोग दोनों समुदायों के सदस्यों द्वारा निरंतर रूप से प्रार्थना और उपासना के प्रयोजनार्थ किया जाता रहा है । न्यायमूर्ति अग्रवाल ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि दोनों पक्षों के साथ संपूर्ण न्याय किए जाने और मुकदमेबाजी की गुणजता से बचने के लिए न्यायालय को यह अधिकार है कि वह सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7, नियम 7 के अधीन अनुतोष को आवश्यकतानुसार परिवर्तित करते हुए प्रदान कर सके । अत: न्यायमूर्ति अग्रवाल प्राथमिक डिक्री के निबंधनों के अनुसार विवादित स्थल को तीन भागों में विभाजित किए जाने के प्रयोजनार्थ पारित आदेश में सम्मिलित हुए । न्यायमूर्ति डी. बी. शर्मा ने वाद संख्या 5 को संपूर्णता में डिक्री कर दिया ।

790. वाद संख्या 5 में वादियों की तरफ से उपस्थित विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल श्री के. पारासरन ने दलील दी कि उच्च न्यायालय ने 'पूर्ण न्याय किए जाने के प्रयोजनार्थ' अनुतोष को परिवर्तित किए जाने का प्रयास करते हुए ऐसी अधिकारिता को ग्रहण कर लिया, जो उनमें

निहित नहीं थी; और यह दलील दी कि यह शक्ति संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन इस न्यायालय की अनन्य अधिकारिता के अंतर्गत है ।

791. आरंभिकत: उच्च न्यायालय द्‌वारा पारित डिक्री की शुद्‌धता का मूल्यांकन करते हुए इस बात का उल्लेख किया जाना चाहिए कि उच्च न्यायालय इस वाद में विभाजन पर विचार करने से विबद्‌ध नहीं था । विभाजन के लिए फाइल किए गए वाद में ऐसी विधि घिसीपिटी विधि होगी, जिसमें प्रत्येक पक्ष वादी और प्रतिवादी दोनों हो । उच्च न्यायालय (i) उपासनाकर्ता द्‌वारा उपासना के अधिकार के प्रवर्तन की ईप्सा करते हुए फाइल किए गए वाद (वाद संख्या 1); (ii) निर्मोही अखाड़ा द्‌वारा मंदिर के प्रबंधन और प्रभार के शिबायती अधिकारों का दावा करते हुए फाइल किए गए वाद (वाद संख्या 3); (iii) सुन्नी सेंट्रल वक्फ़ बोर्ड और मुस्लिमों द्‌वारा हक के प्रश्न पर फाइल किए गए घोषणात्मक वाद (वाद संख्या 4) और (iv) हिंदू देवताओं की तरफ से घोषणा के लिए फाइल किए गए वाद, जिसमें मंदिर के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यवधान उत्पन्न करने से निषिद्‌ध किए जाने के प्रयोजनार्थ व्यादेश की ईप्सा की गई, पर विचार कर रहा था । उच्च न्यायालय से हक के प्रश्न, विशेष रूप से घोषणात्मक वादों, वाद संख्या 4 और 5 में निर्णय देने की अपेक्षा की गई थी ।

792. **श्रीनिवास रामकुमार** बनाम **महावीर प्रसाद**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने अभिनिर्धारित किया कि न्यायालय को यह अधिकार नहीं है कि वह वादी को किसी ऐसे मामले, जिसके लिए वादी के पास कोई आधार नहीं है, में अनुतोष प्रदान करे । न्यायमूर्ति बी. के. मुखर्जी ने अभिनिर्धारित किया :–

> "... तथापि, यह प्रश्न उद्‌भूत होता है कि क्या वादपत्र में इस प्रकार के किसी आनुकल्पिक मामले की अनुपस्थिति में न्यायालय को यह अधिकार है कि वह उसको (वादी को) उस आधार पर अनुतोष प्रदान कर सके । नियम नि:संदेह रूप से यह है कि न्यायालय वादी को किसी ऐसे मामले में कोई ऐसा अनुतोष प्रदान

[1] [1951] एस. सी. आर. 277.

नहीं कर सकता, जिसके लिए अभिवचन में कोई आधार प्रस्तुत नहीं किया गया और जिसके विरुद्ध अन्य पक्ष को उत्तर देने का अवसर प्रदान नहीं किया ।"

इस सिद्धांत को **श्री वेंकटरमना देवारु** बनाम **मैसूर राज्य**[1] वाले मामले में संविधान न्यायपीठ द्वारा दिए गए निर्णय में दोहराया गया । न्यायमूर्ति वेंकटरमा अय्यर ने इस न्यायालय की तरफ से निर्णय पारित करते हुए अभिनिर्धारित किया :–

> "अभिवचनों में अपने अभिवाक् प्रस्तुत करने के प्रयोजनार्थ किसी पक्ष से अपेक्षा किए जाने का उद्देश्य विपक्षी को उन अभिवाकों का खंडन करने और उसको उसके मामले में साक्ष्य प्रस्तुत करने के समर्थ बनाना है । यह न तो विधिक होगा और न ही किसी ऐसे मामले, जो वास्तव में विवादग्रस्त हैं, के संदर्भ में मात्र साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए होगा और उस साक्ष्य के आधार पर किसी मामले, जो विवादग्रस्त नहीं है, में किसी निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए और निष्कर्ष के आधार पर पक्षों के अधिकारों को निर्णीत किए जाने के लिए होगा ।"

उच्च न्यायालय ने ऐसे मार्ग का चयन किया है, जिसका उनके ऊपर सूत्रबद्ध सिद्धांतों के निबंधनों के अनुसार अधिकार नहीं था । उच्च न्यायालय ने वे अनुतोष प्रदान कर दिए, जो वाद में ईप्सित अनुतोष की विषयवस्तु नहीं थे । ऐसा करते हुए उन्होंने विभाजन के लिए फाइल किए गए वाद में सिविल न्यायालय की अधिकारिता धारण कर लिया, यद्यपि उनके समक्ष लंबित वाद इस प्रयोजनार्थ फाइल नहीं किए गए थे । सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश 7, नियम 7 यह उपबंधित करता है :–

> "हर वादपत्र में उस अनुतोष का विनिर्दिष्ट रूप से कथन होगा, जिसके लिए वादी सामान्यत: या अनुकल्पत: दावा करता है और यह आवश्यक नहीं होगा कि ऐसा कोई साधारण या अन्य अनुतोष मांगा जाए, जो न्यायालय न्यायसंगत समझे, जो सर्वदा ही उसी

[1] [1958] एस. सी. आर. 895.

विस्तार तक ऐसे दिया जा सकेगा, मानो वह मांगा गया हो और यही नियम प्रतिवादी द्वारा अपने लिखित कथन में दावा किए गए किसी अनुतोष में भी लागू होगा ।'

उपरोक्त उपबंध वादी से यह अपेक्षा करता है कि वह साधारणत: या अनुकल्प में उस अनुतोष का दावा करे, जो ईप्सित है । तथापि, यह स्पष्ट किया जाता है कि साधारण और अन्य अनुतोषों, जिनको न्यायालय के विवेकाधिकार में सदैव प्रदान किया जा सकता है, के लिए दावा किया जाना आवश्यक नहीं होता । यह उपबंध किसी सिविल विचारण में न्यायालय को यह अधिकार प्रदान नहीं करता कि वह परोक्ष रूप से वाद, जिस पर उच्च न्यायालय द्वारा विचार किया गया, की संरचना का पुनर्निर्माण किए जाने की शुरुआत करे । उच्च न्यायालय के समक्ष अभिवचनों में ऐसा कोई आधार नहीं था और निश्चित रूप से याचित अनुतोषों में भी ऐसा कुछ ईप्सित नहीं था, जिनके द्वारा भूमि के विभाजन के लिए निर्देशित किए जाने का दावा ऐसी रीति में किया गया हो, जिसे न्यायालय द्वारा विभाजन के लिए फाइल किए गए वाद में प्रदान किया जा सकता हो ।

793. जैसाकि न्यायमूर्ति एस. बी. सिन्हा ने **शिव कुमार शर्मा** बनाम **संतोष कुमारी**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ की तरफ से निर्णय पारित करते हुए अभिनिर्धारित किया :–

"27. विधि न्यायालय कानून की परिधि के बाहर अपनी वैवेकिक अधिकारिता का प्रयोग नहीं कर सकते । उनको अपने विवेकाधिकार का प्रयोग विद्यमान कानून के निबंधनों के अनुसार करना चाहिए ।"

[इस संबंध में **सम्सू सुहारा बीबी** बनाम **जी. एलेक्स**[2] वाले मामले में न्यायमूर्ति अशोक भान द्वारा दिए गए निर्णय का भी अवलोकन करें]

ओम प्रकाश बनाम **राम कुमार**[3] वाले मामले में न्यायमूर्ति फातिमा

---

[1] (2007) 8 एस. सी. सी. 600.

[2] (2004) 8 एस. सी. सी. 569.

[3] (1991) 1 एस. सी. सी. 441.

बीबी ने तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ की तरफ से निर्णय पारित करते हुए यह अभिनिर्धारित किया :–

> "34. ... किसी पक्ष को कोई ऐसा अनुतोष प्रदान नहीं किया जा सकता, जिसके बाबत दावा न किया गया हो, यदि मामले की परिस्थिति इस प्रकार की हैं कि उस अनुतोष के प्रदान किए जाने के परिणामस्वरूप हितबद्ध पक्ष पर गंभीर रूप से प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा और वह कानून के अंतर्गत प्रदत्त मूल्यवान अधिकारों से वंचित हो जाएगा ।"

उच्च न्यायालय ने वह अनुतोष प्रदान करने में गंभीर त्रुटि कारित की है, जो अभिवाकों की परिधि और वाद संख्या 3, 4 और 5 में वादियों द्वारा स्थापित मामले के बाहर हैं ।

794. उच्च न्यायालय द्वारा विवादित स्थल को तीन भागों में विभाजित किए जाने के द्वारा अनुतोष प्रदान किए जाने के संपूर्ण दृष्टि कोण में गंभीर त्रुटि है । इस निष्कर्ष पर पहुंचते हुए कि वाद संख्या3 (जो निर्मोही अखाड़ा द्वारा फाइल किया गया) और वाद संख्या 4 (जो सुन्नी सेंट्रल वक्फ़ बोर्ड द्वारा फाइल किया गया) परिसीमा द्वारा बाधित थे, इसलिए उच्च न्यायालय वाद संख्या 3 और 4 के वादियों को वाद संख्या 5 में अनुतोष प्रदान करने के लिए अग्रसर हुआ । यह तर्कसंगतता को विफल करने वाला दृष्टिकोण है और विधि के स्थिरीकृत सिद्धांतों के विपरीत है । इसके अतिरिक्त, निर्मोही अखाड़ा द्वारा फाइल किया गया दावा, जिन्होंने प्रबंधन और प्रभार की डिक्री का दावा किया, शिबायत के रूप में फाइल किया गया था । निर्मोही अखाड़ा को अपने स्वयं के द्वारा फाइल किए मामले में भूमि का एक स्वतंत्र अंश प्रदान नहीं किया जा सकता था । उच्च न्यायालय द्वारा इस निर्णय के द्वारा निकाला गया निष्कर्ष कि निर्मोही अखाड़ा का वाद परिसीमा द्वारा बाधित था, को मान्य ठहराया गया है किंतु परिसीमा के वर्जन के संबंध में निकाले गए निष्कर्ष वाद संख्या 4 में आकर्षित होने के कारण पलट दिए गए हैं । इस पहलू पर अंतिम अनुतोष, जिसे प्रदान किया जाएगा, का विश्लेषण किए जाते समय विचार किया जाएगा ।

त.2 हक पर निष्कर्ष

795. वर्तमान मामले के तथ्य, साक्ष्य और मौखिक दलीलों में इतिहास, पुरातत्वशास्त्र, धर्म और विधि के क्षेत्रों को खंगाला गया है । विधि को इतिहास, विचारधारा और धर्म के संबंध में राजनैतिक प्रतिद्वंदिताओं से पृथक् रहना चाहिए । हमको पुरातात्विक आधारों के संदर्भों से परिपूर्ण किसी मामले में यह स्मरण रखना चाहिए कि यह विधि ही है, जो वह बुनियाद उपलब्ध कराती है, जिस पर हमारा बहुसांस्कृतिक समाज खड़ा होता है । विधि उस आधार का सृजन करती है, जिसके ऊपर इतिहास, सिद्धांतवाद और धर्म के विविध लक्षण एक दूसरे के विरुद्ध प्रतियोगी बन जाते हैं । इस न्यायालय को अंतिम मध्यस्थ के रूप में उनकी सीमाओं को विनिर्धारण करते हुए भाव के इस संतुलन को संरक्षण प्रदान करना चाहिए कि एक नागरिक का विश्वास दूसरे की स्वतंत्रता और विश्वास में मध्यक्षेप न कर सके या उस पर अधिपत्य न जमा सके । भारत ने तारीख 15 अगस्त, 1947 को एक राष्ट्र के रूप में आत्मनिर्णय की धारणा को समझा । हमने तारीख 26 जनवरी, 1950 को उन मूल्यों, जो हमारे समाज को परिभाषित करते हैं, की अटूट प्रतिबद्धता के रूप में स्वयं को भारत का संविधान प्रदान किया । संविधान के केंद्र में समानता की प्रतिबद्धता है, जिसे विधि के नियम द्वारा मान्य ठहराया गया है और प्रवर्तित किया है । हमारे संविधान के अधीन सभी आस्थाओं, विश्वासों और संप्रदायों के नागरिक, जो दिव्य उद्गम की ईप्सा करते हैं, विधि के अधीन और विधि के समक्ष, दोनों के समक्ष समान हैं । इस न्यायालय के प्रत्येक न्यायाधीश को न केवल संविधान और उसके मूल्यों को सर्वोपरि रखने का कार्य सौंपा गया है बल्कि उसने संविधान और उसके मूल्यों को सर्वोपरि रखने की शपथ भी ली है । संविधान किसी एक धर्म और अन्य धर्म की आस्था और विश्वास के मध्य अंतर नहीं करता । विश्वासों, उपासना और प्रार्थना के समस्त स्वरूप समान हैं । वे, जो संविधान के निर्वचन के कर्तव्याधीन, उसे प्रवर्तित करते हैं और उसके साथ वचनबद्ध रहते हैं और जो इसका अनदेखा करते हैं, केवल हमारे समाज और राष्ट्र के जोखिम पर ही ऐसा कर सकते हैं । संविधान न्यायाधीशों से वार्ता करता

है, जो इसका निर्वचन उन लोगों के लिए करते हैं, जो इसके अधीन शासन करते और इसे प्रवर्तित करते हैं, किंतु इन सब बातों के अलावा उन नागरिकों से भी वार्ता करता है, जो इसके साथ उनके जीवन के अपरिहार्य लक्षण के रूप में सहबद्ध होते हैं ।

796. वर्तमान मामले में इस न्यायालय को अद्वितीय आयाम के न्यायनिर्णायक कार्य का निर्वहन करना है । यह विवाद अचल संपत्ति का विवाद है । यह न्यायालय आस्था और विश्वास के आधार पर हक का निर्णय नहीं करती बल्कि साक्ष्य के आधार पर करता है । विधि हमको वे मानदंड उपलब्ध कराती है, जो न केवल स्पष्ट हो बल्कि स्वामित्व और कब्जे की भांति प्रगाढ़ भी हों । न्यायालय विवादित संपत्ति के हक का निर्णय किए जाने के प्रयोजनार्थ साक्ष्य के स्थिरीकृत सिद्धांतों को लागू करती है ताकि इस बाबत न्यायनिर्णयन किया जा सके कि किस पक्ष ने अचल संपत्ति के संबंध में दावे को साबित किया है ।

797. अधिसंभाव्यताओं के संतुलन के आधार पर यह उपदर्शित किए जाने के प्रयोजनार्थ स्पष्ट साक्ष्य उपलब्ध हैं कि हिंदुओं द्वारा बाहरी बरामदे में उपासना वर्ष 1857 में दीवार के ऊपर लोहे की जाली स्थापित किए जाने के बावजूद निरंतर रूप से और बिना किसी रोकटोक के जारी रही । बाहरी बरामदे में उनका कब्जा उन घटनाओं से स्थापित हो जाता है, जिनके कारण उस पर उनके नियंत्रण को कुर्क कर दिया गया था ।

798. जहां तक भीतरी बरामदे का प्रश्न है, अधिसंभाव्यताओं की प्रबलता के आधार पर अंग्रेजों द्वारा वर्ष 1857 में अवध को अपने साम्राज्य में मिला लेने के पूर्व हिंदुओं द्वारा उपासना को साबित किए जाने के प्रयोजनार्थ साक्ष्य उपलब्ध हैं । मुस्लिमों ने यह उपदर्शित किए जाने के प्रयोजनार्थ कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है कि वे सोलहवीं शताब्दी में निर्माण की तारीख से वर्ष 1857 के पूर्व भीतरी ढांचे के कब्जे में अनन्य रूप से थे । दीवार के ऊपर लोहे की जाली स्थापित किए जाने के पश्चात् मस्जिद का ढांचा विद्यमान बना रहा और यह उपदर्शित किए जाने के प्रयोजनार्थ साक्ष्य उपलब्ध हैं कि इसके अहाते के भीतर नमाज अदा की जाती थी । दिसंबर, 1949 की वक्फ़ निरीक्षक की रिपोर्ट से यह

उपदर्शित होता है कि मस्जिद में नमाज अदा किए जाने के प्रयोजनार्थ मुस्लिमों के स्वतंत्र और अबाधित प्रवेश में बाधा उत्पन्न की जा रही थी । तथापि, यह दर्शित किए जाने के प्रयोजनार्थ साक्ष्य उपलब्ध हैं कि मस्जिद के ढांचे में नमाज अदा की जा रही थी और शुक्रवार की अंतिम नमाज तारीख 16 दिसंबर, 1949 को अदा की गई थी । उपासना और कब्जे से मुस्लिमों का अपवर्जन तारीख 22/23 दिसंबर, 1949 की मध्यवर्ती रात्रि में घटित हुआ, जब मस्जिद में हिंदू मूर्तियां स्थापित किए जाने के द्वारा अपवित्र कर दिया गया । उस अवसर पर मुस्लिमों की बेदखली किसी विधिक प्राधिकार के अंतर्गत नहीं थी बल्कि एक ऐसे कार्य के द्वारा थी, जो उनको उनके उपासना स्थल से वंचित किए जाने के लिए पहले से सोचा हुआ कार्य था । वर्ष 1898 की दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के अधीन कार्यवाहियां आरंभ किए जाने के पश्चात् और भीतरी बरामदे की कुर्की के पश्चात् रिसीवर की नियुक्ति की गई थी और हिंदू मूर्तियों की उपासना की अनुज्ञा प्रदान कर दी गई थी । वाद के लंबन के दौरान मस्जिद का संपूर्ण ढांचा सार्वजनिक उपासना स्थल को ढहाए जाने की पहले से सोची-समझी रणनीति के अंतर्गत ढहा दिया गया । मुस्लिमों को उस मस्जिद से, जिसका निर्माण 450 वर्ष पूर्व हुआ था, से दोषपूर्ण ढंग से वंचित किया गया ।

799. हमने पहले ही यह निष्कर्ष निकाल लिया है कि उच्च न्यायालय द्वारा तीन भागों में विभाजन अवैध था और मान्य ठहराए जाने योग्य नहीं है । यदि यह मान भी लिया जाए कि यह लोक शांति और समरसता को बनाए रखे जाने का मामला था, तो भी जो समाधान उच्च न्यायालय द्वारा निकाला गया, व्यवहार्य नहीं है । विवादित स्थल की माप 1500 वर्ग गज है । इस भूमि को विभाजित करने से किसी भी पक्ष का हित पूर्ण नहीं होगा या शांति और समरसता का अंतिम भाव सुनिश्चित नहीं होगा ।

800. वाद संख्या 5 प्रथम वादी (भगवान राम के देवता), जो विधिक व्यक्ति हैं, की तरफ से फाइल किया गया, को पोषणीय अभिनिर्धारित किया गया है । तृतीय वादी (वादमित्र) के बाबत यह

अभिनिर्धारित किया गया है कि वे प्रथम वादी का प्रतिनिधित्व करने के हकदार हैं । हमारा यह मत है कि एक तरफ तो डिक्री द्वारा यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि वाद संख्या 5 और वाद संख्या 4 को मस्जिद के निर्माण और सहबद्ध क्रियाकलापों के लिए मुस्लिमों को आनुकल्पिक भूमि के आबंटन हेतु निर्देशित किए जाने के प्रयोजनार्थ भागत: डिक्री किया जाना चाहिए । मुस्लिमों को भूमि का आबंटन आवश्यक है क्योंकि यद्यपि अधिसंभाव्यताओं के संतुलन के आधार पर संपूर्ण समिश्र विवादित संपत्ति पर हिंदुओं के कब्जाधारी दावे के संबंध में साक्ष्य मुस्लिमों द्वारा प्रस्तुत किए साक्ष्य के मुकाबले बेहतर अवस्था में है और मुस्लिमों को तारीख 22/23 दिसंबर, 1949 को मस्जिद के अपवित्रीकरण पर बेदखल कर दिया गया था और अंतत: तारीख 6 दिसंबर, 1992 को ध्वस्त कर दिया गया था । मुस्लिमों द्वारा मस्जिद का अधित्यजन नहीं किया गया । अत: यह न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए यह सुनिश्चित करती है कि कारित किए गए दोष के प्रति अनुतोष प्रदान किया जाना चाहिए । न्याय नहीं होगा यदि न्यायालय मुस्लिमों, जिनको मस्जिद के ढांचे से ऐसी रीति में वंचित कर दिया गया है, जिसे एक पंथनिरपेक्ष राष्ट्र में, जो विधि के नियम को समर्पित है, अपनाया नहीं जाना चाहिए था, के हक का अनदेखा करती है । संविधान में समस्त आस्थाओं के प्रति समानता अनुध्यात है । सहिष्णुता और परस्पर सह विद्यमानता हमारे देश और इसके लोगों की पंथनिरपेक्ष प्रतिबद्धता को पोषित करते हैं ।

801. संमिश्रित (विवादित) स्थल का क्षेत्रफल लगभग 1500 वर्ग गज है । आबंटित की जाने वाली भूमि का क्षेत्रफल विनिर्धारित करते हुए यह आवश्यक है कि मुस्लिम समुदाय को उनके उपासना स्थल के विधि विरुद्ध तरीके से विध्वंस के बदले में पुनर्स्थापन का अवसर प्रदान किया जाए । वह अनुतोष, जो मुस्लिमों को प्रदान किया जाना है, की प्रकृति पर विचार करते हुए हम यह निर्देशित करते हैं कि सुन्नी सेंट्रल वक्फ़

बोर्ड को पांच एकड़ भूमि या तो केंद्रीय सरकार द्वारा अर्जित भूमि में से या उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा अयोध्या नगर के भीतर आबंटित की जाएगी । यह प्रक्रिया और इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप सुन्नी सेंट्रल वक्फ़ बोर्ड को भूमि का कब्जा सौंपे जाने का कार्य वाद संख्या 5 में डिक्री पारित किए जाने को दृष्टि में रखते हुए विवादित स्थल वाली भूमि के भीतरी और बाहरी बरामदों वाली भूमि को सम्मिलित करते हुए सौंपे जाने के साथ-साथ किया जाएगा । वाद संख्या 4 उपरोक्त निबंधनों के आधार पर डिक्री हो जाएगा ।

802. वर्ष 1993 के अयोध्या में कतिपय क्षेत्र अर्जन अधिनियम केंद्रीय सरकार को यह निर्देशित करने के लिए सशक्त करता है कि विवादित क्षेत्र या उसके किसी भाग के संबंध में अधिकार हक या हित केंद्रीय सरकार में निहित रहने के बजाय किसी न्यास, जो उन निबंधनों और शर्तों का अनुपालन करने के लिए इच्छुक हो, जिन्हें सरकार अधिरोपित करे, के प्राधिकारी या निकाय या न्यासियों में निहित होगा ।* उक्त अधिनियम की धारा 7(1) उपबंध उपबंधित करती है कि अधिनियम की धारा 3 के अधीन केंद्रीय सरकार में निहित संपत्ति को

---

*6. **किसी अन्य प्राधिकारी या निकाय या न्यास में क्षेत्र को निहित करने का निदेश देने की केंद्रीय सरकार की शक्ति** – (1) धारा 3, धारा 4, धारा 5 और धारा 7 में किसी बात के होते हुए भी यदि केंद्रीय सरकार का यह समाधान हो जाता है कि इस अधिनियम के प्रारंभ को या उसके पश्चात् गठित कोई प्राधिकारी या अन्य निकाय या किसी न्यास के न्यासी ऐसे निबंधनों और शर्तों का, जो वह सरकार अधिरोपित करना ठीक समझे, अनुपालन करने के लिए रजामंद है तो वह राजपत्र में अधिसूचना द्वारा यह निदेश दे सकेगी कि उस क्षेत्र या उसके किसी भाग के संबंध में अधिकार, हक और हित या उनमें से कोई केंद्रीय सरकार में इस प्रकार से निहित बने रहने के बजाय उस प्राधिकारी या निकाय या उस न्यास के न्यासियों में अधिसूचना की तारीख को या ऐसी पश्चात्वर्ती तारीख को, जो अधिसूचना में विनिर्दिष्ट की जाए, निहित हो जाएगा ।

(2) जब उस क्षेत्र या उसके भाग के संबंध में कोई अधिकार, हक और हित उपधारा (1) में निर्दिष्ट प्राधिकारी या निकाय या न्यासियों में निहित हो जाता है, तब उस क्षेत्र या उसके भाग के संबंध में केंद्रीय सरकार के ऐसे अधिकार ऐसे निहित होने की तारीख से ही उस प्राधिकारी या निकाय या उस न्यास के न्यासियों के अधिकार समझे जाएंगे ।

(3) धारा 4, धारा 5, धारा 7 और धारा 11 के उपबंध, जहां तक हो सके, ऐसे प्राधिकारी या निकाय या न्यासियों के संबंध में वैसे ही लागू होंगे, जैसे वे केंद्रीय सरकार के संबंध में लागू होते हैं और इस प्रयोजन के लिए उसमें केंद्रीय सरकार के प्रतिनिर्देशों का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह ऐसे प्राधिकारी या निकाय या न्यासियों के प्रतिनिर्देश हैं ।

केंद्रीय सरकार या इस संबंध में किसी व्यक्ति या किसी न्यास के न्यासियों, प्राधिकारियों द्वारा संभाला जाएगा ।*

803. हमारा यह विचार है कि केंद्रीय सरकार को धारा 6 और 7 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए एक योजना विरचित किए जाने के लिए निर्देशित किया जाना आवश्यक होगा ताकि एक न्यास या किसी अन्य समुचित तंत्र को स्थापित किया जा सके, जिसको वाद संख्या 5 में पारित डिक्री के निबंधनों के अनुसार भूमि सौंपी जा सके । इस योजना में वे समस्त उपबंध सम्मिलित होंगे, जो न्यास या निकाय, जिसका चयन भूमि के निहतार्थ किया जाएगा, के प्रबंध के संबंध में शक्ति और प्राधिकार निहित करने के लिए आवश्यक होंगे ।

804. निर्मोही अखाड़ा द्वारा फाइल किए गए वाद संख्या 3 को परिसीमा द्वारा बाधित अभिनिर्धारित किया गया है । हमने वाद संख्या 5 की पोषणीयता के संबंध में निर्मोही अखाड़ा और सुन्नी सेंट्रल वक्फ़ बोर्ड द्वारा फाइल किए गए ऐतराज, जो उनके इस अभिवाक् पर आधारित था कि निर्मोही अखाड़ा शिबायत है, को अस्वीकृत भी कर दिया है । निर्मोही अखाड़ा का शिबायत का दावा अस्वीकृत किया जाता है । तथापि, विवादित स्थल पर निर्मोही अखाड़ा की ऐतिहासिक उपस्थिति और उनकी भूमिका को ध्यान में रखते हुए इस न्यायालय के लिए यह आवश्यक है कि पूर्ण न्याय करने के प्रयोजनार्थ अनुच्छेद 142 के अधीन प्रदत्त शक्तियों का आश्रय लिया जाए । इसलिए, हम निर्देशित करते हैं

---

7. **सरकार द्वारा संपत्ति का प्रबंध – (1) किसी संविदा या लिखत अथवा किसी न्यायालय, अधिकरण या अन्य प्राधिकारी के आदेश में किसी प्रतिकूल बात के होते हुए भी इस अधिनियम के प्रारंभ से ही धारा 3 के अधीन केंद्रीय सरकार में निहित संपत्ति का प्रबंध केंद्रीय सरकार द्वारा अथवा उस सरकार द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किसी व्यक्ति या व्यक्ति निकाय या किसी न्यास के न्यासियों द्वारा किया जाएगा ।

(2) धारा 3 के अधीन केंद्रीय सरकार में निहित संपत्ति का प्रबंध करने में केंद्रीय सरकार या प्राधिकृत व्यक्ति यह सुनिश्चित करेगा कि उस क्षेत्र में, जिस पर उत्तर प्रदेश राज्य के जिला फैजाबाद की तहसील फैजाबाद सदर तहसील के परगना हवेली अवध के अंतर्गत अयोध्या में ग्राम कोट रामचंद्र में ऐसी संरचना (जिसके अंतर्गत उस संरचना के भीतरी और बाहरी आंगनों के परिसर हैं) स्थित थी, जो सामान्यतया राम जन्मभूमि बाबरी मस्जिद के नाम से ज्ञात है । इस अधिनियम के प्रारंभ के पूर्व विद्यमान स्थिति को बनाए रखा जाए ।

कि इस योजना को विरचित किए जाने के प्रयोजनार्थ निर्मोही अखाड़ा को इसके प्रबंधन में समुचित भूमिका समनुदेशित की जाएगी ।

थ. अनुतोष और निर्देश

805. हम, तद्नुसार, निम्नलिखित आदेश और निर्देश देते हैं :–

1. (i) निर्मोही अखाड़ा द्वारा संस्थित कराए गए वाद संख्या 3 को परिसीमा द्वारा बाधित अभिनिर्धारित किया जाता है और यह वाद तद्नुसार खारिज किया जाता है;

(ii) सुन्नी सेंट्रल वक्फ़ बोर्ड और अन्य वादियों द्वारा संस्थित कराए गए वाद संख्या 4 को परिसीमा के भीतर अभिनिर्धारित किया जाता है । उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित करते हुए पारित किए गए निर्णय कि वाद संख्या 4 परिसीमा द्वारा बाधित है, पलटा जाता है;

(iii) वाद संख्या 5 को परिसीमा के भीतर अभिनिर्धारित किया जाता है ।

2. वाद संख्या 5 को प्रथम वादी, जिसका प्रतिनिधित्व तृतीय वादी द्वारा किया गया, की प्रार्थना के आधार पर पोषणीय अभिनिर्धारित करता है । इस वाद के प्रार्थना खंडों (क) और (ख) के निबंधनों के अनुसार, निम्नलिखित निर्देशों के अध्यधीन रहते हुए डिक्री पारित की जाती है :

(i) केंद्रीय सरकार इस निर्णय की तारीख से तीन माह की अवधि के भीतर 1993 के अयोध्या में कतिपय क्षेत्र अर्जन अधिनियम की धारा 6 और धारा 7 के अधीन उसमें निहित शक्तियों के मतावलंबन में एक योजना विरचित करेगी । यह योजना धारा 6 के अधीन न्यासियों के निकाय सहित एक न्यास या किसी अन्य समुचित निकाय को स्थापित किए जाने के लिए उपबंधित करेगी । केंद्रीय सरकार द्वारा विरचित की गई यह योजना न्यास के प्रबंधन से संबंधित मामलों को सम्मिलित करते हुए न्यास या निकाय के कार्यों, मंदिर के निर्माण को सम्मिलित

करते हुए न्यासियों की शक्तियों और समस्त आवश्यक, अनुषांगिक और अनुपूरक मामलों के संबंध में आवश्यक उपबंध विरचित करेगी;

(ii) भीतरी और बाहरी आंगनों का कब्जा न्यास के न्यासियों के निकाय या इस प्रयोजनार्थ गठित किसी निकाय को सौंप दिया जाएगा । केंद्रीय सरकार को उपरोक्त निर्देशों के अनुसार विरचित योजना के निबंधनों के अनुसार अर्जित शेष भूमि के प्रबंधन और विकास के प्रयोजनार्थ न्यास या निकाय को सौंपे जाने के द्वारा उसके संबंध में उपयुक्त उपबंध विरचित करने की स्वतंत्रता होगी; और

(iii) विवादित भूमि का कब्जा केंद्रीय सरकार के अधीन कानूनी रिसीवर में निहित रहेगा, जब तक कि 1993 के अयोध्या अधिनियम की धारा 6 के अधीन वह अपनी अधिकारिता के प्रयोग में है, न्यास या अन्य निकाय में संपत्ति के निहतार्थ अधिसूचना जारी की जाती है ।

3. (i) उपरोक्त खंड 2 के अधीन न्यास या निकाय को विवादित संपत्ति सौंपे जाने के साथ-साथ पांच एकड़ की माप वाली भूमि का एक उपयुक्त भूखंड वाद संख्या 4 के वादी सुन्नी सेंट्रल वक्फ़ बोर्ड को सौंप दिया जाएगा ।

(ii) भूमि आबंटित की जाएगी –

(क) केंद्रीय सरकार द्वारा 1993 के अयोध्या अधिनियम के अधीन अर्जित भूमि में से; या

(ख) उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा अयोध्या में उपयुक्त प्रमुख स्थान पर;

केंद्रीय सरकार और राज्य सरकार एक दूसरे के साथ मंत्रणा करके अनुध्यात अवधि के भीतर उपरोक्त आबंटन को प्रभावी करने का कार्य करेंगे;

(iii) सुन्नी सेंट्रल वक्फ़ बोर्ड को भूमि के इस प्रकार से

आबंटन पर यह स्वतंत्रता होगी कि वे इस भूमि पर मस्जिद के निर्माण और साथ ही अन्य सहबद्ध सुविधाओं के लिए समस्त आवश्यक कार्रवाई करें;

(iv) वाद संख्या 4 उपरोक्त निर्देशों के निबंधनों के अनुसार इस सीमा तक डिक्री किया जाता है; और

(v) वाद संख्या 4 में सुन्नी सेंट्रल वक्फ़ बोर्ड के पक्ष में भूमि के आबंटन के लिए निर्देश इस न्यायालय में संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन निहित शक्तियों के मतावलंबन में जारी किए गए ।

4. हम संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन इस न्यायालय में निहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए निर्देशित करते हैं कि केंद्रीय सरकार द्वारा विरचित योजना के अंतर्गत स्थापित न्यास या निकाय में निर्मोही अखाड़ा को पर्याप्त प्रतिनिधित्व उस तरीके में प्रदान किया जाएगा जैसा केंद्रीय सरकार उचित प्रतीत करे ।

5. वाद संख्या 1 में विवादित संपत्ति पर उपासना करने के वादी के अधिकार की पुष्टि शांति और व्यवस्था को बनाए रखे जाने के संबंध में और सुव्यवस्थित तरीके से उपासना का निर्वहन किए जाने के प्रयोजनार्थ सुसंगत प्राधिकारियों द्वारा अधिरोपित निर्बंधनों के अध्यधीन रहते हुए की जाती है ।

806. समस्त अपीलें उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए निस्तारित की जाती है । पक्ष अपनी-अपनी लागत स्वयं वहन करेंगे ।

अभिस्वीकृतियां

इस न्यायालय द्वारा निर्णय अभिलिखित किए जाने की प्रक्रिया के दौरान न्याय संबंधी प्रतियोगिता ने मामले के संचालन में जटिलता की परतों के माध्यम से मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान की । काउंसेलों की विद्वत्ता, उनकी कार्यक्षमता, अंतर्दृष्टि और इन सब बातों के अलावा उनके द्वारा इस न्यायालय के अधिकारियों के रूप में उनकी भूमिका के निर्वहन में निष्पक्षता का सम्मान किया जाना चाहिए । हम विद्वान्

वरिष्ठ काउंसेल श्री के. पारासरन और डा. राजीव धवन द्वारा प्रदान की गई सहायता की सराहना करते हैं, जिन्होंने दलीलों की अगुआई की । सुनवाई के अनुक्रम के दौरान उनके पक्षकथनों और उनके विपक्षियों और न्यायालय के प्रति उनकी निष्पक्षता, जिसको उन्होंने प्रदर्शित किया, के कारण सुनवाई की समाप्ति उस भावना के साथ संपन्न हुई कि सभी पक्ष अंततः सत्य और न्याय की खोज में संलग्न रहे ।

अन्य विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल जिनके प्रयासों को स्वीकृति प्रदान किया जाना आवश्यक है : श्री सी. एस. वैद्यनाथन, श्री एस. के. जैन, श्री रंजीत कुमार, श्री जफरयाब जिलानी, सुश्री मिनाक्षी अरोड़ा, श्री शेखर नफाडे और पी. एस. नरसिम्हा हैं । हम श्री पी. एन. मिश्रा, मोहम्मद निजामुद्दीन पाशा, श्री बी. एन. सिन्हा, श्री हरिशंकर जैन, श्री जयदीप गुप्त (विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल) श्री विकास सिंह (विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल), श्री एम. सी. ढ़ीगरा और श्री अनूप बोस द्वारा प्रदान की गई सहायता की भी सराहना करते हैं । हमको बहस करने वाले काउंसेलों द्वारा, मौखिक दलीलों और लिखित निवेदनों, दोनों के द्वारा प्रदान किए गए विद्वतापूर्ण योगदान की सराहना करते हुए विद्वान् सहायक काउंसेलों की विश्वसनीयता और समर्पण और उनके मध्य कनिष्ठ काउंसेलों के परिश्रम का भी समान रूप से उल्लेख करना चाहिए ।

हम में से एक विद्वान् न्यायाधीश ने उपरोक्त कारणों और निर्देशों से सहमत होते हुए 'क्या विवादित ढांचा हिंदू श्रद्धालुओं की आस्था और विश्वास के साथ भगवान राम का जन्मस्थान है', पर पृथक् रूप से कारण अभिलिखित किए हैं । विद्वान् न्यायाधीश द्वारा अभिलिखित कारणों का उल्लेख परिशिष्ट में किया गया है ।

मामले का निपटारा किया गया ।

अपील मंजूर की गई ।

शु.

<u>संसद् के अधिनियम</u>

नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009

(2009 का अधिनियम संख्यांक 35)

[26 अगस्त, 2009]

छह वर्ष से चौदह वर्ष तक की आयु के सभी बालकों के लिए नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का उपबंध करने के लिए अधिनियम

भारत गणराज्य के साठवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :–

अध्याय 1
प्रारंभिक

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ – (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 है ।

(2) इसका विस्तार जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय संपूर्ण भारत पर होगा ।

(3) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा, जो केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियत करे ।

[1][(4) संविधान के अनुच्छेद 29 और अनुच्छेद 30 के उपबंधों के अधीन रहते हुए इस अधिनियम के उपबंध बालकों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा के अधिकार प्रदान किए जाने के संबंध में लागू होंगे ।

(5) इस अधिनियम की कोई बात मदरसों, वैदिक पाठशालाओं और मुख्यत: धार्मिक शिक्षा प्रदान करने वाली शैक्षणिक संस्थाओं को लागू नहीं होगी ।]

---

[1] 2012 के अधिनियम सं. 30 की धारा 2 द्वारा अंत:स्थापित ।

2. परिभाषाएं – इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, –

(क) "समुचित सरकार" से, –

(i) केन्द्रीय सरकार या ऐसे संघ राज्यक्षेत्र के, जिसमें कोई विधान-मंडल नहीं है, प्रशासक द्वारा स्थापित, उसके स्वामित्वाधीन या नियंत्रणाधीन किसी विद्यालय के संबंध में, केन्द्रीय सरकार ;

(ii) उपखंड (i) में विनिर्दिष्ट विद्यालय से भिन्न, –

(क) किसी राज्य के राज्यक्षेत्र के भीतर स्थापित किसी विद्यालय के संबंध में, राज्य सरकार ;

(ख) विधान-मंडल वाले किसी संघ राज्यक्षेत्र के भीतर स्थापित विद्यालय के संबंध में उस संघ राज्यक्षेत्र की सरकार,

अभिप्रेत है ;

(ख) "प्रति व्यक्ति फीस" से विद्यालय द्वारा अधिसूचित फीस से भिन्न किसी प्रकार का संदान या अभिदाय अथवा संदाय अभिप्रेत है ;

(ग) "बालक" से छह वर्ष से चौदह वर्ष तक की आयु का कोई बालक या बालिका अभिप्रेत है ;

(घ) "अलाभित समूह का बालक" [1][कोई नि:शक्त बालक या] से अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, सामाजिक रूप से और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग या सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, भौगोलिक, भाषाई, लिंग या ऐसी अन्य बात के कारण, जो समुचित सरकार द्वारा, अधिसूचना द्वारा, विनिर्दिष्ट की जाए, अलाभित ऐसे अन्य समूह का कोई बालक अभिप्रेत है ;

(ङ) "दुर्बल वर्ग का बालक" से ऐसे माता-पिता या संरक्षक का

---

[1] 2012 के अधिनियम सं. 30 की धारा 3 द्वारा अंत:स्थापित ।

बालक अभिप्रेत है, जिसकी वार्षिक आय समुचित सरकार द्‌वारा, अधिसूचना द्‌वारा, विनिर्दिष्ट न्यूनतम सीमा से कम है ;

[1][(ङङ) "नि:शक्त बालक" के अंतर्गत निम्नलिखित हैं, –

(अ) नि:शक्त व्यक्ति (समान अवसर, अधिकार संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 (1996 का 1) की धारा 2 के खंड (झ) में यथापरिभाषित "नि:शक्त" कोई बालक ;

(आ) ऐसा कोई बालक, जो राष्ट्रीय स्वपरायणता, प्रमस्तिष्क घात, मानसिक मंदता और बहु-नि:शक्तताग्रस्त व्यक्ति कल्याण न्यास अधिनियम, 1999 (1999 का 44) की धारा 2 के खंड (ञ) में यथापरिभाषित नि:शक्त कोई व्यक्ति हो ;

(इ) राष्ट्रीय स्वपरायणता, प्रमस्तिष्क घात, मानसिक मंदता और बहु-नि:शक्तताग्रस्त व्यक्ति कल्याण न्यास अधिनियम, 1999 (1999 का 44) की धारा 2 के खंड (ण) में यथापरिभाषित "गंभीर बहु-नि:शक्तता से ग्रस्त" कोई बालक] ;

(च) "प्रारंभिक शिक्षा" से पहली कक्षा से आठवीं कक्षा तक की शिक्षा अभिप्रेत है ;

(छ) किसी बालक के संबंध में "संरक्षक" से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है, जिसकी देखरेख और अभिरक्षा में वह बालक है और इसके अंतर्गत कोई प्राकृतिक संरक्षक या किसी न्यायालय या किसी कानून द्‌वारा नियुक्त या घोषित संरक्षक भी है ;

(ज) "स्थानीय प्राधिकारी" से कोई नगर निगम या नगर परिषद् या जिला परिषद् या नगर पंचायत या पंचायत, चाहे जिस नाम से ज्ञात हो, अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत विद्‌यालय पर प्रशासनिक नियंत्रण रखने वाला किसी नगर, शहर या ग्राम में किसी स्थानीय प्राधिकारी के रूप में कार्य करने के लिए तत्समय

---

[1] 2012 के अधिनियम सं. 30 की धारा 3 द्‌वारा अंत:स्थापित ।

प्रवृत्त किसी विधि द्वारा या उसके अधीन सशक्त ऐसा अन्य स्थानीय प्राधिकारी या निकाय भी है ;

(झ) "राष्ट्रीय बालक अधिकार संरक्षण आयोग" से बालक अधिकार संरक्षण आयोग अधिनियम, 2005 (2006 का 4) की धारा 3 के अधीन गठित राष्ट्रीय बालक अधिकार संरक्षण आयोग अभिप्रेत है ;

(ञ) "अधिसूचना" से राजपत्र में प्रकाशित अधिसूचना अभिप्रेत है ;

(ट) "माता-पिता" से किसी बालक का प्राकृतिक या सौतेला या दत्तक पिता या माता अभिप्रेत है ;

(ठ) "विहित" से, इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है ;

(ड) "अनुसूची" से इस अधिनियम से उपाबद्ध अनुसूची अभिप्रेत है ;

(ढ) "विद्यालय" से प्रारंभिक शिक्षा देने वाला कोई मान्यताप्राप्त विद्यालय अभिप्रेत है और इसके अन्तर्गत निम्नलिखित भी हैं :–

(i) समुचित सरकार या किसी स्थानीय प्राधिकारी द्वारा स्थापित, उसके स्वामित्वाधीन या नियंत्रणाधीन कोई विद्यालय ;

(ii) समुचित सरकार या स्थानीय प्राधिकारी से अपने संपूर्ण व्यय या उसके भाग की पूर्ति करने के लिए सहायता या अनुदान प्राप्त करने वाला कोई सहायताप्राप्त विद्यालय ;

(iii) विनिर्दिष्ट प्रवर्ग का कोई विद्यालय ; और

(iv) समुचित सरकार या स्थानीय प्राधिकारी से अपने संपूर्ण व्यय या उसके भाग की पूर्ति करने के लिए किसी प्रकार की सहायता या अनुदान प्राप्त न करने वाला कोई गैर-सहायताप्राप्त विद्यालय ;

(ण) "अनुवीक्षण प्रक्रिया" से किसी अनिश्चित पद्धति से भिन्न दूसरों पर अधिमानता में किसी बालक के प्रवेश के लिए चयन की पद्धति अभिप्रेत है ;

(त) किसी विद्यालय के संबंध में "विनिर्दिष्ट प्रवर्ग" से, केन्द्रीय विद्यालय, नवोदय विद्यालय, सैनिक विद्यालय के रूप में ज्ञात कोई विद्यालय या किसी सुभिन्न लक्षण वाला ऐसा अन्य विद्यालय अभिप्रेत है जिसे समुचित सरकार द्वारा, अधिसूचना द्वारा, विनिर्दिष्ट किया जाए ;

(थ) "राज्य बालक अधिकार संरक्षण आयोग" से बालक अधिकार संरक्षण आयोग अधिनियम, 2005 (2006 का 4) की धारा 3 के अधीन गठित राज्य बालक अधिकार संरक्षण आयोग अभिप्रेत है ।

अध्याय 2

नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार

3. नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार – [1][(1) छह वर्ष से चौदह वर्ष तक की आयु के प्रत्येक बालक को, जिसमें धारा 2 के खंड (घ) या खंड (ङ) में निर्दिष्ट कोई बालक भी सम्मिलित है, उसकी प्रारंभिक शिक्षा पूरी होने तक किसी आस-पास के विद्यालय में नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार होगा ।]

(2) उपधारा (1) के प्रयोजन के लिए, कोई बालक किसी प्रकार की फीस या ऐसे प्रभार या व्यय का संदाय करने के लिए दायी नहीं होगा, जो प्रारंभिक शिक्षा लेने और पूरी करने से उसे निवारित करे ।

[2][* * * *]

[3][(3) धारा 2 के खंड (डङ) के उपखंड (अ) में निर्दिष्ट किसी नि:शक्त बालक को, नि:शक्त व्यक्ति (समान अवसर, अधिकार संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 (1996 का 1) के उपबंधों पर प्रतिकूल

---

[1] 2012 के अधिनियम सं. 30 की धारा 4 द्वारा प्रतिस्थापित ।

[2] 2012 के अधिनियम सं. 30 की धारा 4 द्वारा लोप किया गया ।

[3] 2012 के अधिनियम सं. 30 की धारा 4 द्वारा अंत:स्थापित ।

प्रभाव डाले बिना, और धारा 2 के खंड (डङ) के उपखंड (आ) और उपखंड (इ) में निर्दिष्ट किसी बालक को निःशुल्क और अनिवार्य प्रारंभिक शिक्षा ग्रहण करने के वैसे ही अधिकार प्राप्त होंगे जो निःशक्त व्यक्ति (समान अवसर, अधिकार संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 के अध्याय 5 के उपबंधों के अधीन निःशक्त बालकों को प्राप्त हैं :

परंतु राष्ट्रीय स्वपरायणता, प्रमस्तिष्क घात, मानसिक मंदता और बहु-निःशक्तताग्रस्त व्यक्ति कल्याण न्यास अधिनियम, 1999 (1999 का 44) की धारा 2 के खंड (ज) में निर्दिष्ट "बहु-निःशक्तता" से ग्रस्त किसी बालक को और खंड (ण) में निर्दिष्ट "गंभीर बहु-निःशक्तता" से ग्रस्त किसी बालक को भी घर-आधारित शिक्षा का विकल्प अपनाने का अधिकार हो सकेगा ।]

4. ऐसे बालकों, जिन्हें प्रवेश नहीं दिया गया है या जिन्होंने प्रारंभिक शिक्षा पूरी नहीं की है, के लिए विशेष उपबंध – जहां, छह वर्ष से अधिक की आयु के किसी बालक को किसी विद्यालय में प्रवेश नहीं दिया गया है या प्रवेश तो दिया गया है किंतु उसने अपनी प्रारंभिक शिक्षा पूरी नहीं की है, तो उसे उसकी आयु के अनुसार समुचित कक्षा में प्रवेश दिया जाएगा :

परंतु जहां किसी बालक को, उसकी आयु के अनुसार समुचित कक्षा में सीधे प्रवेश दिया जाता है, वहां उसे अन्य बालकों के समान होने के लिए, ऐसी रीति में और ऐसी समय-सीमा के भीतर, जो विहित की जाए, विशेष प्रशिक्षण प्राप्त करने का अधिकार होगा :

परंतु यह और कि प्रारंभिक शिक्षा के लिए इस प्रकार प्रवेश प्राप्त कोई बालक, चौदह वर्ष की आयु के पश्चात् भी प्रारंभिक शिक्षा पूरी करने तक निःशुल्क शिक्षा का हकदार होगा ।

5. अन्य विद्यालय में स्थानांतरण का अधिकार – (1) जहां किसी विद्यालय में, प्रारंभिक शिक्षा पूरी करने की व्यवस्था नहीं है वहां किसी बालक को, धारा 2 के खंड (ढ) के उपखंड (iii) और उपखंड (iv) में विनिर्दिष्ट विद्यालय को छोड़कर, अपनी प्रारंभिक शिक्षा पूरी करने के लिए किसी अन्य विद्यालय में, स्थानांतरण कराने का अधिकार होगा ।

(2) जहां किसी बालक से किसी राज्य के भीतर या बाहर किसी भी कारण से एक विद्यालय से दूसरे विद्यालय में जाने की अपेक्षा की जाती है, वहां ऐसे बालक को धारा 2 के खंड (ढ) के उपखंड (iii) और उपखंड (iv) में विनिर्दिष्ट विद्यालय को छोड़कर, अपनी प्रारंभिक शिक्षा पूरी करने के लिए किसी अन्य विद्यालय में, स्थानांतरण कराने का अधिकार होगा ।

(3) ऐसे अन्य विद्यालय में प्रवेश लेने के लिए उस विद्यालय का प्रधान अध्यापक या भारसाधक, जहां ऐसे बालक को अंतिम बार प्रवेश दिया गया था, तुरंत स्थानांतरण प्रमाणपत्र जारी करेगा :

परंतु स्थानांतरण प्रमाणपत्र प्रस्तुत करने में विलंब, ऐसे अन्य विद्यालय में प्रवेश के लिए विलंब करने या प्रवेश से इनकार करने के लिए आधार नहीं होगा :

परंतु यह और कि स्थानांतरण प्रमाणपत्र जारी करने में विलंब करने वाले विद्यालय का प्रधान अध्यापक या भारसाधक, उसको लागू सेवा नियमों के अधीन अनुशासनिक कार्रवाई के लिए दायी होगा/होगी ।

अध्याय 3

समुचित सरकार, स्थानीय प्राधिकारी और माता-पिता के कर्तव्य

6. समुचित सरकार और स्थानीय प्राधिकारी का विद्यालय स्थापित करने का कर्तव्य – इस अधिनियम के उपबंधों को कार्यान्वित करने के लिए, समुचित सरकार और स्थानीय प्राधिकारी, इस अधिनियम के प्रारंभ से तीन वर्ष की अवधि के भीतर ऐसे क्षेत्र या आस-पास की ऐसी सीमाओं के भीतर, जो विहित की जाएं, जहां विद्यालय इस प्रकार स्थापित नहीं है, एक विद्यालय स्थापित करेंगे ।

7. वित्तीय और अन्य उत्तरदायित्वों में हिस्सा बांटना – (1) केन्द्रीय सरकार और राज्य सरकार का इस अधिनियम के उपबंधों को कार्यान्वित करने के लिए निधियां उपलब्ध कराने के लिए समवर्ती उत्तरदायित्व होगा ।

(2) केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के उपबंधों के कार्यान्वयन के लिए पूंजी और आवर्ती व्यय के प्राक्कलन तैयार करेगी ।

(3) केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकारों को राजस्वों के सहायता अनुदान के रूप में उपधारा (2) में निर्दिष्ट व्यय का ऐसा प्रतिशत उपलब्ध कराएगी, जैसा वह, समय-समय पर राज्य सरकारों के परामर्श से अवधारित करे ।

(4) केन्द्रीय सरकार, राष्ट्रपति को अनुच्छेद 280 के खंड (3) के उपखंड (घ) के अधीन राज्य सरकार को अतिरिक्त संसाधन उपलब्ध कराए जाने की आवश्यकता की परीक्षा करने के लिए वित्त आयोग को निर्देश देने का अनुरोध कर सकेगी, ताकि उक्त राज्य सरकार इस अधिनियम के उपबंधों को कार्यान्वित करने के लिए निधियों का अपना अंश प्रदान कर सके ।

(5) उपधारा (4) में किसी बात के होते हुए भी, राज्य सरकार उपधारा (3) के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा राज्य सरकार को प्रदान की गई राशियों और उसके अन्य संसाधनों को ध्यान में रखते हुए इस अधिनियम के उपबंधों के कार्यान्वयन के लिए निधियां उपलब्ध कराने हेतु उत्तरदायी होगी ।

(6) केन्द्रीय सरकार, –

(क) धारा 29 के अधीन विनिर्दिष्ट शैक्षणिक प्राधिकारी की सहायता से राष्ट्रीय कार्यक्रम का ढांचा विकसित करेगी ;

(ख) शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए मानकों को विकसित और लागू करेगी ;

(ग) नवीकरण, अनुसंधान, योजना और क्षमता निर्माण के संवर्धन के लिए राज्य सरकार को तकनीकी सहायता और संसाधन उपलब्ध कराएगी ।

8. समुचित सरकार के कर्तव्य – समुचित सरकार, –

(क) प्रत्येक बालक को नि:शुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा

उपलब्ध कराएगी :

परंतु जहां किसी बालक को, यथास्थिति, उसके माता-पिता या संरक्षक द्वारा, समुचित सरकार या किसी स्थानीय प्राधिकारी द्वारा स्थापित, उसके स्वामित्वाधीन, नियंत्रणाधीन या प्रत्यक्षत: या अप्रत्यक्षत: उपलब्ध कराई गई निधियों द्वारा सारवान् रूप से वित्तपोषित विद्यालय से भिन्न किसी विद्यालय में प्रवेश दिया जाता है, वहां ऐसा बालक या, यथास्थिति, उसके माता-पिता या संरक्षक ऐसे अन्य विद्यालय में बालक की प्राथमिक शिक्षा पर उपगत व्यय की प्रतिपूर्ति के लिए कोई दावा करने का हकदार नहीं होगा ।

स्पष्टीकरण – "अनिवार्य शिक्षा" पद से समुचित सरकार की, –

(i) छह वर्ष से चौदह वर्ष तक की आयु के प्रत्येक बालक को नि:शुल्क प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने ; और

(ii) छह वर्ष से चौदह वर्ष तक की आयु के प्रत्येक बालक द्वारा प्राथमिक शिक्षा में अनिवार्य प्रवेश, उपस्थिति और उसको पूरा करने को सुनिश्चित करने की,

बाध्यता अभिप्रेत है ;

(ख) धारा 6 में यथाविनिर्दिष्ट आस-पास में विद्यालय की उपलब्धता को सुनिश्चित करेगी ;

(ग) यह सुनिश्चित करेगी कि दुर्बल वर्ग के बालक और अलाभित समूह के बालक के प्रति पक्षपात न किया जाए तथा किसी आधार पर प्राथमिक शिक्षा लेने और पूरा करने से वे निवारित न हों ;

(घ) अवसंरचना, जिसके अंतर्गत विद्यालय भवन, शिक्षण कर्मचारिवृंद और शिक्षा के उपस्कर भी हैं, उपलब्ध कराएगी ;

(ङ) धारा 4 में विनिर्दिष्ट विशेष प्रशिक्षण सुविधा उपलब्ध कराएगी ;

(च) प्रत्येक बालक द्वारा प्राथमिक शिक्षा में प्रवेश, उपस्थिति और उसे पूरा करने को सुनिश्चित और मानीटर करेगी ;

(छ) अनुसूची में विनिर्दिष्ट मान और मानकों के अनुरूप अच्छी क्वालिटी की प्राथमिक शिक्षा सुनिश्चित करेगी ;

(ज) प्राथमिक शिक्षा के लिए पाठ्याचार और पाठ्यक्रमों का समय से विहित किया जाना सुनिश्चित करेगी ; और

(झ) शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण सुविधा उपलब्ध कराएगी ।

9. स्थानीय प्राधिकारी के कर्तव्य – प्रत्येक स्थानीय प्राधिकारी, –

(क) प्रत्येक बालक को नि:शुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराएगा :

परन्तु जहां किसी बालक को, यथास्थिति, उसके माता-पिता या संरक्षक द्वारा, समुचित सरकार या किसी स्थानीय प्राधिकारी द्वारा स्थापित, उसके स्वामित्वाधीन, नियंत्रणाधीन या प्रत्यक्षत: या अप्रत्यक्षत: उपलब्ध कराई गई निधियों द्वारा सारवान् रूप से वित्तपोषित विद्यालय से भिन्न किसी विद्यालय में प्रवेश दिया जाता है, वहां ऐसा बालक या, यथास्थिति, उसके माता-पिता या संरक्षक ऐसे अन्य विद्यालय में बालक की प्राथमिक शिक्षा पर उपगत व्यय की प्रतिपूर्ति के लिए कोई दावा करने का हकदार नहीं होगा ;

(ख) धारा 6 में यथाविनिर्दिष्ट आस-पास में विद्यालय की उपलब्धता को सुनिश्चित करेगा ;

(ग) यह सुनिश्चित करेगा कि दुर्बल वर्ग के बालक और अलाभित समूह के बालक के प्रति पक्षपात न किया जाए तथा किसी आधार पर प्राथमिक शिक्षा लेने और पूरा करने से वे निवारित न हों ;

(घ) अपनी अधिकारिता के भीतर निवास करने वाले चौदह वर्ष तक की आयु के बालकों के ऐसी रीति में, जो विहित की जाए, अभिलेख रखेगा ;

(ङ) अपनी अधिकारिता के भीतर निवास करने वाले प्रत्येक बालक द्वारा प्राथमिक शिक्षा में प्रवेश, उपस्थिति और उसे पूरा करने को सुनिश्चित और मानीटर करेगा ;

(च) अवसंरचना, जिसके अंतर्गत विद्यालय भवन, शिक्षण कर्मचारिवृन्द और शिक्षा सामग्री भी है, उपलब्ध कराएगा ;

(छ) धारा 4 में विनिर्दिष्ट विशेष प्रशिक्षण सुविधा उपलब्ध कराएगा ;

(ज) अनुसूची में विनिर्दिष्ट मान और मानकों के अनुरूप अच्छी क्वालिटी की प्राथमिक शिक्षा सुनिश्चित करेगा ;

(झ) प्राथमिक शिक्षा के लिए पाठ्याचार और पाठ्यक्रमों का समय से विहित किया जाना सुनिश्चित करेगा ;

(ञ) शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण सुविधा उपलब्ध कराएगा ;

(ट) प्रवासी कुटुंबों के बालकों के प्रवेश को सुनिश्चित करेगा ;

(ठ) अपनी अधिकारिता के भीतर विद्यालयों के कार्यकरण को मानीटर करेगा ; और

(ड) शैक्षणिक कैलेंडर का विनिश्चय करेगा ।

10. माता-पिता और संरक्षक का कर्तव्य – प्रत्येक माता-पिता या संरक्षक का यह कर्तव्य होगा कि वह आस-पास के विद्यालय में कोई प्रारंभिक शिक्षा के लिए अपने, यथास्थिति, बालक या प्रतिपाल्य का प्रवेश कराए या प्रवेश दिलाए ।

11. समुचित सरकार द्वारा विद्यालय पूर्व शिक्षा के लिए व्यवस्था करना – प्राथमिक शिक्षा के लिए तीन वर्ष से अधिक आयु के बालकों को तैयार करने तथा सभी बालकों के लिए जब तक वे छह वर्ष की आयु पूरी करते हैं, आरंभिक बाल्यकाल देखरेख और शिक्षा की व्यवस्था करने की दृष्टि से समुचित सरकार, ऐसे बालकों के लिए नि:शुल्क विद्यालय पूर्व शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए आवश्यक व्यवस्था कर सकेगी ।

अध्याय 4

विद्यालयों और शिक्षकों के उत्तरदायित्व

12. नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा के लिए विद्यालय के उत्तरदायित्व की सीमा – (1) इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए, –

(क) धारा 2 के खंड (ढ) के उपखंड (i) में विनिर्दिष्ट कोई विद्यालय, उसमें प्रविष्ट सभी बालकों को नि:शुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा प्रदान करेगा ;

(ख) धारा 2 के खंड (ढ) के उपखंड (ii) में विनिर्दिष्ट कोई विद्यालय, उसमें प्रवेश कराए गए बालकों के ऐसे अनुपात को, जो इस प्रकार प्राप्त उसकी वार्षिक आवर्ती सहायता या अनुदान का, उसके वार्षिक आवर्ती व्यय से, न्यूनतम पच्चीस प्रतिशत के अधीन रहते हुए नि:शुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराएगा ;

(ग) धारा 2 के खंड (ढ) के उपखंड (iii) और उपखंड (iv) में विनिर्दिष्ट कोई विद्यालय पहली कक्षा में, आस-पास में दुर्बल वर्ग और अलाभित समूह के बालकों को, उस कक्षा के बालकों की कुल संख्या के कम से कम पच्चीस प्रतिशत की सीमा तक प्रवेश देगा और नि:शुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा, उसके पूरा होने तक, प्रदान करेगा :

परंतु यह और कि जहां धारा 2 के खंड (ढ) में विनिर्दिष्ट कोई विद्यालय, विद्यालय पूर्व शिक्षा देता है वहां खंड (क) से खंड (ग) के उपबंध ऐसी विद्यालय पूर्व शिक्षा में प्रवेश को लागू होंगे ।

(2) उपधारा (1) के खंड (ग) में यथाविनिर्दिष्ट नि:शुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने वाले धारा 2 के खंड (ढ) के उपखंड (iv) में विनिर्दिष्ट विद्यालय की, उसके द्वारा इस प्रकार उपगत व्यय की, राज्य द्वारा उपगत प्रति बालक व्यय की सीमा तक या बालक से प्रभारित वास्तविक रकम तक, इनमें से जो भी कम हो, ऐसी रीति में, जो विहित की जाए, प्रतिपूर्ति की जाएगी :

परन्तु ऐसी प्रतिपूर्ति धारा 2 के खंड (ढ) के उपखंड (i) में विनिर्दिष्ट किसी विद्यालय द्वारा उपगत प्रति बालक व्यय से अधिक नहीं होगी :

परन्तु यह और कि जहां ऐसा विद्यालय उसके द्वारा कोई भूमि, भवन, उपस्कर या अन्य सुविधाएं, या तो नि:शुल्क या रियायती दर पर, प्राप्त करने के कारण पहले से ही विनिर्दिष्ट संख्या में बालकों को नि:शुल्क शिक्षा उपलब्ध कराने की बाध्यता के अधीन है, वहां ऐसा विद्यालय ऐसी बाध्यता की सीमा तक प्रतिपूर्ति के लिए हकदार नहीं होगा ।

(3) प्रत्येक विद्यालय ऐसी जानकारी जो, यथास्थिति, समुचित सरकार या स्थानीय प्राधिकारी द्वारा अपेक्षित हो, उपलब्ध कराएगा ।

13. प्रवेश के लिए किसी प्रति व्यक्ति फीस और अनुवीक्षण प्रक्रिया का न होना – (1) कोई विद्यालय या व्यक्ति, किसी बालक को प्रवेश देते समय कोई प्रति व्यक्ति फीस संगृहीत नहीं करेगा और बालक या उसके माता-पिता अथवा संरक्षक को किसी अनुवीक्षण प्रक्रिया के अधीन नहीं रखेगा ।

(2) कोई विद्यालय या व्यक्ति, यदि उपधारा (1) के उपबंधों के उल्लंघन में, –

(क) प्रति व्यक्ति फीस प्राप्त करता है तो वह जुर्माने से, जो प्रभारित प्रति व्यक्ति फीस के दस गुना तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ;

(ख) किसी बालक को अनुवीक्षण प्रक्रिया के अधीन रखता है तो वह जुर्माने से, जो पहले उल्लंघन के लिए पच्चीस हजार रुपए तक और प्रत्येक पश्चात्वर्ती उल्लंघन के लिए पचास हजार रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

14. प्रवेश के लिए आयु का सबूत – (1) प्राथमिक शिक्षा में प्रवेश के प्रयोजनों के लिए किसी बालक की आयु, जन्म, मृत्यु और विवाह रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1886 (1886 का 6) के उपबंधों के अनुसार

जारी किए गए जन्म प्रमाणपत्र के आधार पर या ऐसे अन्य दस्तावेज के आधार पर, जो विहित किया जाए, अवधारित की जाएगी ।

(2) किसी बालक को, आयु का सबूत न होने के कारण किसी विद्यालय में प्रवेश से इनकार नहीं किया जाएगा ।

15. प्रवेश से इनकार न किया जाना – किसी बालक को, शैक्षणिक वर्ष के प्रारंभ पर या ऐसी विस्तारित अवधि के भीतर, जो विहित की जाए, किसी विद्यालय में प्रवेश दिया जाएगा :

परंतु किसी बालक को प्रवेश से इनकार नहीं किया जाएगा यदि ऐसा प्रवेश विस्तारित अवधि के पश्चात् ईप्सित है :

परंतु यह और कि विस्तारित अवधि के पश्चात् प्रवेश प्राप्त कोई बालक ऐसी रीति में, जो समुचित सरकार द्वारा विहित की जाए, अपना अध्ययन पूरा करेगा ।

16. रोकने और निष्कासन का प्रतिषेध – किसी विद्यालय में प्रवेश प्राप्त बालक को किसी कक्षा में नहीं रोका जाएगा या विद्यालय से प्राथमिक शिक्षा पूरी किए जाने तक निष्कासित नहीं किया जाएगा ।

17. बालक के शारीरिक दंड और मानसिक उत्पीड़न का प्रतिषेध – (1) किसी बालक को शारीरिक दंड नहीं दिया जाएगा या उसका मानसिक उत्पीड़न नहीं किया जाएगा ।

(2) जो कोई उपधारा (1) के उपबंधों का उल्लंघन करेगा, वह ऐसे व्यक्ति को लागू सेवा नियमों के अधीन अनुशासनिक कार्रवाई का दायी होगा ।

18. मान्यता प्रमाणपत्र अभिप्राप्त किए बिना किसी विद्यालय का स्थापित न किया जाना – (1) समुचित सरकार या स्थानीय प्राधिकारी द्वारा स्थापित, उसके स्वामित्वाधीन या नियंत्रणाधीन किसी विद्यालय से भिन्न कोई विद्यालय, इस अधिनियम के प्रारंभ के पश्चात्, ऐसे प्राधिकारी से, ऐसे प्ररूप में और ऐसी रीति में, जो विहित की जाए, कोई आवेदन करके मान्यता प्रमाणपत्र अभिप्राप्त किए बिना स्थापित नहीं किया जाएगा या कार्य नहीं करेगा ।

(2) उपधारा (1) के अधीन विहित प्राधिकारी ऐसे प्ररूप में, ऐसी अवधि के भीतर, ऐसी रीति में और ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए, जो विहित की जाएं, मान्यता प्रमाणपत्र जारी करेगा :

परंतु किसी विद्यालय को ऐसी मान्यता तब तक अनुदत्त नहीं की जाएगी जब तक वह धारा 19 के अधीन विनिर्दिष्ट मान और मानकों को पूरा नहीं करता है ।

(3) मान्यता की शर्तों के उल्लंघन पर, विहित प्राधिकारी लिखित आदेश द्वारा, मान्यता वापस ले लेगा :

परंतु ऐसे आदेश में आसपास के उस विद्यालय के बारे में निदेश होगा जिसमें गैर-मान्यताप्राप्त विद्यालय में अध्ययन कर रहे बालकों को प्रवेश दिया जाएगा :

परंतु यह और कि ऐसी मान्यता को ऐसे विद्यालय को, ऐसी रीति में जो विहित की जाए, सुनवाई का अवसर दिए बिना वापस नहीं लिया जाएगा ।

(4) ऐसा विद्यालय, उपधारा (3) के अधीन मान्यता वापस लेने की तारीख से कार्य करना जारी नहीं रखेगा ।

(5) कोई व्यक्ति, जो मान्यता प्रमाणपत्र अभिप्राप्त किए बिना कोई विद्यालय स्थापित करता है या चलाता है या मान्यता वापस लेने के पश्चात् विद्यालय चलाना जारी रखता है, जुर्माने से, जो एक लाख रुपए तक का हो सकेगा और उल्लंघन जारी रहने की दशा में जुर्माने से जो ऐसे प्रत्येक दिन के लिए, जिसके दौरान ऐसा उल्लंघन जारी रहता है, दस हजार रुपए तक का हो सकेगा, दायी होगा ।

19. विद्यालय के मान और मानक – (1) किसी विद्यालय को, धारा 18 के अधीन तब तक स्थापित नहीं किया जाएगा, या मान्यता नहीं दी जाएगी जब तक वह अनुसूची में विनिर्दिष्ट मान और मानकों को पूरा नहीं करता है ।

(2) जहां इस अधिनियम के प्रारंभ से पूर्व स्थापित कोई विद्यालय अनुसूची में विनिर्दिष्ट मान और मानकों को पूरा नहीं करता है, वहां वह

ऐसे प्रारंभ की तारीख से तीन वर्ष की अवधि के भीतर अपने खर्चे पर ऐसे मान और मानकों को पूरा करने के लिए कदम उठाएगा ।

(3) जहां कोई विद्यालय, उपधारा (2) के अधीन विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर मान और मानकों को पूरा करने में असफल रहता है, वहां धारा 18 की उपधारा (1) के अधीन विहित प्राधिकारी, ऐसे विद्यालय को अनुदत्त मान्यता को उसकी उपधारा (3) के अधीन विनिर्दिष्ट रीति में वापस ले लेगा ।

(4) कोई विद्यालय उपधारा (3) के अधीन मान्यता वापस लेने की तारीख से कार्य करना जारी नहीं रखेगा ।

(5) कोई व्यक्ति, जो मान्यता वापस लेने के पश्चात् कोई विद्यालय चलाना जारी रखता है, जुर्माने से जो एक लाख रुपए तक का हो सकेगा और उल्लंघन जारी रहने की दशा में, ऐसे प्रत्येक दिन के लिए, जिसके दौरान उल्लंघन जारी रहता है, दस हजार रुपए के जुर्माने का दायी होगा ।

20. अनुसूची का संशोधन करने की शक्ति – केन्द्रीय सरकार, अधिसूचना द्वारा, अनुसूची का, उसमें किसी मान या मानक को जोड़कर या उससे उसका लोप करके संशोधन कर सकेगी ।

21. विद्यालय प्रबंध समिति – (1) धारा 2 के खंड (ढ) के उपखंड (iv) में विनिर्दिष्ट किसी विद्यालय से भिन्न विद्यालय स्थानीय प्राधिकारी, ऐसे विद्यालय में प्रवेश प्राप्त बालकों के माता-पिता या संरक्षक और शिक्षकों के निर्वाचित प्रतिनिधियों से मिलकर बनने वाली एक विद्यालय प्रबंध समिति का गठन करेगा :

परंतु ऐसी समिति के कम से कम तीन चौथाई सदस्य माता-पिता या संरक्षक होंगे :

परंतु यह और कि अलाभित समूह और दुर्बल वर्ग के बालकों के माता-पिता या संरक्षकों को समानुपाती प्रतिनिधित्व दिया जाएगा :

परंतु यह भी कि ऐसी समिति के पचास प्रतिशत सदस्य स्त्रियां होंगी ।

(2) विद्यालय प्रबंध समिति निम्नलिखित कृत्यों का पालन करेगी, अर्थात् :–

(क) विद्यालय के कार्यकरण को मानीटर करना ;

(ख) विद्यालय विकास योजना तैयार करना और उसकी सिफारिश करना ;

(ग) समुचित सरकार या स्थानीय प्राधिकारी अथवा किसी अन्य स्रोत से प्राप्त अनुदानों के उपयोग को मानीटर करना ; और

(घ) ऐसे अन्य कृत्यों का पालन करना, जो विहित किए जाएं :

[1][परंतु, –

(क) अल्पसंख्यक द्वारा स्थापित और प्रशासित किसी विद्यालय, चाहे वह धर्म आधारित हो या भाषा आधारित हो ; और

(ख) धारा 2 के खंड (ढ) के उपखंड (ii) में यथा परिभाषित अन्य सभी सहायता प्राप्त विद्यालयों, के संबंध में उपधारा (1) के अधीन गठित विद्यालय प्रबंध समिति केवल सलाहकार संबंधी कृत्यों का पालन करेगी ।]

22. विद्यालय विकास योजना – (1) धारा 21 की उपधारा (1) के अधीन गठित प्रत्येक विद्यालय प्रबंध समिति [2][अल्पसंख्यक द्वारा, स्थापित और प्रशासित किसी विद्यालय, चाहे वह धर्म आधारित हो या भाषा आधारित, तथा धारा 2 के खंड (ढ) के उपखंड (ii) में यथा परिभाषित किसी सहायता प्राप्त विद्यालय के संबंध में विद्यालय प्रबंध समिति के सिवाय,] ऐसी रीति में, जो विहित की जाए, एक विद्यालय विकास योजना तैयार करेगी ।

(2) उपधारा (1) के अधीन इस प्रकार तैयार की गई विद्यालय विकास योजना, यथास्थिति, समुचित सरकार या स्थानीय प्राधिकारी द्वारा बनाई जाने वाली योजनाओं और दिए जाने वाले अनुदानों का आधार होगी ।

---

[1] 2012 के अधिनियम सं. 30 की धारा 5 द्वारा अंत:स्थापित ।

[2] 2012 के अधिनियम सं. 30 की धारा 6 द्वारा अंत:स्थापित ।

23. शिक्षकों की नियुक्ति के लिए अर्हताएं और सेवा के निबंधन और शर्तें – (1) कोई व्यक्ति, जिसके पास केन्द्रीय सरकार द्‌वारा, अधिसूचना द्‌वारा, प्राधिकृत किसी शिक्षा प्राधिकारी द्‌वारा यथा अधिकथित न्यूनतम अर्हताएं हैं, शिक्षक के रूप में नियुक्ति के लिए पात्र होगा ।

(2) जहां किसी राज्य में अध्यापक शिक्षा के पाठ्‌यक्रम या उसमें प्रशिक्षण प्रदान करने वाली पर्याप्त संस्थाएं नहीं हैं या उपधारा (1) के अधीन यथा अधिकथित न्यूनतम अर्हताएं रखने वाले शिक्षक पर्याप्त संख्या में नहीं हैं वहां केन्द्रीय सरकार, यदि वह आवश्यक समझे, अधिसूचना द्‌वारा, शिक्षक के रूप में नियुक्ति के लिए अपेक्षित न्यूनतम अर्हताओं को पांच वर्ष से अनधिक की ऐसी अवधि के लिए शिथिल कर सकेगी, जो उस अधिसूचना में विनिर्दिष्ट की जाए :

परंतु ऐसा कोई शिक्षक, जिसके पास इस अधिनियम के प्रारंभ पर उपधारा (1) के अधीन यथा अधिकथित न्यूनतम अर्हताएं नहीं हैं, पांच वर्ष की अवधि के भीतर ऐसी न्यूनतम अर्हताएं अर्जित करेगा ।

(3) शिक्षक को संदेय वेतन और भत्ते तथा उसके सेवा के निबंधन और शर्तें वे होंगी जो विहित की जाएं ।

24. शिक्षकों के कर्तव्य और शिकायतों को दूर करना – (1) धारा 23 की उपधारा (1) के अधीन नियुक्त शिक्षक निम्नलिखित कर्तव्यों का पालन करेगा, अर्थात्‌ :–

(क) विद्‌यालय में उपस्थित होने में नियमितता और समय पालन ;

(ख) धारा 29 की उपधारा (2) के उपबंधों के अनुसार पाठ्‌यक्रम संचालित करना और उसे पूरा करना ;

(ग) विनिर्दिष्ट समय के भीतर संपूर्ण पाठ्‌यक्रम पूरा करना ;

(घ) प्रत्येक बालक की शिक्षा ग्रहण करने के सामर्थ्य का निर्धारण करना और तदनुसार यथा अपेक्षित अतिरिक्त शिक्षण, यदि कोई हो, जोड़ना ;

(ङ) माता-पिता और संरक्षकों के साथ नियमित बैठकें करना

और बालक के बारे में उपस्थिति में नियमितता, शिक्षा ग्रहण करने का सामर्थ्य, शिक्षण में की गई प्रगति और किसी अन्य सुसंगत जानकारी के बारे में उन्हें अवगत कराना ; और

(च) ऐसे अन्य कर्तव्यों का पालन करना, जो विहित किए जाएं ।

(2) उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट कर्तव्यों के पालन में व्यतिक्रम करने वाला/वाली कोई शिक्षक/शिक्षिका, उसे लागू सेवा नियमों के अधीन अनुशासनिक कार्रवाई के लिए दायी होगा/होगी :

परंतु ऐसी अनुशासनिक कार्रवाई करने से पूर्व ऐसे शिक्षक/ऐसी शिक्षिका को सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर दिया जाएगा ।

(3) शिक्षक की शिकायतों को, यदि कोई हों, ऐसी रीति में दूर किया जाएगा, जो विहित की जाए ।

25. छात्र-शिक्षक अनुपात – (1) इस अधिनियम के प्रारंभ की तारीख से [1][तीन वर्ष के भीतर] समुचित सरकार और स्थानीय प्राधिकारी यह सुनिश्चित करेंगे कि प्रत्येक विद्यालय में छात्र-शिक्षक अनुपात अनुसूची में विनिर्दिष्ट किए गए अनुसार बनाए रखा जाए ।

(2) उपधारा (1) के अधीन छात्र-शिक्षक अनुपात बनाए रखने के प्रयोजन के लिए, किसी विद्यालय में तैनात किए गए किसी शिक्षक को किसी अन्य विद्यालय या कार्यालय में सेवा नहीं करने दी जाएगी या धारा 27 में विनिर्दिष्ट प्रयोजनों से भिन्न किसी गैर-शैक्षिक प्रयोजन के लिए अभिनियोजित नहीं किया जाएगा ।

26. शिक्षकों की रिक्तियों का भरा जाना – नियुक्ति प्राधिकारी, समुचित सरकार या किसी स्थानीय प्राधिकारी द्वारा स्थापित, उसके स्वामित्वाधीन, नियंत्रणाधीन या उसके द्वारा प्रत्यक्षतः या अप्रत्यक्षतः उपलब्ध करवाई गई निधियों द्वारा भागतः वित्तपोषित किसी विद्यालय के संबंध में यह सुनिश्चित करेगा कि उसके नियंत्रणाधीन किसी विद्यालय में शिक्षक के रिक्त पद कुल स्वीकृत पद संख्या के दस प्रतिशत से अधिक नहीं होंगे ।

---

[1] 2012 के अधिनियम सं. 30 की धारा 7 द्वारा प्रतिस्थापित ।

27. गैर-शैक्षिक प्रयोजनों के लिए शिक्षकों को अभिनियोजित किए जाने का प्रतिषेध – किसी शिक्षक को दस वर्षीय जनसंख्या जनगणना, आपदा राहत कर्तव्यों या, यथास्थिति, स्थानीय प्राधिकारी या राज्य विधान-मंडलों या संसद् के निर्वाचनों से संबंधित कर्तव्यों से भिन्न किसी गैर-शैक्षिक प्रयोजनों के लिए अभिनियोजित नहीं किया जाएगा ।

28. शिक्षक द्वारा प्राइवेट ट्यूशन का प्रतिषेध – कोई शिक्षक/शिक्षिका प्राइवेट ट्यूशन या प्राइवेट शिक्षण क्रियाकलाप में स्वयं को नहीं लगाएगा/लगाएगी ।

अध्याय 5

प्रारंभिक शिक्षा का पाठ्यक्रम और उसका पूरा किया जाना

29. पाठ्यक्रम और मूल्यांकन प्रक्रिया – (1) प्रारंभिक शिक्षा के लिए पाठ्यक्रम और उसकी मूल्यांकन प्रक्रिया समुचित सरकार द्वारा, अधिसूचना द्वारा, विनिर्दिष्ट किए जाने वाले शिक्षा प्राधिकारी द्वारा अधिकथित की जाएगी ।

(2) शिक्षा प्राधिकारी, उपधारा (1) के अधीन पाठ्यक्रम और मूल्यांकन प्रक्रिया अधिकथित करते समय निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखेगा, अर्थात् :–

(क) संविधान में प्रतिष्ठापित मूल्यों से अनुरूपता ;

(ख) बालक का सर्वांगीण विकास ;

(ग) बालक के ज्ञान, अन्त:शक्ति, योग्यता का निर्माण करना ;

(घ) पूर्णतम मात्रा तक शारीरिक और मानसिक योग्यताओं का विकास ;

(ङ) बाल अनुकूल और बालकेन्द्रित रीति में क्रियाकलापों, प्रकटीकरण और खोज के द्वारा शिक्षण ;

(च) शिक्षा का माध्यम, जहां तक साध्य हो बालक की मातृभाषा में होगा ;

(छ) बालक को भय, मानसिक अभिघात और चिन्तामुक्त

बनाना और बालक को स्वतंत्र रूप से मत व्यक्त करने में सहायता करना ;

(ज) बालक के समझने की शक्ति और उसे उपयोग करने की उसकी योग्यता का व्यापक और सतत मूल्यांकन ।

30. परीक्षा और समापन प्रमाणपत्र – (1) किसी बालक से प्रारंभिक शिक्षा पूरी होने तक कोई बोर्ड परीक्षा उत्तीर्ण करने की अपेक्षा नहीं की जाएगी ।

(2) प्रत्येक बालक को, जिसने अपनी प्रारंभिक शिक्षा पूरी कर ली है, ऐसे प्ररूप और ऐसी रीति में, जो विहित की जाए एक प्रमाणपत्र दिया जाएगा ।

अध्याय 6

बालकों के अधिकार का संरक्षण

31. बालक के शिक्षा के अधिकार को मानीटर करना – (1) बालक अधिकार संरक्षण आयोग अधिनियम, 2005 (2006 का 4) की, यथास्थिति, धारा 3 के अधीन गठित राष्ट्रीय बालक अधिकार संरक्षण आयोग या धारा 17 के अधीन गठित राज्य बालक अधिकार संरक्षण आयोग, उस अधिनियम के अधीन उन्हें समनुदेशित कृत्यों के अतिरिक्त निम्नलिखित कृत्यों का भी पालन करेगा, अर्थात् :–

(क) इस अधिनियम द्वारा या उसके अधीन उपबंधित अधिकारों के रक्षोपायों की परीक्षा और पुनर्विलोकन करना और उनके प्रभावी कार्यान्वयन के लिए अध्युपायों की सिफारिश करना ;

(ख) नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा के बालक के अधिकार संबंधी परिवादों की जांच करना ; और

(ग) उक्त बालक अधिकार संरक्षण आयोग अधिनियम की धारा 15 और धारा 24 के अधीन यथा उपबंधित आवश्यक उपाय करना ।

(2) उक्त आयोगों को, उपधारा (1) के खंड (ग) के अधीन नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा के बालक के अधिकार से संबंधित किसी विषय में

जांच करते समय वही शक्तियां होंगी, जो उक्त बालक अधिकार संरक्षण आयोग अधिनियम की क्रमशः धारा 14 और धारा 24 के अधीन उन्हें समनुदेशित की गई हैं ।

(3) जहां किसी राज्य में, राज्य बालक अधिकार संरक्षण आयोग गठित नहीं किया गया है वहां समुचित सरकार उपधारा (1) के खंड (क) से खंड (ग) में विनिर्दिष्ट कृत्यों का पालन करने के प्रयोजन के लिए ऐसी रीति में और ऐसे निबंधनों और शर्तों के अधीन रहते हुए, जो विहित की जाएं, ऐसे प्राधिकरण का गठन कर सकेगी ।

32. शिकायतों को दूर करना – (1) धारा 31 में किसी बात के होते हुए भी, कोई व्यक्ति, जिसे इस अधिनियम के अधीन किसी बालक के अधिकार के संबंध में कोई शिकायत है, अधिकारिता रखने वाले स्थानीय प्राधिकारी को लिखित में शिकायत कर सकेगा ।

(2) उपधारा (1) के अधीन शिकायत प्राप्त होने के पश्चात्, स्थानीय प्राधिकारी, संबंधित पक्षकारों को सुने जाने का युक्तियुक्त अवसर प्रदान करने के पश्चात् मामले का तीन मास की अवधि के भीतर निपटारा करेगा ।

(3) स्थानीय प्राधिकारी के विनिश्चय से व्यथित कोई व्यक्ति, यथास्थिति, राज्य बालक अधिकार संरक्षण आयोग को या धारा 31 की उपधारा (3) के अधीन विहित प्राधिकारी को अपील कर सकेगा ।

(4) उपधारा (3) के अधीन की गई अपील का विनिश्चय धारा 31 की उपधारा (1) के खंड (ग) के अधीन यथा उपबंधित, यथास्थिति, राज्य बालक अधिकार संरक्षण आयोग या धारा 31 की उपधारा (3) के अधीन निहित प्राधिकारी द्वारा किया जाएगा ।

33. राष्ट्रीय सलाहकार परिषद् का गठन – (1) केन्द्रीय सरकार, अधिसूचना द्वारा, एक राष्ट्रीय सलाहकार परिषद् का गठन करेगी, जिसमें पंद्रह से अनधिक उतने सदस्य होंगे, जितने केन्द्रीय सरकार आवश्यक समझे, जिनकी नियुक्ति प्रारंभिक शिक्षा और बाल विकास के क्षेत्र में ज्ञान और व्यावहारिक अनुभव रखने वाले व्यक्तियों में से की जाएगी ।

(2) राष्ट्रीय सलाहकार परिषद् के कृत्य अधिनियम के उपबंधों के प्रभावी रूप में कार्यान्वयन के संबंध में केन्द्रीय सरकार को सलाह देना, होंगे ।

(3) राष्ट्रीय सलाहकार परिषद् के सदस्यों के भत्ते और नियुक्ति के अन्य निबंधन और शर्तें वे होंगी, जो विहित की जाएं ।

34. राज्य सलाहकार परिषद् का गठन – (1) राज्य सरकार, अधिसूचना द्वारा, एक राज्य सलाहकार परिषद् का गठन करेगी, जिसमें पन्द्रह से अनधिक उतने सदस्य होंगे, जितने राज्य सरकार आवश्यक समझे, जिनकी नियुक्ति प्रारंभिक शिक्षा और बाल विकास के क्षेत्र में ज्ञान और व्यावहारिक अनुभव रखने वाले व्यक्तियों में से की जाएगी ।

(2) राज्य सलाहकार परिषद् के कृत्य अधिनियम के उपबंधों के प्रभावी रूप में कार्यान्वयन के संबंध में राज्य सरकार को सलाह देना होंगे ।

(3) राज्य सलाहकार परिषद् के सदस्यों के भत्ते और नियुक्ति के अन्य निबंधन और शर्तें वे होंगी, जो विहित की जाएं ।

अध्याय 7
प्रकीर्ण

35. निदेश जारी करने की शक्ति – (1) केन्द्रीय सरकार, यथास्थिति, समुचित सरकार या स्थानीय प्राधिकारी को ऐसे मार्गदर्शक सिद्धांत जारी कर सकेगी जो वह इस अधिनियम के उपबंधों के कार्यान्वयन के प्रयोजनों के लिए ठीक समझे ।

(2) समुचित सरकार, इस अधिनियम के उपबंधों के कार्यान्वयन के संबंध में, स्थानीय प्राधिकारी या विद्यालय प्रबंध समिति को ऐसे मार्गदर्शक सिद्धांत जारी कर सकेगी और ऐसे निदेश दे सकेगी, जो वह ठीक समझे ।

(3) स्थानीय प्राधिकारी, इस अधिनियम के उपबंधों के कार्यान्वयन के संबंध में विद्यालय प्रबंध समिति को ऐसे मार्गदर्शक सिद्धांत जारी कर सकेगा और ऐसे निदेश दे सकेगा, जो वह ठीक समझे ।

36. अभियोजन के लिए पूर्व मंजूरी – धारा 13 की उपधारा (2), धारा 18 की उपधारा (5) और धारा 19 की उपधारा (5) के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए कोई अभियोजन समुचित सरकार द्वारा, अधिसूचना द्वारा, इस निमित्त प्राधिकृत किसी अधिकारी की पूर्व मंजूरी के बिना संस्थित नहीं किया जाएगा ।

37. सद्भावपूर्वक की गई कार्रवाई के लिए संरक्षण – इस अधिनियम या उसके अधीन बनाए गए किसी नियम या आदेश के अनुसरण में सद्भावपूर्वक की गई या की जाने के लिए आशयित किसी बात के संबंध में कोई भी वाद या अन्य विधिक कार्यवाही केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार, राष्ट्रीय बालक अधिकार संरक्षण आयोग, राज्य बालक अधिकार संरक्षण आयोग, स्थानीय प्राधिकारी, विद्यालय प्रबंध समिति या किसी व्यक्ति के विरुद्ध नहीं होगी ।

38. समुचित सरकार की नियम बनाने की शक्ति – (1) समुचित सरकार, अधिनियम के उपबंधों के कार्यान्वयन के लिए अधिसूचना द्वारा नियम बना सकेगी ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्तियों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियम निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध कर सकेंगे, अर्थात् :–

(क) धारा 4 के पहले परंतुक के अधीन विशेष प्रशिक्षण देने की रीति और उसकी समय-सीमा ;

(ख) धारा 6 के अधीन किसी आसपास के विद्यालय की स्थापना के लिए क्षेत्र या सीमाएं ;

(ग) धारा 9 के खंड (घ) के अधीन चौदह वर्ष तक की आयु के बालकों के अभिलेख रखे जाने की रीति ;

(घ) धारा 12 की उपधारा (2) के अधीन व्यय की प्रतिपूर्ति की रीति और सीमा ;

(ङ) धारा 14 की उपधारा (1) के अधीन बालक की आयु का अवधारण करने हेतु कोई अन्य दस्तावेज ;

(च) धारा 15 के अधीन प्रवेश लेने के लिए विस्तारित अवधि और यदि विस्तारित अवधि के पश्चात् प्रवेश लिया जाता है तो अध्ययन पूरा करने की रीति ;

(छ) वह प्राधिकारी, प्ररूप और रीति, जिसको और जिसमें धारा 18 की उपधारा (1) के अधीन मान्यता प्रमाणपत्र के लिए आवेदन किया जाएगा ;

(ज) धारा 18 की उपधारा (2) के अधीन मान्यता प्रमाणपत्र का प्ररूप, अवधि, उसे जारी करने की रीति और शर्तें ;

(झ) धारा 18 की उपधारा (3) के दूसरे परन्तुक के अधीन सुनवाई का अवसर प्रदान की रीति ;

(ञ) धारा 21 की उपधारा (2) के खंड (घ) के अधीन विद्यालय प्रबंध समिति द्वारा किए जाने वाले अन्य कृत्य ;

(ट) धारा 22 की उपधारा (1) के अधीन विद्यालय विकास योजना तैयार करने की रीति ;

(ठ) धारा 23 की उपधारा (3) के अधीन शिक्षक को संदेय वेतन और भत्ते तथा उसकी सेवा के निबंधन और शर्तें ;

(ड) धारा 24 की उपधारा (1) के खंड (च) के अधीन शिक्षक द्वारा पालन किए जाने वाले कर्तव्य ;

(ढ) धारा 24 की उपधारा (3) के अधीन शिक्षकों की शिकायतों को दूर करने की रीति ;

(ण) धारा 30 की उपधारा (2) के अधीन प्रारंभिक शिक्षा पूरी करने के लिए प्रमाणपत्र देने का प्ररूप और रीति ;

(त) धारा 31 की उपधारा (3) के अधीन प्राधिकरण, उसके गठन की रीति और उसके निबंधन और शर्तें ;

(थ) धारा 33 की उपधारा (3) के अधीन राष्ट्रीय सलाहकार परिषद् के सदस्यों के भत्ते और उनकी नियुक्ति के अन्य निबंधन और शर्तें ;

(द) धारा 34 की उपधारा (3) के अधीन राज्य सलाहकार परिषद् के सदस्यों के भत्ते और उनकी नियुक्ति के अन्य निबंधन और शर्तें ।

(3) इस अधिनियम के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा बनाया गया प्रत्येक नियम और केन्द्रीय सरकार द्वारा धारा 20 और धारा 23 के अधीन जारी प्रत्येक अधिसूचना, बनाए जाने के पश्चात्, यथाशीघ्र संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा/रखी जाएगी । यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी । यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस नियम या अधिसूचना में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाएं तो तत्पश्चात् वह ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होगा/होगी । यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह नियम या अधिसूचना नहीं बनाया/बनाई जानी चाहिए तो तत्पश्चात् वह निष्प्रभाव हो जाएगा/जाएगी । किन्तु नियम या अधिसूचना के ऐसे परिवर्तित या निष्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा ।

(4) इस अधिनियम के अधीन राज्य सरकार द्वारा बनाया गया प्रत्येक नियम या अधिसूचना बनाए/बनाई जाने के पश्चात्, यथाशीघ्र, राज्य विधान-मंडल के समक्ष रखा जाएगा/रखी जाएगी ।

[1][**38. कठिनाइयों को दूर करने की केंद्रीय सरकार की शक्ति** – (1) यदि इस अधिनियम के उपबंधों को प्रभावी करने में कोई कठिनाई उत्पन्न होती है तो केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में प्रकाशित आदेश द्वारा, ऐसे उपबंध, जो इस अधिनियम के उपबंधों से असंगत न हों, कर सकेगी, जो उस कठिनाई को दूर करने के लिए आवश्यक प्रतीत हों :

परंतु इस धारा के अधीन कोई आदेश, नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2012 के प्रारंभ से तीन वर्ष के पश्चात् नहीं किया जाएगा ।

---

[1] 2012 के अधिनियम सं. 30 की धारा 8 द्वारा अंत:स्थापित ।

(2) इस धारा के अधीन किया गया प्रत्येक आदेश, उसके किए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखा जाएगा ।]

अनुसूची

(धारा 19 और धारा 25 देखिए)

विद्यालय के लिए मान और मानक

क्र. सं.	मद	मान और मानक	
1.	शिक्षकों की संख्या :		
	(क) पहली कक्षा से पांचवीं कक्षा के लिए	प्रवेश किए गए बालक	शिक्षकों की संख्या
		साठ तक	दो
		इकसठ से नब्बे के मध्य	तीन
		इक्यानवे और एक सौ बीस के मध्य	चार
		एक सौ इक्कीस और दो सौ के मध्य	पांच
		एक सौ पचास बालकों से अधिक	पांच धन एक प्रधान अध्यापक
		दौ सौ बालकों से अधिक	छात्र-शिक्षक अनुपात (प्रधान अध्यापक को छोड़कर) चालीस से अधिक नहीं होगा ।

	(ख) छठी कक्षा से आठवीं कक्षा के लिए	(1) कम से कम प्रति कक्षा एक शिक्षक, इस प्रकार होगा कि निम्नलिखित प्रत्येक के लिए कम से कम एक शिक्षक हो – (i) विज्ञान और गणित ; (ii) सामाजिक अध्ययन ; (iii) भाषा । (2) प्रत्येक पैंतीस बालकों के लिए कम से कम एक शिक्षक । (3) जहां एक सौ से अधिक बालकों को प्रवेश दिया गया है वहां – (i) एक पूर्णकालिक प्रधान अध्यापक ; (ii) निम्नलिखित के लिए अंशकालिक शिक्षक – (अ) कला शिक्षा ; (आ) स्वास्थ्य और शारीरिक शिक्षा ; (इ) कार्य शिक्षा ।
2.	भवन	सभी मौसम वाले भवन, जिसमें निम्नलिखित होंगे – (i) प्रत्येक शिक्षक के लिए कम से कम एक कक्षा और एक कार्यालय-सह-भंडार-सह प्रधान अध्यापक कक्ष ; (ii) बाधा मुक्त पहुंच ; (iii) लड़कों और लड़कियों के लिए पृथक् शौचालय ; (iv) सभी बालकों के लिए सुरक्षित और पर्याप्त पेय जल सुविधा ; (v) जहां दोपहर का भोजन विद्यालय में पकाया जाता है, वहां

		एक रसोई ; (vi) खेल का मैदान ; (vii) सीमा दीवाल या बाड़ द्वारा विद्यालय भवन की सुरक्षा करने के लिए व्यवस्थाएं ।
3.	एक शैक्षणिक वर्ष में कार्य दिवसों/शिक्षण घंटों की न्यूनतम संख्या	(i) पहली से पांचवीं कक्षा के लिए दो सौ कार्य दिवस ; (ii) छठी कक्षा से आठवीं कक्षा के लिए दो सौ बीस कार्य दिवस ; (iii) पहली कक्षा से पांचवीं कक्षा के लिए प्रति शैक्षणिक वर्ष आठ सौ शिक्षण घंटे ; (iv) छठी कक्षा से आठवीं कक्षा के लिए प्रति शैक्षणिक वर्ष एक हजार शिक्षण घंटे ।
4.	शिक्षक के लिए प्रति सप्ताह कार्य घंटों की न्यूनतम संख्या	पैंतालीस शिक्षण घंटे जिसके अंतर्गत तैयारी के घंटे भी हैं ।
5.	अध्यापन शिक्षण उपस्कर	प्रत्येक कक्षा के लिए अपेक्षानुसार उपलब्ध कराए जाएंगे ।
6.	पुस्तकालय	प्रत्येक विद्यालय में एक पुस्तकालय होगा, जिसमें समाचारपत्र, पत्रिकाएं और सभी विषयों पर पुस्तकें, जिनके अंतर्गत कहानी की पुस्तकें भी हैं, उपलब्ध होंगी ।
7.	खेल सामग्री, खेल और क्रीड़ा उपस्कर	प्रत्येक कक्षा को अपेक्षानुसार उपलब्ध कराए जाएंगे ।

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	145
2.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–
3.	भारत का सांविधानिक इतिहास – (103वां संविधान संशोधन तक) – श्री चन्द्रशेखर मिश्र	340	325	–
4.	भारतीय संविधान के प्रमुख तत्व – डा. प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी	906	750	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2024	कीमत रु. 2,500
2. भारत का संविधान (पाकेट एडीशन)	2024	कीमत रु. 325

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

Website : www.lawmin.nic.in

Email : am.vsp-molj@gov.in

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 16288/68

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं - **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका** और **उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः सिविल और दांडिक के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ` 2,100/-, ` 1,300/- और ` 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को ऑन लाइन **https://bharatkosh.gov.in/product/product** पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष **:** 011-23385259, 23387589, फैक्स **:** 011-23387589, ई-मेल **:** am.vsp-molj@gov.in